1 १८ ०५ १९७१

देखो मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भान्ति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे यह भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से जन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया हमारे यहां परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की अनन्तमयी महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि उसी देव की महिमा इस प्रकृति के कण कण में हमे दृष्टिपात आती है वह इतना विचित्र है मानो इस संसार की रचना कर रहा है रचनाकार उसे कहा जाता है परन्तु उस रचना में वह समाहित रहता है उसमें वह निहित रहता है बेटा! यह कितनी उसकी विचित्रता है आज हम परमपिता परमात्मा के ऊपर कोई मन्तव्य अथवा कोई विचार देना नही चाहते, परन्तु आज हम तुम्हे मध्य में एक माला को धारण कराना चाहते हैं जब मानव उस माला को धारण कर लेता है तो मानव का जीवन पवित्र बन जाता है मेरे प्यारे! वह जो बिखरे हुए मनके हैं मानो उन मनकों को एकत्रित करना एक मानव का एक कर्तव्य है मानो जब उन्हे एकत्रित कर लेता है उन्हे अपने में धारण कर लेता है तो मेरे प्यारे! उस उस मानव का जीवन अमरावती को प्राप्त हो जाता है हमने बहुत पुरातन काल में तुम्हे निर्णय कराते हुए कहा था कि यह संसार बड़ा विचित्रता में महानता में परिणित माना है हमारे आचार्य जन ऋषि जन बेटा! परम्परागतों से ही नाना प्रकार का अनुसन्धान करते रहे हैं वह भौतिक अनुसन्धान और आध्यात्मिक अनुसन्धान दोनों में उनकी उड़ान ऊर्ध्वा रही है जब बेटा! देवर्षि नारद मुनि का जीवन जब स्मरण आता है महर्षि सनत कुमार का जीवन जब स्मरण आता है तो बेटा! ऐसा प्रतीत होता है कि उनका जीवन मानो कितना ज्ञान और विज्ञान से गुंथा हुआ है उनका जो

श्वांस भी होता था वह भी विज्ञानता में गुथा हुआ रहता था। मेरे प्यारे! मानव की प्रत्येक जो लड़ी है जीवन की प्रत्येक जो आभा है यह उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान से गुथी हुई रहती है आज मैं बेटा! विशेष चर्चा प्रगट करना नही चाहूंगा विचार विनिमय क्या कि आज हम उस माला को धारण कराना चाहते हैं जिस माला को धारण करने के पश्चात मानव को जीवन में एक आभा उत्पन्न हो जाती है और उस आभा में मानव ओत प्रोत हो जाता है बेटा! आओ, आज मैं तुम्हें त्रेता के काल में ले जाना चाहता हूं और त्रेता के काल में बेटा! जहां नित्यप्रति ब्रह्म याग होता रहता है उस ब्रह्म याग में ले जाना चाहता हूं जहां बेटा! प्रत्येक अपनी आहुति प्रदान कर रहा है प्रत्येक ब्रह्मवेत्ता बेटा! हूत कर रहा है हमारे आज का वेद का ऋषि जहां यह नाना वाक्यों को उच्चारण कर रहा था वहां आज का वेद का ऋषि बेटा! हृदय की आभा को पुकारता चला जा रहा है वेद का ऋषि कहता है कि यह संसार सर्वत्र मानव के हृदय में समाहित रहता है हृदय को जानने का प्रयास किया जाए हृदय क्या है मेरे प्यारे! जितना भी कार्यक्रम होता है संसार में वह भौतिकवाद हो अथवा आध्यात्मिकवाद है उसका जो निकास है उसकी जो तरंगे है वह मानव के हृदय से उत्पन्न होती रहती हैं तो मुनिवरों! देखो हृदय को ऊंचा बनाना हमारा कर्तव्य है हे मानव! तू अपने हृदय को इस प्रकार का बना जिस प्रकार मेरी प्यारी माता अपने पुत्र के लिए अपना हृदय निर्माणित कर लेती है मेरे प्यारे! माता का हृदय इतना उदार और विवेक में होता है मुनिवरों! देखो बालक को अपने हृदय का अङ्ग स्वीकार करके इसको आलिंगन करती है मानो उसे लोरियों का पान कराती है मेरे प्यारे! ऐ मां! तू कितनी पवित्र है मानो जब हम तेरी लोरियों का पान करते हैं तो हमे आनन्दमयी प्रदान कर देती है मेरे प्यारे! माता दर्शनों का अध्ययन कर

रही है परमात्मा का चिन्तन कर रही है बालक को लोरियों का पान करा रही है तो वह माता का पुत्र विशेष बन जाता है मेरे प्यारे! माता माता अपने पुत्र को जब हृदय से निर्माणित कर देती है मुनिवरों! देखो जैसे मुझे नाना माताओं का जीवन स्मरण आता रहता है मैं उसमें नही जाना चाहता हूं इसी प्रकार माता की जो आनन्दमयी जो प्रभु है वह जो मां हैं जिसे वेद ने अहिल्या कहा है जिसे वेद ने धेनु कहा है बेटा! वह जो धेनु मां है जब वह वेद रुपी दुग्ध को मानव को पान करा देती है तो मानव का हृदय विभोर हो जाता है वह आनन्दित हो जाता है तो मेरे प्यारे! आज हम अपने जीवन को ऊर्ध्वा में ले जाना चाहते हैं उस माला को धारण करना चाहते हैं जो मानव अपने हृदय में जिस माला को धारण कर लेता है और धारण करता हुआ इस संसार सागर से पार हो जाता है मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है त्रेता के काल में जब राजा जनक के यहां बेटा! याग होता रहा क्योंकि याग याग होने का अभिप्राय यह याज्ञवल्क्य मुनि बोले कि देवी जो तुम्हारी इच्छा हो प्रश्न करो मैं उसका उत्तर जानता हूंगा तो अवश्य तुम्हारे समीप नियुक्त करूंगा। क्योंकि ऋषि का हृदय बेटा! उदार होता है ऋषि निरभिमानी होता है वह जानता हुआ भी मानो यही कहता है कि मैं जानता हूंगा तो तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर दे सकूंगा। मेरे प्यारे! वह मानव उस मानव में अभिमान होता है कि जो यह कहता है कि मैं सर्वत्रता में जानता हूं मेरे प्यारे! ऋषि ने कहा देवी मैं तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर जानता हूंगा तो अवश्य प्रदान करुंगा तुम प्रश्न करो मेरे प्यारे! चाक्राणी ने प्रश्न करना प्रारम्भ किया उन्होंने कहा कि प्रभु मैं यह जानना चाहती हूं कि यह जो संसार मुझे दृष्टिपात आ रहा है यह चार प्रकार की सृष्टि वाला जो जगत है मानो देखो अण्डज है, स्वेदज है, जङ्गम है और स्थावर है। यह जो चारों प्रकार की उत्पति वाला जो

जगत है प्रभु मैं इसको यह जानना चाहता हूं कि इसकी प्रतिष्ठा क्या है यह किसमें प्रतिष्ठित हो जाता है मेरे प्यारे! देखो ऋषि ने जब यह वाक पान किया तो ऋषि बोले देवी! यह जो चारों प्रकार की उत्पति वाला जो जगत है नाना प्रकार के खनिज पदार्थों वाला जो जगत है खाद्यों वाला जो जगत है मानो यह जो समाज दृष्टिपात आ रहा है यह जो वृक्ष इत्यादियों में स्थिर दृष्टिपात होता है देवी! तुम इसकी प्रतिष्ठा जानना चाहती हो? चाक्राणी बोली कि प्रभु! मैं इसकी प्रतिष्ठा जानना चाहती हूं ऋषि बोले हे देवी! यह जो जगत तुम्हे दृष्टिपात आ रहा है इसकी जो प्रतिष्ठा है यह जो ओत प्रोत होता है इसकी प्रतिष्ठा यह पृथ्वी है। यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड मानो पृथ्वी में यह सर्वत्र जगत इस पृथ्वी में ओत प्रोत हो जाता है यह पृथ्वी ही प्रतिष्ठा मानी जाती है यह इसी में ओत प्रोत है इसी में यह समाहित हो जाता है मानो देखो स्वर्ण की धातु उत्पन्न होती है और भी नाना प्रकार की धातुओं का रत्नों का जन्म होता है परन्तु देखो वह दृष्टिपात होता है उसका जो उसकी जो प्रतिष्ठा है जहां से वस्तु उत्पन्न होती है वही उसकी प्रतिष्ठा हो जाती है वहीं वह प्रतिष्ठित हो जाता है मेरे प्यारे! जब यह वाक कहा तो ऋषि ने कहा तो ऋषि पप्रहे ऋषि कन्या बोली क्या चाक्राणी कि प्रभु मैं जानना चाहती हूं कि मानो इस पृथ्वी की प्रतिष्ठा क्या है यह पृथ्वी किसमें ओत प्रोत हो जाती है जैसे यह संसार इस पृथ्वी में ओत प्रोत हो जाता है सर्वत्र जगत इसमें समाहित हो जाता है मानो यह पृथ्वी की प्रतिष्ठा क्या है उन्होंने कहा हे देवी! यह जो पृथ्वी है इसकी प्रतिष्ठा यह जल माना गया है यह जल में ओत प्रोत हो जाती है हमारे यहां यह माना है मुनिवरों! देखो जल को हिरणाक्ष कहते हैं जल को जब हिरणाक्ष कहते हैं यह जल में ओत प्रोत हो जाती है पृथ्वी यह पृथ्वी को अपने में समाहित कर लेता है उस काल में मेरे प्यारे!

जल को हिरणाक्ष कहा गया है मुनिवरों! हिरणाक्ष का अभिप्राय यह जो अपने में धारण कर लेता है इस पृथ्वी को अपने में धारण कर लेता है तो इसीलिए उसे हिरणाक्ष कहते हैं मेरे प्यारे! यह जो पृथ्वी है पृथ्वी की जो प्रतिष्ठा है यह इस जल में ओत प्रोत हो जाती है जल अपने में समाहित के लेता है जल की आभा में अभितर्वणं हो जाती है मेरे प्यारे! जब ऋषि ने ऐसा कहा तो चाक्राणी बोली कि प्रभु मैं जानना चाहती हूं जल की प्रतिष्ठा क्या है मेरे प्यारे! उन्होंने कहा यह जो जल है हे देवी! इस जल की प्रतिष्ठा मानो अग्नि है यह जल अग्नि में ओत प्रोत हो जाता है इस जल को अग्नि निगल जाती है मानो जब ग्रीष्म ऋतु आती है, ग्रीष्म ऋतु में यह जल मुनिवरों! देखो यह अग्नि में अन्तरिक्ष में अपने में समाहित कर लेती है इसी प्रकार मानो ब्रहे यह पृथ्वी जल में ओत प्रोत हो जाती है जल अग्नि में ओत प्रोत हो जाता है अग्नि अपने में निगल जाती है मेरे प्यारे! जब यह पृथ्वी जब यह अग्नि इस जल को निगल जाती है अपने को धारण कर लेती है तो यह जल स्वरूप अग्नि बन जाता है मेरे यह जो अग्नि है यह अग्नि महान कहलाया गया है आयुर्वेदाचार्यों ने चौरासी प्रकार की अग्नि स्वीकार की है परन्तु महर्षि भारद्वाज मुनि ने वैज्ञानिकों ने इस अग्नि के नाना प्रकार के स्वरुप माने हैं जैसे बेटा! अग्नि के स्वरुपों का वर्णन करते हुए महर्षि ब्रह्मचारी आश्काचार्य ने कहा है ब्रह्मचारी सुकेता ने तो यहां तक कहा है कि जैसे आयुर्वेदाचार्यों ने पचासी प्रकार की अग्नि की धारा स्वीकार की है परन्तु देखो ऋषि कहता है कि एक वह देखो जो पचासी धारा है जब उस धारा का हम विभाजन करते हैं वैज्ञानिक रुपों से तो विभक्त होते ही मुनिवरों! देखो अग्नि की एक ही धारा में से मेरे प्यारे! सत्रह प्रकार की धाराओं का जन्म हो जाता है और वह जो एक सौ सत्रह प्रकार की जो धारा है जब हम उसका विभाजन करते हैं तो

मेरे प्यारे! देखो उसमें से सतर प्रकार की तरंगे उत्पन्न हो जाती हैं इसी प्रकार जब सतरवीं तरंग को हम मानो उसका विभाजन करते हैं मेरे प्यारे! उसको हम विभक्त करते है तो उसमें मुनिवरों! देखो एक सौ इक्यावन प्रकार की तरंगों का जन्म हो जाता है। मेरे प्यारे! इसी प्रकार जब इक्यावनवीं प्रकार की तरंग का हम विभाजन करते हैं तो बेटा! उसमें से पांच पांच सौ प्रकार की तरंगों का जन्म हो जाता है तो विचार क्या बेटा! यह जो अग्नि है यह नाना तरंगों वाली है मेरे यह जो शब्द है शब्द का जो वाहन है वह अग्नि ही स्वीकार की है। वेद का ऋषि कहता है क्या मुनिवरों! देखो यह अग्नि जो नाना प्रकार की तरंगों वाली जो अग्नि है यही बेटा! देखो मानो इस जल को अपने में निगल जाती है अपने में धारण कर जाती है मुनिवरों! देखो इस जल की प्रतिष्ठा अग्नि मानी जाती है परन्तु यहां चाक्राणी ने कहा कि प्रभु मैं जानना चाहती हूं इस मानो देखो अग्नि की प्रतिष्ठा क्या है मेरे प्यारे! ऋषि ने कहा हे देवी! अग्नि की प्रतिष्ठा वायु है यह अग्नि वायु में ओत प्रोत हो जाती है मेरे प्यारे! जब यह वायु अपने वेग से रमण करता है तो इसमें अग्नि मिश्रित हो जाती है अग्नि उसी में समाहित हो जाता है मेरे प्यारे! देखो अग्नि की प्रतिष्ठा क्या है यह वायु है वायु मेरे प्यारे! वेग में रमण कर रहा है गति कर रहा है उसी में ही अग्नि ओत प्रोत हो जाती है उसी में यह प्रतिष्ठित होती दृष्टिपात होती है क्योंकि जहां वायु होती है वहां अग्नि होती है और जहां वायु नही होती वहां अग्नि का भी अभाव हो जाता है मेरे प्यारे! इसीलिए हमारे यहां अग्नि ब्रह्मा प्रतिष्ठित कहा जाता है यह अग्नि बेटा! वायु अब्रहे वायु इसका पिता है वायु में ही मेरे प्यारे! यह प्रतिष्ठित हो जाती है। इसकी तरंगे उसी में तरंगित हो जाती हैं मेरे प्यारे! देखो वायु का अपना मानवीय अप्रहा स्वरूप है इसमें यह ओत प्रोत होती है इसमें दृष्टिपात होने लगती है मेरे

प्यारे! चाक्राणी ने कहा कि प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूं कि इस वायु की प्रतिष्ठा क्या है मेरे प्यारे! जब उन्होंने यह कहा कि वायु की प्रतिष्ठा क्या है तो वेद का ऋषि कहता है आचार्य कहता है देवी उस वायु की प्रतिष्ठा अन्तरिक्ष माना गया है क्योंकि अन्तरिक्ष में यह वायु मानो ओत प्रोत रहती है और अन्तरिक्ष में यह गति करती रहती है इसीलिए मेरे प्यारे! यह गतिवान होती हुई अप्रहा विश्वश्वम कहलाई जाती है मानो देखो अन्तरिक्ष में मेरे प्यारे! शब्द विराजमान होता है जो शब्द हम उच्चारण कर रहे हैं यह मानो देखो अन्तरिक्ष में ओत प्रोत रहता है इसी में गति करता रहता है द्यौ भी उसी में गति करता है वायु उसमें प्रतिष्ठित हो जाती है मेरे प्यारे! वह प्रतिष्ठित होता हुआ मानो देखो अन्तरिक्षं ब्रहे कृता मेरे प्यारे! वेद का ऋषि यह कहता है कि इस अन्तरिक्ष को जाना जाए जिसमें शब्द विराजमान रहता है शब्द की आभा में ही वायु उसी में ही ओत प्रोत हो जाता है मेरे प्यारे! जब यह अन्तरिक्ष की विवेचना प्रगट की तो चाक्राणी न कहा प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूं कि यह अन्तरिक्ष किसमें ओत प्रोत हो जाता है इसकी प्रतिष्ठा क्या है? मेरे प्यारे! उस समय याज्ञवल्क्य मुनि बोले कि हे देवी! यह जो अन्तरिक्ष है यह महतत्त्व में ओत प्रोत हो जाता है बेटा! यह महतत्व है महतत्व में ही मानो पञ्च महाभूत ओत प्रोत हो जाते हैं उसी में इसी की प्रतिष्ठा हो जाती है उसी में प्रतिष्ठित हो जाता है। मेरे प्यारे! महतत्व में यह सर्वत्र ओत प्रोत हो जाता है उसी से मानो देखो इसकी प्रतिभा अब्रहा मानी जाती है और उसमें प्रतिष्ठित होता हुआ महतत्व में इसमें संसार की प्रतिष्ठा ओत प्रोत हो जाती है मेरे प्यारे! यह महतत्व जिससे अब्रहा बनता है अण्डाकार जगत बनता है मेरे प्यारे! देखो वही अण्डज सृष्टि वाला ब्रीहि श्वेताम् उत्पन्न होता है तो उसको हमारे यहां ब्रीहन अस्तुं ब्रहे कश्यप प्रव्हा अस्तां मह असस्तं ब्रहे मेरे प्यारे!

महतत्व में यह संसार समाहित हो, उसी में निहित रहता है परन्तु यहां मेरे प्यारे! यह माला का मनका यहां आ करके शान्त हो गया परन्तु देखो अब इससे ध्रुवा गति का माला का मनका अब प्रारम्भ होता है मेरे प्यारे! यहां से चाक्राणी का प्रश्न प्रारम्भ पुनः होता है जब मौन हो करके पुनः प्रश्न किया उन्होंने कहा प्रभु मैं यह जानना चाहती हूं कि महतत्व की प्रतिष्ठा क्या है मेरे प्यारे! चाक्राणी ने जब यह कहा तो ऋषि बोले हे देवी! इन महतत्वों की प्रतिष्ठा मानो देखो यह सूर्य मण्डल माने गए हैं अब यह मनका ध्रुवा गति को प्रारम्भ हुआ मुनिवरों! उन्होंने कहा कि यह जो सूर्य मण्डल है इनमें यह महतत्व ओत प्रोत होता दृष्टिपात होता है। मानो यहा नाना प्रकार के सौर मण्डलों में यह जगत यह महतत्व हमे दृष्टिपात हो रहा है उसी में इसकी प्रतिष्ठा मानी जाती है उसी में यह प्रतिष्ठित हो जाता है उसी में ओत प्रोत हो जाता है परन्तु चाक्राणी कहती है कि महाराज! मानो मैं यह जानना चाहती हूं कि यह सूर्य मण्डल इसकी प्रतिष्ठा क्या है ऋषि बोले कि हे देवी! इनकी प्रतिष्ठा मानो देखो सूर्य मण्डलों की प्रतिष्ठा चन्द्रमण्डल है चन्द्रलोकों में ही मानो देखो उनकी आभा निहित रहती है सूर्य मण्डलों की जो आभा है उनका जो प्रकाश है मेरे प्यारे! वह चन्द्रमा जैसे मण्डलों को प्रकाशित करता है उसी में उनकी प्रतिष्ठा उसी में प्रतिष्ठित हो जाते हैं उसी में ओत प्रोत हो जाते हैं यह चन्द्रमा अमृत बरसाता है मानो देखो सूर्य तेजोमयी की उत्पति करता है मेरे प्यारे! देखो यह चन्द्रा अलम्ब्रहे कृता यह चन्द्र मण्डल है जो सूर्य मण्डलों से प्रकाश ले करके मुनिवरों! देखो वह अमृत की वृष्टि करने वाले हैं इसीलिए प्रतिष्ठा उसी में रहती है जो जिसका सहायक होता है उसी में उसकी प्रतिष्ठा ओत प्रोत होती है मेरे प्यारे! देखो ऋषि ने जब ऐसा कहा तो ऋषि कन्या ने यह कहा कि प्रभु! मैं जानना चाहती

हूं क्या भगवन चन्द्र लोकों की प्रतिष्ठा क्या है यह किसमें ओत प्रोत हो जाते हैं उन्होंने कहा कि हे देवी यह जो चन्द्र मण्डल है चन्द्र लोक है इनकी प्रतिष्ठा मानो गन्धर्व लोक माने गए हैं गन्धर्व मण्डलों में इसकी प्रतिष्ठा रहती है मेरे प्यारे! देखो यह गन्धर्व अप्रहा लोक कहलाए जाते हैं जो मेरे प्यारे! सूर्य मण्डलों से ऊर्ध्वा मण्डलों में गति करते हैं चन्द्रलोकों से भी ऊर्ध्वा गति में क्या सूर्य लोकों से ऊर्ध्वा लोकों में गति करने वाले जब गन्धर्व हैं इनको गन्धर्वा अलातम् लोक कहते हैं वैदिक साहित्य में वेद के मन्त्रों में आज भी आ रहा था गन्धार्णि ग्रहे स्वस्ता मेरे प्यारे! गन्धर्व जो मण्डल हैं इनमें मानो चन्द्रमण्डल ओत प्रोत हो जाते हैं इनकी प्रतिष्ठा वहां चली जाती है आश्वस में चली जाती है मेरे प्यारे! यह गन्धर्व लोक कहलाए जाते हैं जिन लोकों में प्राणी मात्र गति करते हैं मेरे प्यारे! जैसे यह पार्थिव तत्व प्राणी कहलाए जाते हैं जितने भी गन्धर्व नाम के लोक लोकान्तर हैं उनमें सब में प्राणी विचरण करते हैं प्राणी गति करते रहते हैं मेरे प्यारे! चारों प्रकार की सृष्टि की उत्पति होती रहती है चारों प्रकार से मानव समाज चन्द्र लोकों का अमृतमयी प्रकाश देखो गन्धर्व लोकों में भी गति करता है वहां भी उत्पति का ब्रूह मूल बन जाती है। मेरे प्यारे! देखो जब ऋषि ने यह वाक प्रगट किया तो ऋषि कन्या ने पुनः यह कहा कि भगवन मैं जानना चाहती हूं कि हे ब्रह्मवेत्ता! यह जो गन्धर्व मण्डल है इनकी प्रतिष्ठा क्या है भगवन मेरे प्यारे! उस समय ऋषि याज्ञवल्क्य मुनि कहते हैं कि हे देवी! यह जो गन्धर्व मण्डल है यह इन्द्र लोकों में ओत प्रोत हो जाते हैं यह इन्द्र में ओत प्रोत हो जाते हैं इन्द्र लोकों में क्योंकि इन्द्र लोक वह कहलाए जाते हैं जो सौर मण्डलों को भी ऊर्ध्वा गति में नियन्त्रण करने वाले हैं उनको मेरे प्यारे! इन्द्र मण्डल कहा जाता है इन्द्र लोक कहा जाता है जिसमें यह गन्धर्व और सूर्य सब समाहित हो

जाते हैं मेरे प्यारे! देखो उसको हमारे यहां इन्द्र कहते हैं क्योंकि इन्द्र हमारे यहां पर्यायवाची शब्दों में इन्द्र नाम राजा को कहते हैं जैसे उस राजा का नाम इन्द्र है, जो मेरे प्यारे! देखो, सर्वत्र राजाओं का एक धिराज बना करता है मुनिवरों! देखो वह सर्वत्र राष्ट्रों को नियन्त्रण करता है इसी प्रकार गन्धर्व और गन्धर्व से ऊर्ध्वा में गति करने वाले मानो देखो इन्द्र मण्डल कहलाए जाते हैं जो सर्वत्र सौर मण्डलों पर गति करता है मानो वह नियन्त्रण भी करता है गति ही नही नियन्त्रण भी करने वाला है नियन्त्रणवेत्ता को इन्द्र कहा जाता है क्योंकि जैसे इन्द्र नाम सूर्य को कहते हैं जैसे इन्द्र नाम आत्मा को कहते हैं बेटा! आत्मा इस शरीर का संचालन करता है नियन्त्रण करता है परमात्मा को इन्द्र कहते हैं जो इस संसार को नियन्त्रण में अब्रहा कर रहा है मेरे प्यारे! इसी प्रकार यहां लोकों में भी एक इन्द्र मण्डल होता है इन्द्र लोक है जो लोक लोकान्तरों का नियन्त्रण करने वाला है मेरे प्यारे! उसे इन्द्र कहा जाता है इन्द्रां ब्रह्मे कृताः वेद का ऋषि कहता है वह इन्द्र कहलाया जाता है परन्तु यहां चाक्राणी ने पुनः प्रश्न कर दिया क्या महाराज मैं यह जानना चाहती हूं कि यह जो इन्द्र है यह किसमें प्रतिष्ठित होता है मैं इन्द्र की प्रतिष्ठा जानना चाहती हूं मेरे प्यारे! ऋषि कहता है क्या हे देवी! यह जो इन्द्र है यह प्रजापति में ओत प्रोत हो रहा है यह प्रजापति में प्रतिष्ठित हो जाता है मानो देखो प्रजाओं को उत्पन्न करने वाला मुनिवरों! देखो यह प्रजापति में जब प्रजापति नाम यहां परमात्मा को स्वीकार किया गया परन्तु यह प्रजापति में ओत प्रोत होने वाला मेरे प्यारे! प्रजापतिमयी कहलाया गया है संसार का निर्माता है निर्माण करने वाला है वही प्रजापति है जो प्रजा का स्वामी है नेतृत्व करने वाला है मेरे प्यारे! उसे प्रजापति कहते हैं मुनिवरों! देखो जब उन्होंने यह वाक प्रगट किया तो चाक्राणी को देरी नही हुई प्रश्न करने में,

उन्होंने कहा प्रभु मैं जानना चाहती हूं यह प्रजापति किसमें प्रतिष्ठित हो जाता है। मेरे प्यारे! ऋषि कहता है क्या प्रजापति मानो यज्ञ में विराजमान रहता है याग ही उसकी प्रतिष्ठा है ऋषि कहता है हे देवी! यह जो प्रजापति है यह प्रजापति यज्ञ में ओत प्रोत हो जाता है प्रत्येक मानव को संसार में याग करना चाहिए बेटा! याग किस कहते हैं जितना भी संसार का शुभ कर्म है सबका नाम याग माना है। मेरे प्यारे! जितना भी शुभ कर्म है उस सभी को याग कहा जाता है याग की मीमांसा करते हुए याज्ञवल्क्य मुनि कहते हैं हमारे यहां जैसे ब्रह्म याग है, विष्णु याग है, शिव याग है देवी याग है, गोमेध याग है, अजामेध है मानो देखो हमारे यहां और भी नाना प्रकार के याग हैं परन्तु जैसे कन्या याग है भिन्न भिन्न प्रकार के जैसे पान्ति याग का वर्णन याज्ञवल्क्य मुनि ने कहा है। परन्तु यहां याग का अभिप्राय क्या है देवतं ब्रह्मे क्राता माता देती है क्या बालको को अमृतमयी प्रदान करती है मेरे प्यारे! देखो हमारे यहां देवी याग के और भी अभिप्राय हैं मानो इस प्रकृति का सदुपयोग करने का नाम बेटा! देखो देवी याग है जैसे मानो देखो लक्ष्मी को देवी कहते हैं उस लक्ष्मी का मानो देखो यदि सदुपयोग करता है उस द्रव्य को एकत्रित करके यदि उसका महान कर्म करता है उससे याग करता है महापुरुषों की सेवा परिणित करता है तो बेटा! मानो वह देवी याग हो रहा है, मुनिवरों! देखो विचार विनिमय क्या प्रत्येक मानव देखो जो भी जितना भी शुभ कर्म है महान कर्म है उसमें धर्म पिरोया हुआ है तो बेटा! वह याग कहलाता है परन्तु अग्नाधान करने का नाम देव याग है देवताओं की पूजा करनी चाहिए पूजा का अभिप्राय है क्या मानो उन देवताओं का सदुपयोग करना और उनसको सुगन्धित करना बेटा! वह देवयाग कहलाता है आज मैं बेटा! यागों के सम्बन्ध में विशेष चर्चा देने नही आया हूं विचार विनिमय केवल

क्या ऋषि याज्ञवल्क्य मुनि कहते हैं चाक्राणी यह जो प्रजापति है इसकी प्रतिष्ठा याग में ओत प्रोत हो जाती है याग ही इसकी प्रतिष्ठा है मानो देखो जब सुगन्धि उत्पन्न होती है विचारों कि सुगन्धि है कही जीवन की सुगन्धि है कहीं मानो साकल्य की सुगन्धि है जब सुगन्धि ही सुगन्धि ही उत्पन्न होती है सुगन्धि का नाम याग कहलाया जाता है मेरे प्यारे! मानव मानव के चरित्र की सुगन्धि से मानव का चरित्र बेटा! प्रभावित हो रहा है सुगन्धित हो रहा है एक दूसरे का जीवन तो वह कितना महान याग है मेरे प्यारे! एक योगी योगाभ्यास कर रहा है आत्मा को जान रहा है वह मानो आत्मीय ब्रह्म याग में रमण कर रहा है। मेरे प्यारे! देखो यहां नित्यप्रति ब्रह्म याग नाना प्रकार के याग होने चाहिएं विचार विनिमय क्या आज का वेद का ऋषि कहता है याज्ञवल्क्य मुनि जी कह रहे हैं क्या हमारे यहां यह जो प्रजापति है वह याग में प्रतिष्ठित हो जाता है। बेटा! देखो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने जो ही उत्तर दिया तो चाक्राणी ने पुनः प्रश्न कर दिया कि प्रभु मैं जानना चाहती हूं कि मानो इस यज्ञ कि प्रतिष्ठा क्या है यज्ञ किसमें ओत प्रोत हो जाता है मेरे प्यारे! ऋषि कहता है हे देवी! यह जो यज्ञ इस यज्ञ की जो प्रतिष्ठा है वह दक्षिणा मानी जाती है मेरे प्यारे! यह यज्ञ दक्षिणा में ओत प्रोत हो जाता है दक्षिणा का अभिप्राय क्या है मेरे प्यारे! देखो यज्ञशाला में यज्ञमान के समीप ब्रह्मा विराजमान है वेद का पठन पाठन कर रहा है होताजन हैं उद्गाता, अध्वर्यु है मेरे प्यारे! वह जो याग हो रहा है उस याग की प्रतिष्ठा मेरे प्यारे! दक्षिणा है दक्षिणा का अभिप्राय क्या है दक्षिणा कहते हैं उस द्रव्य देने का नाम दक्षिणा है यह तो पालन पोषण के लिए अनिवार्य है, परन्तु दक्षिणा का अभिप्राय यह है हे यज्ञमान! जिस सुगन्धि को मैं तेरे गृह में प्रसारित कर रहा हूं यह सुगन्धि तेरे गृह से चली नही जाए मानो यदि तेरे गृह से सुगन्धि

चली गई तो तेरा अनिष्ट हो जाएगा, मानो तेरे गृह में यह सुगन्धि सदैव रहे जब यज्ञमान मेरे प्यारे! यह दक्षिणा ब्रह्मा को प्रदान कर देता है तो उसका नाम दक्षिणा कहा जाता है क्योंकि द्रव्य देना तो यह पालन पोषन के लिए दिया जाता है। दक्षिणा का अभिप्राय दक्षिणा कहते है सङ्कल्प को दक्षिणा नाम मेरे प्यारे! जो अग्नि प्रदीप्त होने जा रही है जो मानो सुगन्धि मैं प्रदान कर रहा हूं वह सुगन्धि तेरे गृह में सदैव सुगन्धित बन करके तेरे गृह को आच्छादित करती रहती है तेरे गृह में चरित्र तेरे गृह से चरित्र न चला जाए तेरे गृह में चरित्र और सुगन्धि सदैव ओत प्रोत हो मेरे प्यारे! ऋषि ने जब यह वाक कहा तो चाक्राणी ने पुनः प्रश्न कर दिया उन्होंने कहा प्रभु मैं जानना चाहती हूं दक्षिणा की प्रतिष्ठा क्या है ऋषि ने कहा हे देवी! यह जो दक्षिणा है इसकी प्रतिष्ठा है श्रद्धा है प्रत्येक मानव के द्वारा श्रद्धा होनी चाहिए। आज जिस वस्तु को हम धारण कर रहे हैं उसमें निष्ठा हो श्रद्धा हो क्योंकि श्रद्धा से यह जीवन बना हुआ है श्रद्धा से ही मेरे प्यारे! एक मानव मानव को मिलन को प्राप्त होता है मेरी प्यारी माता के हृदय में यह श्रद्धा है कि यह मेरा पुत्र है पिता के हृदय में यह श्रद्धा है यह मेरी पुत्री है तो पुत्र पुत्री बने रहते हैं कुटुम्ब बना रहता है यह संसार मानो श्रद्धा से उत्पन्न हुआ श्रद्धा ही इसमें ओत प्रोत रहती है श्रद्धा प्रत्येक मानव के समीप रहती है परन्तु देखो चाक्राणी ने देरी नही की पुनः प्रश्न कर दिया उन्होंने कहा कि महाराज यह जो श्रद्धा है इसकी प्रतिष्ठा क्या है मेरे प्यारे! देखो ऋषि याज्ञवल्क्य मुनि कहते हैं हे देवी! यह जो श्रद्धा है इसकी प्रतिष्ठा मानव के हृदय में रहती है यह हृदय ही मानो देखो जीवन है हृदय में यह संसार ओत प्रोत रहता है जब मानव देखो अग्नाधान करता है तो हृदय में अग्नि का भान करता है जब मुनिवरों! परमात्मा का चिन्तन करता है परमपिता परमात्मा को हृदय में

दृष्टिपात करता है मेरे प्यारे! ब्रह्म याग करता है इन्द्रियों का साकल्य बनाता है उसके पश्चार वह साकल्य हृदय में याग कर रहा है मेरे प्यारे! देखो यह संसार हृदय में ओत प्रोत रहता है जैसे यह मानव का हृदय है इसी प्रकार यह जो परमात्मा का जो हृदय है यह सर्वत्र जगत माना गया है यह सर्वत्र जगत परमात्मा का हृदय है मानव का जो हृदय है वह भी मानो देखो विशाल जगत है विचार विनिमय क्या मेरे प्यारे! देखो उस समय चाक्राणी ने पुनः प्रश्न किया कि महाराज हृदय की प्रतिष्ठा क्या है मेरे प्यारे! चाक्राणी से यह कहा हे देवी! तुम अति प्रश्न न करो अन्यथा तुम्हारा मस्तिष्क नीचे गिर जाएगा मेरे प्यारे! नीचे गिर जाने का अभिप्राय क्या है मुनिवरों! देखो जब वुद्धिमान से तुम प्रश्न करते रहोगे क्योंकि परमात्मा का अन्तिम विषय ऐसा है जो नेति नेति उच्चारण करना मेरे प्यारे! बुद्धिमान नेति नेति उच्चारण करके वह मौन हो जाता है प्रश्नकर्ता को अभिमान आ जाता है और अभिमान हो जाना ही मेरे प्यारे! मस्तिष्क नीचे गिर जाना है मेरे प्यारे! इसीलिए देखो बुद्धिमानो को चाहिए कि वह सदैव प्रश्नकर्ता के समीप प्रश्न करते रहें परन्तु प्रश्न के आभाव में मेरे प्यारे! अभिमान न आ जाए क्योंकि अभिमान आ गया तो मानव की आभा नष्ट हो जाती है मेरे प्यारे! मानव का बुद्धिमता समाप्त हो जाता है परिणाम क्या क्योंकि यह जान लेना चाहिए एक बुद्धिमानो को तुमने प्रश्न किया यदि उससे तुम्हारे प्रश्न का उतर नही बना तो बुद्धिमान को यह विचार लेना चाहिए कि यह इतना आगे नही जानता होगा परन्तु तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर नही बना है इनसे कोई वाक नही यह यहां तक जानता आगे कोई बुद्धिमान मुझे प्राप्त होगा तो मैं इससे आगे की वार्ता को जानने की इच्छा को प्रगट करूंगा तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या चाक्राणी से जब ऋषि ने यह कहा कि तुम्हारा मस्तिष्क नीचे गिर जाएगा तुम अति प्रश्न न

करो क्योंकि हृदय से आगे जो प्रतिष्ठा है वह परमात्मा है और परमात्मा का विषय नेति नेति माना गया है मेरे प्यारे! जब ऋषि ने ऐसा कहा तो चाक्राणी मौन हो गई।

2 ०० ०० १९७३

पूर्व की भान्ति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, यह भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहां परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस परमपिता परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान निहित रहता है, और वह नितान्तर माना गया है, जैसे प्रभु अनन्तता में परणित रहता है, उसी प्रकार उसका जो विज्ञान है, अथवा ज्ञान है, वह अनन्तता में परणित किया गया है। हमारे यहां नाना प्रकार की प्रतिभाओं का वर्णन आता रहता है। बेटा! हमारे ऋषि मुनियों ने नाना प्रकार का अनुसन्धान किया, परन्तु प्रकृतिवाद का अनुसन्धान किया, तो उन्होंने अन्त में यह कहा कि हम इसको अच्छी प्रकार नहीं जान पाते। क्योंकि प्रकृतिवाद में जितने तुम परणित हो जाओगे, अथवा उसके गर्भ में परणित होते चले जाओगे, मानो उसमें तन्मय हो जाओगे, तो इतना ही बेटा! प्रकृति के परमाणुवाद में इस प्रकार संलग्न होते चले जाते हैं कि मानव को आगे चल करके सन्मार्ग प्राप्त नही होता। परन्तु जब ऊर्ध्वा गति में जाते है, उस ब्रह्म की चेतना को जानने के लिए तत्पर होते हैं, क्योंकि वह आपोमयी ज्योति जो हमारे शरीर में है, उसकी जो गति है, वह ऊर्ध्वा में जाने की है, क्योंकि जैसे अग्नि यज्ञशाला में परणित हो रही है। अग्नि अपना प्रसार दे रही है। उसकी गति ऊर्ध्वा होती है, इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, ज्योति से ज्योति का मिलान होने के लिए तत्पर हो जाता है। क्योंकि अग्नि का जो सखा है

अग्नि का जो महान मानो पिता है मानो वह ऊर्ध्वा में रहता है इसी प्रकार यह अन्तरात्मा हृदय में है बेटा! यह पिपासी रहती है और यह मुनिवरों! देखो, यह उसी की पिपासा में परणित रहती है जहां उसका सखा है, उसके मिलन के लिए पिपासा रहती है जिस प्रकार बेटा! मुनिवरों! देखो, माता का शिशु व्याकुल होता रहता है माता के प्राप्त होने पर बालक शान्त हो जाता है शिशु की क्षुधा समाप्त हो जाती है इसी प्रकार मुनिवरों! देखो,ऐ उस मानव को मानो अन्तरात्मा इस मानव शरीर में है मानव को उस प्रभु के द्वार पर जाने लगता है मानो चेतना से चेतना का मिलान जब होने लगता है तो मुनिवरों! देखो, वह पिता का मानव को जो मिलन की पिपासा थी वह शान्त होते ही मुनिवरों! देखो, शान्त होते ही देखो, वह मोक्ष के मार्ग को प्राप्त कर लेता है।

आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज हम अधिक विवेचना इस सम्बन्ध में देना नहीं चाहते हैं विचार क्या कि आज हम अपने प्यारे प्रभु का गुणगान गा रहे थे वह मेरा प्यारा प्रभु कितना वैज्ञानिक है, कितना महान है आज यदि मुनिवरों! हम नाना प्रकार के वृक्षों के विज्ञान पर जाते हैं अथवा नाना प्राणियों के विज्ञान में जाते हैं तो मुनिवरों! देखो, बुद्धि वहां इतना ऊर्ध्वा गति में कार्य भी नहीं कर पाती जितना उसका विज्ञान है।

एक दूसरे की सहयोगी योनियां

मेरे प्यारे! ऋषिवर! परमपिता परमात्मा ने नाना प्रकार की योनियां बेटा! इस पृथ्वी मण्डल पर हैं परन्तु उनका भिन्न भिन्न कर्तव्य है भिन्न भिन्न उसका मानो मानवीयतव माना गया है वह प्रभु के विधान के अनुसार जब कार्य करते हैं तो एक दूसरे प्राणी से उनका कितना निकट सम्बन्ध है कितनी सम्बन्धिता है उनमें आज मुनिवरों! जब हम यह विचारते हैं एक सर्प योनि

है मानो विषैली योनि कहलाती है मुनिवरों! देखो, सूर्य की नाना किरणें आती हैं उन किरणो का सम्बन्ध जैसे प्राणी पर रहता है इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, सर्प योनि पर भी रहता है परन्तु देखो, यह जो नाना किरण है, यह जो मानव को अमृत प्रदान करती है वही मुनिवरों! उसके दूसरे रूपान्तर वाली जो किरण है वही मुनिवरों! देखो, सर्प को विष प्रदान करती है मानो देखो, कितना सुन्दर उस मेरे प्यारे! प्रभु का विधान है उस मेरे प्यारे! प्रभु का विज्ञान है मुनिवरों! देखो, मानव के जीवन से उस सर्प योनि का कितना निकटतम सम्बन्ध माना गया है मानो कितना सम्बन्ध है जो इसके लिए मानो एक दूसरा कितना लाभप्रद है मुझे मेरे प्यारे! महानन्द जी! ने कई काल में प्रगट कराते हुए कहा कई प्रकार की विवेचना इन्होंने दी कि संसार तो मानो इस सर्प को विषधर स्वीकार करके इस पर प्रहार कर देता है परन्तु ऋषिजन कहते हैं आचार्यों ने कहा है वेदज्ञ ऋषियों ने कहा है कि मानव को सर्प जो योनि है जितने भी विषैले प्राणी हैं, वह मानव के बहुत ही निकट रहते हैं मानव के जीवन का जीवन के वह साथी बने रहते हैं मेरे प्यारे! वह जो नाना प्रकार के जो विष हैं, जो वायुमण्डल में हम त्यागते हैं वायुमण्डल में जो भ्रमण कर रहें हैं मुनिवरों! देखो, उनका वह शोषण करते रहते हैं अपने में ग्रहण करते रहते हैं मानव को अमृत देते हैं और स्वयं को मुनिवरों! प्रभु के विज्ञान के अनुसार विष को पान करते हैं।

विषधर की पूजा

आओ, मेरे प्यारे! हम अमृत को पान कर लें अमृत को हमें पान कराता हैं जो विष पान कर लेता है मुनिवरों! देखो, हमें जो विषधर हैं उनकी पूजा करनी चाहिए उनकी पूजा का अभिप्राय, यह क्या हमें अपने अन्तःकरण से, उनके प्रति दूरिता त्याग देना चाहिए।

जब हम अपने हृदय से उनके प्रति दूरिता त्याग देते हैं, तो मुनिवरों! देखो, उनका हृदय और हमारा हृदय दोनों का मिलान होने लगता है, मुझे स्मरण आता रहता है, बेटा! महाराज शिव और पार्वती मुनिवरों! देखो, जब हिमालय के आङ्गन में मानो देखो, पर्वतों की सुन्दर कन्दराओं में रहते थे तो वह उन्होंने बेटा! जब अहिंसा परमोधर्म अपने में अपनाने का प्रयास किया तो मुनिवरों! उनके कण्ठ में मानो देखो, विषधर रमण करते रहते थे आसनों पर रहते।

बेटा! मुझे स्मरण आता रहता है एक समय मुनिवरों! देखो, महर्षि भृगु मुनि महाराज, महर्षि भृगु जी एक समय अपने आसन पर विराजमान थे, वह मुनिवरों! जटा पाठ का, घन पाठ माला पाठ का अध्ययन कर रहे थे उनके ऊपर अभ्यास प्रारम्भ हो रहा था क्योंकि ऋषि मुनि हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही बेटा! उसके ऊपर अध्ययन करते रहते थें मानो जो स्वर हैं जैसे जटा पाठ, घन पाठ और माला पाठ है क्योंकि वेदों का पठन पाठन भिन्न प्रकार से होता है, वह जो माला पाठ है माला पाठ का अभिप्राय यह कि प्रत्येक स्वर को प्रभु की चेतना में पिरोने का प्रयास कर रहे थे मुनिवरों! देखो, प्रत्येक वेद शब्द में प्रभु की प्रतिभा का दिग्दर्शन कर रहे थे तो मुनिवरों! जब वह गान गाते थे वह गान इतना हृदय से होता था मुझे स्मरण है बेटा! वह गान इतना तन्मय हो करके होता था कि मृगराज आते और उनके गान को श्रवण करने लगते थे बेटा! सर्पराज आते, वह भी स्वरों को श्रवण करने लेते थे।

तो अभिप्राय यह मुनिवरों! देखो, एक समय महर्षि रेवक मुनि का जब वहाँ आगमन हुआ, तो रेवक मुनि ने एक वाक कहा महर्षि भृगु से क्या महाराज मैं यह जानना चाहता हूँ कि आप के मार्ग से आप के इस आसन पर जो भंयकर वन में लगा हुआ है यहाँ मृगराज विराजमान रहते हैं, सर्पराज भी विराजमान रहते हैं,

आप के स्वरों को वह ग्रहण करते हैं। आप के स्वरों में वह अपने आनन्द को प्राप्त करते हैं तो प्रभु! यह कैसे होता है? तो उस समय महर्षि भृगु ने कहा हे ऋषिवर! तुम नही जानते तुमने इतना तप किया है गाड़ी के नीचे विराजमान हो करके तुम गाड़ीवान रेवक कहलाते हो मुझे स्मरण है, परन्तु यह वाक तुम क्यों उच्चारण कर रहे हो उन्होंने कहा प्रभु! मैंने तो सदैव संसार में मृत्यु के ऊपर अध्ययन किया है क्योंकि मृत्यु ही मेरा विषय रहा है वही मेरा देवता रहा है मैं तो उसके ऊपर अध्ययन करता रहता हूँ। परन्तु यह जो विषधर प्राणी है, विष को क्या, विष को ग्रहण भी करते हैं, त्यागते भी हैं, तो क्या प्रभु आपके शब्दों क्या इन्हे आनन्द आता है? उस समय महर्षि भृगु ने कहा हे ऋषिवर! तुम्हे यह तो प्रतीत है सर्वे भौम सिद्धान्त है कि आत्मा यह जो है यह देखो, ज्ञान इसमें स्वाभाविक होता है, प्रयत्न भी स्वाभाविक होता है, जिसमें ज्ञान और प्रयत्न स्वाभाविक होता है, तो जब ज्ञान की पिपासा देखो, निष्पक्ष हो करके होती है, जो प्रभु का विज्ञान है, प्रभु का ज्ञान है, प्रभु की प्रतिभा है, उस प्रतिभा को कौन प्राणी नहीं ग्रहण करना चाहता है। यह तुम्हें प्रतीत होना चाहिए क्योंकि संसार में जितने भी मृगराज है, अथवा सर्पराज हैं, जितने भी प्राणी मात्र हैं। उनमें मानो एक चेतना कार्य कर रही है, और वह जिस चेतना को आत्मा की पिपासा होती है, परन्तु प्रायः वह ऐसे मानव प्रभु के कारागार में रहते हैं, जो मानो कुछ कर्म नहीं कर सकते। जो प्रायः भोग योनि कहलाती हैं, परन्तु देखो, उनका आत्मा का जो ज्ञान है, वह तो उनका स्वाभाविक बना हुआ है, मानो देखो, प्रयत्न भी स्वाभाविक बना हुआ है, इसीलिए वह जो ज्ञान है, जिस ज्ञान के आधार पर प्रभु के विज्ञान को और प्रभु के ज्ञान और विज्ञान की आभा में उनकी प्रतिभा बना

करती है।

मेरे प्यारे! ऋषिवर! जब महर्षि भृगु जी ने निर्णय कराया तो महर्षि रेवक मुनि बोले क्या भगवन! मैं यह जानना ओर चाहता हूँ क्या यह जो मानो मृगराज हैं, यह तो हिंसक है, मानव का भक्षण कर जाते हैं, उन्होंने कहा तुम्हारा वाक यथार्थ है, परन्तु हिसङ्क प्राणी ही अहिंसा परमोधर्मी बन जाता है। हिंसा को त्याग देता है, **क्योंकि स्वप्न में आत्मा का प्रभाव आत्मा का बल बलिष्ठ हो करके इनके अन्तःकरण पर छा जाता है। क्या अन्तःकरण भी पवित्रता में परणित हो जाता है,** हमारे यहाँ मुनिवरों! देखो, योग की प्रणाली में योग की विशेषताओं में मानो देखो, नाना प्रकार की आभाएं आती रहती हैं। नाना योगियों ने बेटा! भिन्न भिन्न प्रकार का अनुसन्धान किया है, एक समय बेटा! महर्षि शाण्डिल्य मुनि महारज और और मुनिवरों! देखो, मुद्गलीय महाराज हिमालय की कन्दराओं में तप कर रहे थे। मानो वह तप करते हुए उनका सांय काल को दोनो का कुछ विचार विनिमय भी होता रहता था, जब देनों का विचार विनिमय होता रहता था, तो उनकी विचारधारा उसी सम्बन्ध में रहती थी कि यह जो आत्मा है, अथवा परमात्मा का जो ज्ञान है, यह कितना नितान्तर है। मुनिवरों! देखो, निर्णय देते हुए महर्षि शाण्डिल्य मुनि महाराज ने कहा था, क्या यह जो परमात्मा का ज्ञान है, अथवा विज्ञान है, वह इतना नितान्तर है कि मानव उसको प्राप्त करने में अन्त में असमर्थ हो जाता है। विचार यह नाना प्रकार की योनियों में मुनिवरों! नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में उस प्रभु की आभा दृष्टिपात आती रहती है। आज हम लोकों के मध्य में जब मानो भिन्न भिन्न प्रकार के चित्रण होते दृष्टिपात करते हैं, यौगिक अभ्यास के द्वारा यह प्रतीत होता है कि मानो देखो, मानव की वाणी का सूत्र क्या मानव के शरीर में एक एक छिद्र से जो परमाणु

जाता है। उसकी जो प्रतिभा है मानो देखो, वह भी रमण कर रही है। अहा! लोकों के मध्य में मानो देखो, जैसे मानो देखो, हमारे यहाँ बुध है, और बुध के साथ में मानो शनि की प्रतिभा मानी जाती है। दोनों लोंक एक ही कृतियों में विराजामन रहते है। जब सूर्य की धारा चलती है सूर्य की मानो रश्मियां चलती हैं, उन्हीं रश्मियों के साथ में जो भी सूर्य की दूषित रश्मियां चलती हैं, तो मुनिवरों! देखो, वह शनि और देखो, बुध के आङ्गन को चला करती हैं। वही मुनिवरों! प्रतिष्ठित रहते हैं, तो विचार क्या मैं बेटा! यह विचार देने जा रहा हूँ, क्या इन लोंको के मध्य में नाना प्रकार की चित्रावलियाँ रमण करती रहती हैं। वह जो चित्र हैं, क्योंकि वाणी मुनिवरों! देखो, मुखारिबन्दु से उत्पन्न हो करके व्यापक रूप धारण कर लेती है, कैसा व्यापक रूप है, इस वाणी का बेटा! एक शब्द उच्चारण करते हैं, वह शब्द मुखारबिन्द से उत्पन्न हो करके अरबों खरबों तरंगे उत्पन्न हो जाती हैं। वह जो अरबों खरबों जो तरंगे हैं, मानो जिस प्रकार की वाणी होगी, उसी प्रकार के परमाणुओं में मिश्रित हो करके, उसी प्रकार का चित्रण कर लेती हैं। बेटा! उसी प्रकार के शब्दों में वह चित्रित हो जाते हैं, आज विचारा जाता है कि हमारे इस मानव शरीर में नाना प्रकार की नस नाड़ियाँ हैं, परन्तु जिन संहिताओं का अध्ययन आज से लाखों वर्षों पूर्व बेटा! हमने गुरु चरणों में विराजमान हो करके अध्ययन किया था आज भी उच्चारण कर रहे हैं। मानो देखो, कौन सा इस शरीर में ऐसा केन्द्र है, कौन सी नस नाड़ी इस प्रकार की जहाँ बेटा! वेद की पोथी की पोथी विराजमान हैं। जहाँ मुनिवरों! नाना संहिताएं विराजमान हैं, परन्तु कोई स्थल मुझे ऐसा प्रतीत नहीं होता, बेटा! मूल कारण क्या, हमारा जो ब्रह्मरन्ध्र है, उस ब्रह्मरन्ध्र में मुनिवरों! देखो, प्राणों के द्वारा ब्रह्मरन्ध्र में संचित्त हो जाते हैं, और वह जो चित्त नाम का स्थान

है, मुनिवरों! जहाँ मन, बुद्धि, चित्त, अहङ्कार, इनकी साम्यवस्था मानी जाती है। परन्तु जब चित्त में इसकी प्रतिभा हो जाती है, प्रकृति में मानो यह रमण कर जाते हैं, क्योंकि शब्द अन्तरिक्ष का गुण माना गया है, जब यह सब तरंगे इसमें ओत प्रोत हो जाती हैं, ओत प्रोत हो जाने के कारण मुनिवरों! देखो, मानव का चित्त में जो देखो, जो संस्कार हैं, उसी संस्कार के आधार पर मुनिवरों! देखो, वही मानो अन्तरिक्ष से आना प्रारम्भ हो जाता है। बेटा! ब्रह्मरन्ध्रों के द्वारा क्योंकि नाना प्रकार की वाहक नाड़ियाँ है, उन वाहक नाड़ियों के द्वारा मुझे तो ऐसा एक समय मुनिवरों! महर्षि शाकल्य मुनि ने ऐसा कहा है, सोमकेतु मुनि ने तो ऐसा कहा है, महर्षि भारद्वाज मुनि ने भी ऐसा ही कहा है कि हमारे इस ब्रह्मरन्ध्र में जो इंगला, पिंगला, सुषुम्णा नाम की नाड़ी हैं मुनिवरों! एक एक नाड़ी में से एक एक सहस्र नाड़ियाँ चलती हैं, और उन नाड़ियों में से ऐसी धाराएं चलती हैं, जिनका बेटा! नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों से सम्बन्ध होता रहता है। मुनिवरों! उन्हीं शब्दों से मानव के चित्त में जो संस्कार हैं, उन्हीं संस्कारों के आधार पर वही धारा अन्तरिक्ष में आना बेटा! प्रारम्भ हो जाता है।

आओ, मेरे प्यारे! हम अधिक चर्चा प्रगट करना नहीं चाहते हैं, यह तो प्रभु! का विज्ञान है, प्रभु नितान्तरता में परणित रहने वाला जैसे प्रभु अनन्त है, इसी प्रकार प्रभु का विज्ञान भी अनन्त है, बेटा! मेरे प्यारे! ऋषिवर! मुझे स्मरण आता रहता है, बेटा! एक समय महात्मा आस्काचार्य ने महर्षि भारद्वाज से यह कहा कि महाराज! आप विज्ञान की चर्चाएं जानते हैं, परन्तु मैं विज्ञान के सम्बन्ध में, आप से कुछ प्रश्न करना चाहता हूँ? महर्षि भारद्वाज मुनि बोले क्या जो तुम्हारी इच्छा हो उन्होंने कहा भगवन! मैं यह जानना चाहता हूँ कि हमारा जो मानवीय जीवन है, अथवा जैसे आपकी यहाँ यज्ञशाला हैं, यज्ञशाला के साथ में

विज्ञानशाला है, विज्ञानशाला के साथ में नाना प्रकार का अनुसन्धान होता रहता है, परमाणुवाद के ऊपर महापरमाणु, महाअणु, त्रिसेणु, चतुषेणु, नाना प्रकार के परमाणुओं पर तुम्हारा अध्ययन होता रहता है परन्तु देखो, वह जो अध्ययन है, मैं यह जानना चाहता हूँ कि सूर्य से आपको कौन से कणों को एकत्रित करना है, कणों के ऊपर अध्ययन करना है, मानो देखो, इसी प्रकार बृहस्पति के ऊपर आप यह कैसे अनुभव कर लेते हैं, विज्ञान के द्वारा, क्या सूर्य मण्डल में अग्नि तत्त्व माना जाता है। मानो देखो, बृहस्पति में वायु तत्त्व माना जाता है। यह कैसे, आप अनुभव करते हैं?

उस समय महर्षि भारद्वाज ने कहा क्या सबसे प्रथम आप यौगिक द्वारा जानना चाहते हैं अथवा विज्ञान भौतिकवाद के द्वारा। उन्होंने कहा मैं भौतिकवाद के द्वारा जानना चाहता हूँ उन्होंने कहा भौतिकवाद है हमारे यहां एक ऐसे यन्त्र का निर्माण किया है, जिस समय हम यज्ञशाला में आहुति देते हैं, तो हम उसी प्रकार का साकल्य एकत्रित करते हैं, पृथ्वी से, मानो देखो, साकल्य को एकत्रित करके, उसमें यज्ञशाला हमारी मानो कई प्रकार की होती हैं, जैसे मानो देखो, चतुर्थ कोण होती है त्रि कोण होती है अष्ट कोण होती है मानो देखो, छह कोण भी होती है इसी प्रकार सप्तम् कोण भी होती है, आज जो मानव वैज्ञानिक बनना चाहता है, उस वैज्ञानिक को सप्त कोण की यज्ञशाला का निर्माण करना चाहिए, और उस यज्ञशाला में जब हम देखो, साकल्य देते हैं, आहुति देते हैं, मानो देखो, ऐसी आहुति मानो देखो, यज्ञशाला के इसी प्रकार देखो, छिद्र होते है यज्ञशाला में, जब यज्ञशाला में मानो देखो, एक एक कृत्तियों में नाना प्रकार के छिद्र होते हैं, जब परमाणु निकस करके जाते हैं, बहुत से परमाणु तो इस प्रकार के बनते हैं, जो यज्ञशाला में मानो देखो, जल से जल के उन परमाणुओं

को एकत्रित करके, मानो यज्ञशाला में जल की कुछ गति अभ्रात होने लगती है, परन्तु कुछ इस प्रकार का भी हम स्वीकार करते हैं, मानो देखो, उसमें से जल के परमाणु अग्नि के परमाणुओं को मानो एकत्रित करते हैं, और इसी प्रकार वायु इत्यादियों के परमाणुओं को एकत्रित करके उन परमाणुओं को हम मानो देखो, श्वासीकृत नाम का एक यन्त्र है। उस यन्त्र में भी उसको भरण कर लेते हैं, भरण करने के पश्चात मानो देखो, मात्रा को दृष्टिपात करते हैं, जितनी मात्रा मानो अग्नि की होनी चाहिए, कितनी मात्रा जल की होनी चाहिए, कितनी मात्रा पार्थिव परमाणुओं की होनी चाहिए, उन परमाणुओं को मानो जिस प्रकार का हमें यान बनाना है। किस प्रकार का हमें निर्माण करना है, मानो जैसे हमे सूर्य यान का निर्माण करना है, तो सूर्य यान के निर्माण के साथ में हमें अग्नि के तत्त्वों को अधिक मिश्रण करना होगा। आओ, उसके पश्चात मुनिवरों! उससे दुगना वायु का परमाणु लेना होगा, उसके पश्चात हमें मानो देखो, उससे दुगना अन्तरिक्ष का परमाणु और मुनिवरों! अग्नि के आधे परमाणुओं से भी सूक्ष्म परमाणु जल का ले करके और और उससे भी आधा परमाणु पार्थिव तत्त्वों का ले करके जब हम उसका यान का निर्माण करते हैं। तो वह यान मुनिवरों! देखो, पृथ्वी से त्यागा हुआ वैज्ञानिक यन्त्र मुनिवरों! देखो, सूर्य मण्डल की यात्रा के लिए अश्वत हो जाता है।

तो विचार यह कि आज हम वैदिक सिद्धान्त में वैदिक विचारों क्या लाना चाहते हैं, महर्षि भारद्वाज ने कहा कि वैदिक सिद्धान्त में वैदिक मन्त्रों में मुनिवरों! देखो, इस इस प्रकार के विज्ञान की मानो नाना विचारधाराएं तुम्हे प्राप्त होंगी। हम वेदों से सब कुछ प्राप्त करते हैं, हमारे यहां एक स्थान में एक यज्ञशाला है, वेदों के मन्त्रों के ऊपर प्रायः अनुसन्धान होता रहता है, हम नाना प्रकार का अनुसन्धान करते रहते हैं, और

क्योंकि यज्ञमान का अभिप्राय यह है कि यज्ञमान के लिए वेद का ऋषि कहता है यज्ञमानं प्रव्हे असुतम सूर्यं ब्रह्मा लोकम् प्रव्हे असुतम गतप प्रव्हे ऋषि कहते हैं हे यज्ञमान! तेरी यज्ञशाला में विराजमान हो करके तेरी गति मानो देखो, सूर्य मण्डलों तक होनी चाहिए। तेरी गति मानो इस यज्ञशाला तब ही नहीं होनी चाहिए, मुनिवरों! ब्राह्मण को कहा कि यज्ञशाला में ब्रह्मा की उपाधि को प्राप्त करता है। उसे कहा है हे ब्राह्मण! हे ब्रह्मा! तू मानो यज्ञशाला में ब्रह्मा की उपाधि को प्राप्त किया है, मानो तेरी गति केवल स्वाहा तक ही नहीं रहनी चाहिए। तेरी गति इतनी ऊर्ध्वा होनी चाहिए, क्या तू मानो यज्ञशाला को ले करके देखो, विज्ञानशाला में निर्माणशाला में परणित होता हुआ, तेरी गति मानो देखो, सूर्य मण्डल तक क्या, बृहस्पति लोकों तक होनी चाहिए। ऐसा बेटा! प्रायः हमारे यहां आता रहता है, यह जो यज्ञ परमपिता परमात्मा ने क्या सृष्टि के प्रारम्भ में बेटा! आदि ब्रह्मा ने इसको रचा, क्योंकि जैसे जैसे इस प्रभु ने इस जगत को विज्ञानशाला और मुनिवरों! देखो, एक प्रकार की यज्ञवेदी रचा है, इसी प्रकार मानव को कहा वैदिक ऋषियों को कहा हे वैदिक ऋषियों! आओ, तुम यज्ञवेदी पर आ जाओ, जैसे प्रभु ने इस मानव शरीर को रचा है, इसके मानो देखो, दस पात्र हैं, मानो पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच कर्मेन्द्रियाँ इसमें मानो देखो, जैसे देखो, धर्म समाहित रहता है। इसी प्रकार प्रकृति का जितना विज्ञान है, वह सर्वत्र मानो देखो, यज्ञशाला में मानो देखो, परणित रहता है, आज हमें जानना है आज हमें उस मार्ग को प्राप्त करना है बेटा! जिस मार्ग को प्राप्त करने के पश्चात हमें संसार का वैज्ञानिक मानो देखो, नास्तिकवाद को प्राप्त न होता हुआ मानो देखो, उस महानता में विश्वशक्ति को ले करके जब चलता है, तो बेटा! एक भुज में ओ३म् रूपी पतिका होती है, एक में मुनिवरों! देखो, वेद की रचाएं

होती हैं, और तृतीय आङ्गन में बेटा! देखो, सुगन्धि होती है, उस सुगन्धि को ले करके हमारे में, ऊर्ध्वा में गति होनी चाहिए।

आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज मैं अधिक विवेचना देने नहीं आया हूँ, विचार क्या कि हम प्रभु की उपासना करते हुए, मुनिवरों! यह उच्चारण कर रहे थे, महर्षि आस्काचार्य ने महर्षि भारद्वाज से जब यह कहा, तो महर्षि भारद्वाज मुनि मौन हो गएं और मौन हो जाने के पश्चात मुनिवरों! आस्काचार्य भी मौन हो गएं उन्होंने कहा, प्रभु! अब मैं यह जानना चाहता हूँ क्या मानो आज हम यदि भगवन! योग के द्वारा, हम आध्यात्मिक विज्ञान के द्वारा हम सूर्य मण्डलों की और बृहस्पति मण्डलों की हम नाना मण्डलों की यात्रा करना चाहते थे तो किस प्रकार कर सकते हैं? मेरे प्यारे! जब महर्षि भारद्वाज मुनि से यह प्रश्न किया, महर्षि भारद्वाज मुनि बोले क्या इसको तो प्रायः प्राणी जानता है। क्या जब तक मानव, मैंने बहुत पूर्व काल में तुम्हे प्रगट कराया होगा कि आस्काचार्य जी तुम्हे यह प्रतीत होगा कि आज हम सूर्य मण्डल पर जाना चाहते हैं, हम योग के द्वारा उसको प्रत्यक्ष करना चाहते हैं, मानो देखो, आज तुम कैसे कर सकते हो? इसके ऊपर अध्ययन करो। मानो देखो, अग्नि की उपासना करो, अग्नि के ऊपर तुम्हारा अध्ययन होना चाहिए, मानो देखो, यह जो बाह्य जगत में अग्नि है, इस बाह्य जगत की अग्नि का और जो आन्तरिक अग्नि है, दोनो का तुम्हे समन्वय करना होगा क्योंकि जब तक इन दोनों प्रकार की अग्नियों के ऊपर तुम समन्वय नहीं करोगे तब तक तुम मानो देखो, अग्नि लोको का भ्रमण नहीं कर सकोगे। क्योंकि आत्मा तो ऐसा पदार्थ है, आत्मा को तो अग्नि भी नष्ट नहीं कर सकती, वायु भी नष्ट नहीं कर सकती, मानो देखो, आत्मा तो चैतन्य, आत्मा तो ऐसा प्रकाश है कि आत्मा के प्रकाश के आगे सूर्य का प्रकाश कोई

महत्वदायक नहीं होता, और देखो, आत्मा की जो चेतना है, मानो दाह है, उस दाह के आगे सूर्य की अग्नि कोई महत्वदायक नहीं है, आज तुम्हे यह प्रतीत होगा मानो यह तो प्रायः प्रत्येक मानव जानता है।

आज मैं अधिक विवेचना देने नहीं आया हूँ अधिक विचार विनिमय करने भी नही आया हूँ, केवल यह सक्षिप्त परिचय देना हमारा कर्तव्य है बेटा! इस संक्षिप्त परिचय को हम देते चले जाएं, विचार क्या मुनिवरों! देखो, ऋषि ने कहा कि अग्नि के परमाणुओं को तुम्हे समन्वय करना होगा और अपना आन्तरिक जो हृदय है, आन्तरिक जो अग्नि है, मानो जिसको वाणी भी कहा जाता है। वाणी की जो व्यापकता है, वह महत्वदायक है, उस वाणी से मुनिवरों! देखो, जैसे मुखारबिन्द से उत्पन्न होती है, उन वाणी के परमाणुओं को एकत्रित करो। मौन हो जाओं जब मौन हो जाओंगे मौन हो जाने के पश्चात अग्नि के ऊपर अनुसन्धान होता रहेगा, और नाना प्रकार की धातु मुनिवरों! देखो, इस हमारे मानवीय शरीर में प्राणायाम के द्वारा ब्रह्मरन्ध्र में परणित होती हैं। अन्तर्हृदय में परणित हो जाती हैं, भरण हो जाती हैं, मुनिवरों! देखो, उससे हमारे आसन का उत्थान होने लगता है, क्योंकि आसन का उत्थान जब होता है, जब अग्नि और वायु का दोनो का समन्वय हो करके आन्तरिक और बाह्य जगत की अग्नि को त्याग देते हैं, और बाह्य अग्नि की जब ही तक उपासना की जाती है। जब तक हम आन्तरिक अग्नि को नहीं जानते, आन्तरिक अग्नि की और देखो, बाह्य अग्नि की सहायता से हम आन्तरिक अग्नि को जानते हैं, उस आन्तरिक अग्नि के मुनिवरों! देखो, वायु में उनका समन्वय कर दिया जाता है, वायु के और अग्नि के परमाणुओं का मिश्रण होता है, तो ज्योति जागरूक हो जाती है। वह ज्योति अखण्डतव में परणित हो जाती है मानो देखो, उस ज्योति का जानना उस ज्योति से मुनिवरों! देखो,

मानव का यह जो शरीर है, यह इतना मानो देखो, सूक्ष्म बन जाता है। उसमें स्थूलता तो रहती है। परन्तु सूक्ष्म पने के द्वारा मानो देखो, हम ब्रह्मरन्ध्र में जा करके क्योंकि देखो, ब्रह्माण्ड की और पिण्ड की कल्पना एक ही मानी गई है।

मेरे प्यारे! मानो देखो, जब ब्रह्मरन्ध्र में प्रवृत्ति को ले जाते हैं, मन का प्राण का दोनो का समन्वय हो जाता है। क्योंकि मन और प्राण ही दोनों शक्ति शाली हैं, मुनिवरों! देखो, पांचो प्राण मुनिवरों! एकाग्र हो जाते हैं, पांचो प्राण एक सूत्र में पिरोए जाते हैं, मुनिवरों! देखो, पांच उप प्राण ही मानो एक ही सूत्र में पिरोए जाते हैं, इन्द्रियाँ भी उसी सूत्र में पिरोई जाती हैं, सब मुनिवरों! देखो, एक सूत्र में आ जाते हैं तो मुनिवरों! देखो, यह मानव उस योगी का जो शरीर है वह बेटा! देखो, स्थूलतव में रह करके वह देखो, सूर्य यान बन जाता है। बेटा! आत्मा इसमें विराजमान हो करके मानो जब ओ३म् रूपी धागे में मानो एक सूत्र में पिरों देते हैं। तो बेटा! जब इच्छा प्रगट करो तो प्रभु को अपने में द्दष्टिपात करो, और प्रभु की सृष्टि का योगीजन दर्शन करने लगता है। अभिप्राय यह कि जिस प्रकार माता का प्रिय बालक क्षुधा से पीड़ित हो रहा है, मानो माता की लोरियों में परणित हो करके माता के सर्वत्र अङ्ग को द्दष्टिपात कर लेता है, उसी प्रकार मुनिवरों! यह जो प्रभु का जगत है, यह जो प्रभु का अङ्ग है, मानो देखो, आत्मा उस प्रभु को जान लेता है, प्रभु के सूत्र में अपने को पिरो लेता है। तो बेटा! उसका द्दष्टिपात करना उसके लिए सहज हो जाता है।

मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज हम देखो, उसी सूत्र में पिरोना चाहते हैं, आज हमें अपने को उसी सूत्र में पिरो देना चाहिए, जब तक हम अपने को सूत्र में नहीं पिरोयेंगे, जब तक मुनिवरों! हमारे मानव जीवन की कदापि कल्याण नहीं हो सकेगा। आओ, मेरे प्यारे!

आज मैं अधिक चर्चा प्रगट करने नहीं जा रहा हूँ, विचार यह कि आज हम ज्ञान के उस क्षेत्र में जाना चाहते हैं, मेरे प्यारे! ऋषिवर! जब हम मानो एक प्रभु को जान लेते हैं तो संसार हमारे लिए जानना कोई असम्भव नहीं रहता बेटा! विचार विनिमय आज बेटा! हम चर्चा कर रहे थे महर्षि भृगु मुनि जी महाराज की महात्मा भृगु मुनि महाराज बेटा! आसन पर विराजमान थे मुनिवरों! देखो, वह गान गा रहे थे, जटा पाठ में, घन पाठ और माला पाठ में वेदो का पठन पाठन कर रहे थे, मानो स्वर कर रहे थे, हृदय से गाया जा रहा था, मुनिवरों! देखो, नाद से गाया जा रहा था, हमारे यहाँ तो ऐसा माना गया है क्या आदि ब्रह्मा ने मुनिवरों! देखो, मानव को जब ज्ञान दिया तो मुनिवरों! देखो, ब्रह्मरन्ध्र में मानव के ब्रह्मरन्ध्र में जो एक नाद बजता है। एक स्वर होता है, एक ध्वनि होती है, उस ध्वनियों से बेटा! शब्दों का निकास होता है। उन्हीं शब्दों से मुनिवरों! देखो, मानव की वाणी की प्रतिभा बन जाती है, वाणी के उच्चारण करने की जो प्रतिभा है, उससे उत्पन्न होती है। विचार क्या कि मानव के ब्रह्मरन्ध्र में हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने दो प्रकार के हृदय माने हैं, बेटा! एक हृदय तो मुनिवरों! नाभि और कण्ठ के मध्य में रहता है, एक हृदय ब्रह्मरन्ध्र में माना है। ऋषि मुनियों ने परन्तु देखो, यह एक ही स्वीकार किया जा सकता है, **परन्तु देखो, एक ही हृदय का तारतम्य सर्वत्र शरीर में होता है परन्तु विशेषकर मानो देखो, नाभि और कण्ठ के हृदय विशेष माना गया है आज बेटा! मैं इस सम्बन्ध में हम अधिक विवेचना नहीं दे सकेंगे** विचार यह कि आज हम अपने उस प्यारे प्रभु की महानता का वर्णन कर रहे थे, उसके विज्ञान की विवेचना कर रहे थे, जिस प्रकार मुनिवरों! देखो, प्रभु नितान्तर है, उसी प्रकार उसका ज्ञान और विज्ञान भी मुनिवरों! देखो, नितान्तरता में परणित रहता है, इसका विज्ञान अनन्त है, अनन्तता में परणित रहता

है आज मुनिवरों! जब हम सूर्य मण्डल की यात्रा करते हैं, चन्द्रमा की यात्रा करते हैं, मङ्गल में जाते है, मानो शुक्र में जाते हैं, और शनि में जाते हैं, बुद्ध में जाते हैं, और भी मानो नाना प्रकार की लोको की यात्रा करने के लिए मानव तत्पर होता है। वहाँ के प्राणियों को भी दृष्टिपात करता है, कहीं कहीं पर ऐसा प्राणी रहता है, कहीं मुनिवरों! देखो, पृथ्वी मण्डल के प्राणियों से उनकी आकृति भिन्न होती है, उनका सूक्ष्मवाद भी भिन्न होता है, वहाँ का जैसा वातावरण होता है, उसी के अनुकूल मुनिवरों! देखो, उनका व्यवहार होता है। उनकी राष्ट्रीयता होती है, उनका व्यापार चलता रहता है, विचार यह मुनिवरों! अपने प्यारे महानन्द जी को कई काल में प्रगट कराया। मेरे प्यारे! महानन्द जी! ने सह मुझे यह निर्णय कराया कि आज का जो विज्ञान है, वह चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है, भौतिक विज्ञान आधुनिकता को जो विज्ञान है, मैंने अपने प्यारे पुत्र से कहा कि हे पुत्र! यह तो विज्ञान मानो चला ही जा रहा है, मुनिवरों! देखो, द्वापर के काल में किस प्रकार का विज्ञान था मुनिवरों! देखो, घटोत्कच्छ और भीम के यान मुनिवरों! देखो, अन्तरिक्ष में मुनिवरों! देखो, आज भी **चन्द्रमा के कक्ष के ऊपर ले भाग में भ्रमण कर रहे हैं जब वैज्ञानिक जाएगा इस पृथ्वी मण्डल का चन्द्रमा में जाएगा तो उन्हे वह यान आगे चल करके प्राप्त हो सकते हैं** बेटा! अभिप्राय यह मुनिवरों! देखो, करोड़ों वर्ष की आयु के यान मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ आदि ऋषियां ने मुनिवरों! देखो, निर्माण किए और उन वायु मण्डल में उपग्रह बना करके त्याग दिया, मानो बहुत से यान तो उन वैज्ञानिको के होते हैं, जो किसी की ध्रुव की परिक्रमा कर रहे हैं, कोई जेठाय नक्षत्र की परिक्रमा कर रहे हैं, मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार का विज्ञान तो बेटा! यह परम्परा से है। क्योंकि वेद परम्परा से है, तो वेद का विज्ञान भी बेटा! परम्परागतों से ही, माना गया

है।

आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर! क्योंकि वेद नाम तो प्रकाश को कहा गया है, मुनिवरों! वह जो प्रकाश है, वह तो परम्परा से है, क्योंकि प्रकृति का जितना भी परमाणुवाद है, अथवा जितना भी प्रकृतिवाद है, इसके अन्तर्गत मुनिवरों! सर्वत्र विज्ञान की परिक्रमा होती रहती है। आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर! आगे चल करके मुझे स्मरण आता रहता है, क्या प्रभु का जो मानो देखो, नक्षत्रवाद है, यह कितना विचित्र है, बेटा! एक दूसरा मण्डल एक दूसरे को सहायता दे रहा है, विचार आता है सूर्य मण्डल के अन्तर्गत करोड़ों मण्डल इस प्रकार के हैं, जो सूर्य मण्डल के हैं, जो सूर्य मण्डल की किरणों सहायता पा करके बेटा! क्रीड़ा कर रहे हैं। अपने अपने आङ्गन में भ्रमण कर रहे हैं, मुनिवरों! देखो, लगभग बृहस्पति की सहायता से ऐसे हैं। कई करोड़ मण्डल ऐसे हैं, जो उसकी सहायता से मुनिवरों! भ्रमण कर रहे हैं। जेठाय नक्षत्र हैं, जिसमें मुनिवरों! देखो, सहस्रो बृहस्पति समा जाते हैं, वह जो मानो जेठाय नक्षत्र है, वह उसके प्रकाश से उसकी क्रीड़ा से मुनिवरों! देखो, अरबों खरबों मण्डल उसकी सहायता से सहायता पा करके बेटा! अपने अपने आङ्गन में बेटा! परणित हो जाते हैं।

आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर! मैं बेटा! इस मानव प्रभु के विज्ञान में जाना नहीं चाहता हूँ, यह तो अनन्त है, जैसे बेटा! प्रभु अनन्त है, इसी प्रकार हम तो केवल संक्षिप्त बुद्धि से उसका केवल परिचय ही दे सकते हैं। मानो जानना तो बहुत ही असम्भव रहता है, जाना तो उसी काल में जाएगा जब हम पुनः से प्रभु की गोद में जायेंगे, प्रभु के आङ्गन में जाएंगे, उस विज्ञान को नितान्तरता में दृष्टिपात कर सकते हैं। आज तो बेटा! हम संक्षिप्त परिचय ही दे सकते हैं। आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज तो हमारा ऋषि क्या कह रहा है, वेद

का आचार्य क्या कह रहा है कि हम मानो प्रभु के विज्ञान में रमण करते चलें जाएं प्रभु के विज्ञान में जब हम पंहुचेंगें, तो हमें यह दृष्टिपात आयेगा प्रभु के विज्ञान में तो न तो अभिमान है, न मान है, क्योंकि प्रभु को पाना है, तो प्रभु! जैसा ही बनना है, क्योंकि प्रभु में न मान है, न अपमान है, न क्रोध है, न मुनिवरों! उसमें निराशा है। वह तो सदैव मुनिवरों! देखो, एक रस रहने वाला है, उसकी चेतना बनी रहती है, नम्र है, उदार है, इसी प्रकार हे मानव! यदि तुझे प्रभु को पाना है, तो उसी प्रकार का उदार बनना होगा। अन्यथा प्रभु को पा नहीं सकोगे। क्योंकि कठोरता में प्रभु नहीं होता, अभिमान में भी प्रभु नहीं होता, बेटा! प्रभु तो नम्रता में रहता है, प्रभु तो सदैव नम्र है, और मुनिवरों! देखो, आत्मवेत्ता चेतना है, मुनिवरों! देखो, चेतना से मिलान करने का प्रयास करते जाओ। आज बेटा! देखो, चेतना में चेतना का जब मिलान हो जाता है, तो उस माँ की मानो जिस प्रकार शिशु माता के अङ्ग को दृष्टिपात करता है। उसी प्रकार बेटा! हम प्रभु के अङ्ग को दृष्टिपात कर सकते हैं, और प्रभु के विज्ञान में हम रमण कर सकते हैं।

आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज मैं अधिक विवेचना देने नहीं जा रहे हैं, बेटा! विचार क्या क्या मुनिवरों! देखो, महर्षि भृगु मुनि इसी प्रकार जब नम्र हो करके जब गान गा रहे थे, तो मुनिवरों! देखो, गान गाते हुए मृगराज और सर्पराज उनके चरणों में ओत प्रोत रहते थे, क्योंकि जो नम्र है, प्रभु के राष्ट्र में बेटा! रात्रि नहीं होती, सदैव प्रकाश रहता है, उसके राष्ट्र में सदैव गान गाया जाता है। उसके राष्ट्र में मानो शोक नहीं होता, वह तो सदैव प्रसन्नता में रहता है। इसी प्रकार जो प्रभु के हृदय से अपने हृदय का मिलान करना चाहता है। **बेटा! उसकी प्रवृत्ति उसकी वाणी, उसकी वाणी में इस प्रकार का परमाणु उत्पन्न हो जाता**

है, क्या मुनिवरों! वह परमाणु वह मुनिवरों! देखो, उसकी जो आभा है, वह दूसरों के हृदयों को मोहित करने वाली होती है मेरे प्यारे! वह दूसरा हृदय इससे मोहित हो करके हिंसक प्राणी भी मोहित हो जाता है।

आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज हम अधिक विवेचना देना नहीं चाहते हैं, इस सम्बन्ध में विचार क्या कि आज हम अपने प्यारे प्रभु का गुणगान गाते हुए अपने देव की महिमा का गुणगान गाते हुए देव के विज्ञान को दृष्टिपात करते हुए हम अपने मानव जीवन को पवित्र बनाने का प्रयास करें यह है, बेटा! आज का वाक आज के वाक उच्चारण करने का हमारा अभिप्राय क्या आज बेटा! मैं मृत्यु के सम्बन्ध में कुछ विवेचना देने वाला था, परन्तु समय सूक्ष्म रह गया। विचार दे नहीं पायेंगे, परन्तु विचार यह कि हम यह कहा करते हैं, कि मृत्यु का अभाव हैं, संसार में। यह कहा ही नहीं करते हैं, राष्ट्रों में प्रत्यक्ष है, क्योंकि मृत्यु कोई वस्तु नहीं होती, एक समय बेटा! मुझे स्मरण है मुनिवरों! देखो, महर्षि पिप्लाद मुनि महाराज एक समय अपने समाज में से अपने गृह को प्रस्थान किया। वहाँ यह निर्णय था कि मृत्यु क्या है? तो बेटा! उस समय महर्षि पिप्लाद मुनि महाराज ने कहा कि मृत्यु का तो अभाव है, मृत्यु कोई वस्तु नहीं है, तो बेटा! विचार आया वह इस विचार को ले करके अपने गृह को प्रस्थान करने लगे जब गृह में प्रविष्ट हुए, तो उनका एक सात वर्षीय पुत्र था उसकी मृत्यु हो गई। जो विच्छेद हो गया, जब विच्छेद हो गया तो उनकी पत्नी व्याकुल होने लगी, वह देखो, मुद्गल गोत्र की कन्या थी, मुनिवरों! देखो, उसी परिवार में उसका जन्म हुआ था, महर्षि पिप्लाद मुनि बोले कि हे देवी! तुम व्याकुल क्यों हो रही हो? उन्होंने कहा भगवन! मेरा पुत्र मृत्यु को प्राप्त हो गया, उन्होंने कहा देवी! मैं तो अभी दार्शनिकों के समाज निर्णय दे करके आया हूँ कि मृत्यु कोई वस्तु नहीं होती,

मृत्यु का तो अभाव हैं, संसार में। उन्होंने कहा प्रभु! मैं क्या करूं? मेरा पुत्र था, अब मेरे समीप न रहा यह क्या है और इस मानव शरीर का निर्माण कैसे होता है जब मृत्यु नहीं होती तो वह क्या वस्तु थी जो मेरे समीप नहीं रहा उस समय कहा देवी! यह तो प्रत्येक मानव जानता है, यह जो मानव शरीर है, यह पञ्च महाभौतिक पिण्ड है, पञ्च महा भौतिक भूतों के परमाणु एकत्रित हो करके एक शरीर बन जाता है। आज मानो देखो, वह शरीर ही है, आज जो तुम्हे दृष्टिपात आ रहा था, वह परमाणुओं का समूह था, उन्हीं परमाणुओं के समूह से मानो तुम्हे वह पुत्र दृष्टिपात आ रहा था, उन्होंने कहा भगवन! मैं यह जानना चाहती हूँ क्या यह जो मेरा शरीर था, मानो जब यह शरीर इस रूप में नहीं था, मानो उसके पश्चात यह परमाणु कहां रहते थे, उन्होंने कहा देवी! जब यह तुम्हारा शरीर नहीं था, उससे पूर्व यही परमाणु माता के गर्भस्थल में, मानो नृत कर रहे थे और निर्माणवेत्ता तुम्हारे शरीर का निर्माण कर रहा था। जो माता के गर्भस्थल में थे, उन्हीं परमाणुओं से तुम्हारे इस मानव शरीर का निर्माण हो रहा था, उन्होंने कहा भगवन! जब माता का गर्भाशय नहीं था, उससे पूर्व यह परमाणु कहां रहते थे, उन्होंने कहा देवी! जब माता का गर्भाशय नहीं था, उससे पूर्व यह माता पिता के रजवीर्य के रूप में रहते थे, मानो उसी रूप में मानो जो वीर्य की रक्षा करता है, वीर कहलाता है, मुनिवरों! देखो, जो ब्रह्मचारिणी बन करके देखो, जो रज की रक्षा करती है, वह महान तपस्विनी कहलाती है, ब्रह्मचारिणी कहलाती है, इसी प्रकार मानो देखो, माता पिता के रज वीर्य के रूपों में जो परमाणु विराजामन थे। वहाँ नृत कर रहे थे, और वहाँ उस मानव को श्रेष्ठ बना रहे थे, उन्होंने कहा भगवन! जब यह माता पिता भी नहीं थे, तो उससे पूर्व यह परमाणु कहां थे? उन्होंने कहा हे देवी! जब माता पिता नहीं थे,

तो यह परमाणु कुछ अन्न में थे, नाना प्रकार की वनस्पतियों में विराजमान थे, यह परमाणु मानो अन्न में रमण कर रहे थे, यही परमाणु वनस्पतियों में रमण कर रहे थे मानो यह वहाँ रमण करते... अश्रोव्य शेष अनुपलब्ध।

3 ०७ ०८ १९७३ आध्यात्मिकवाद व भौतिकवाद दोनों सामान्यतव हो करके समाज का उत्थान करें।

जीते रहो, देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर, वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस परमपिता परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान निहित रहता है क्योंकि परमपिता परमात्मा सदैव विज्ञान में रमण करता रहता है, अथवा उसका विज्ञानमयी जो स्वरूप है, वह सदैव आभा से युक्त रहता है, जब हम उस ज्ञान और विज्ञान पर विचार विनिमय करने लगते है तो प्रकृति का एक एक परमाणु, हमें ज्ञान और विज्ञान में ओत प्रोत होता दृष्टिपात आता है हम किसी भी पदार्थ को जब दृष्टिपात करते, लोक लोकान्तरों की उड़ान उड़ने लगते है तो वहाँ सर्वत्र जगत हमें एक विज्ञानशाला सी दृष्टिपात आती है, परमात्मा का यह जो जगत है, इसको नाना ऋषियों ने भिन्न भिन्न प्रकार से इसका अन्वेषण किया, अथवा इसकी मीमांसाएं की और उसका भिन्न भिन्न रूपों से नामोकरण भी किया गया। जैसे बेटा! आचार्यों ने इसे अनुसन्धान वेदी कहा, किन्हीं आचार्यों ने इसे विज्ञानशाला कहा है, किन्हीं आचार्यों ने बेटा! इस संसार को कर्म क्षेत्र माना है, परन्तु इस संसार को भिन्न भिन्न प्रकार से और भिन्न भिन्न आचार्यों ने बेटा! अपना विचार व्यक्त किया। नाना प्रकार के, विचारधाराएं,

परम्परागतों से ही, आचार्यों के प्रायः मस्तिष्कों में रही है। आज बेटा! मैं उस विज्ञानशाला में तो जाना नहीं चाहता हूँ, परन्तु ये विचार अवश्य करना चाहता हूँ, कि यह जो मनस्त्व जगत है, यह मानो मननशील है और प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या, जब इस संसार को मननशील हो करके दृष्टिपात करते हैं, अथवा उसका मनन करते है, तो यह जगत, एक प्रकार का मननशील क्षेत्र है, तो मेरे प्यारे! आज हमें कौन से मार्ग को अपनाना है, बेटा! आचार्यों ने भिन्न भिन्न प्रकार की कल्पना की है, किन्हीं आचार्यों का यह भी मत है कि यह जो संसार है यह कल्पवृक्ष है। यहाँ मानव जैसी कल्पना करता है वैसा ही प्रायः बनता चला जाता है। उससे देखो, यह महापुरुषों का मिलान, वैसी प्रकार की विचारधारा उसके समीप आनी प्रारम्भ हो जाती है। तो मुनिवरों! इसको भिन्न भिन्न आचार्यों ने भिन्न भिन्न प्रकार की कल्पना की। अब हमें विचारना है, कि हम इस संसार को क्या स्वीकार करें? विज्ञानवेत्ता तो विज्ञान में रमण करते हैं, कल्पना वाले नाना प्रकार की कल्पना करते है, परन्तु इसमें भिन्न भिन्न प्रकार का जो मानव के समीप विचारणीय प्रश्न उत्पन्न होते रहते है, यह विचारों में, परणित न होते हुए हमें यह विचारना है, कि यह जगत हम क्या स्वीकार करते है?

चेतना का आश्रय

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो यह कहा करते थे कि यह संसार तो विचारको का जगत है, विचारकों के लिए भिन्न भिन्न प्रकार की सामग्री प्राप्त होती है, परन्तु यहाँ जो प्रत्यक्ष वादी है जैसे महर्षि कपिल जी हुए, इससे पूर्व काल में भी देखो, प्रवाहण और शिलभ हुए जैसे भारद्वाज हुए, उनका प्रत्यक्षवाद के सम्बन्ध में, उनका प्रत्यक्षवाद पर विचारना है परन्तु यहां ऋषियों ने कहा कि यह सर्वत्र जितना भी विज्ञानशाला है, कल्पवृक्ष है,

विचारशाला है मानो यह सब सर्वत्र मानो प्रत्यक्षवाद के गर्भ में परणित हो जाता है, इनमें सर्वत्र में ही प्रत्यक्षवाद है। मेरे प्यारे! आज इस सम्बन्ध में मैं विवेचना नहीं दूंगा, केवल विचारना यह है कि हम अपने मानव समाज को कैसे ऊंचे ऊर्ध्वा मार्ग पर ले जा सकते हैं। यह प्रसंग प्रत्येक मानव के मस्तिष्क में आचार्यों के मस्तिष्कों में रहा है। आचार्यों ने इसके ऊपर अनुसन्धान करते हुए कहा, क्या यदि हम संसार सागर से पार होना चाहते है, तो हमें उस चेतना का आश्रय लेना होगा। उसके आश्रित बनना है क्योंकि यदि हम उसके आश्रित नहीं बन पाते हैं, तो उसकी जो रची हुई वस्तु है, उसको हम अच्छी प्रकार जान नहीं पायेंगे, और जब तक हम उस वस्तु को जान नहीं पायेंगे जब तक हमें कोई मार्ग प्राप्त नहीं होगा। हम किसी भी मार्ग पर जाएं, आध्यात्मिक मार्ग में जाना चाहते है, तो वह जो प्रकृति का क्षेत्र है, उसके मार्ग पर मार्ग से ही भ्रमण करके हमें आध्यात्मिक मार्ग में जाना है, क्योंकि हमें उस मार्ग में, नाना प्रकार की विडम्बना आएंगी, नाना प्रकार की हमें असुविधाएं प्रायः प्राप्त होती है। परन्तु उन सब असुविधाओं को हम प्राप्त करके हम उसका विचार मग्न हो करके, और चेतना का आश्रय ले करके बेटा! हमें त्यागना है। परन्तु यह त्यागी जाती है।

मेरे प्यारे! मैं आज इस उड़ान को उर्ध्वा नहीं ले जाऊंगा, परन्तु देखो, विचार यह कि हम आध्यात्मिक मार्ग पर जाना चाहते हैं, तो हम प्रकृतिवाद को उस क्षेत्र से जाना होगा, जिस क्षेत्र में हम प्रत्यक्षवाद का दिग्दर्शन करते है, और हम इस सूक्ष्मवाद में जब परणित हो जाते है, तो हमारा जीवन भी सूक्ष्मतम् बन करके सूक्ष्मतव को जानते हुए बेटा! हम परमात्मा को प्राप्त हो जाएं, ऐसा सदैव हमारे मानवीय जीवन में प्रत्यक्ष और मानवीय क्षेत्र में भी यह वाक प्रायः स्वीकार

होता है।

मेरे प्यारे! आज का विचार विनिमय क्या हम अपने समाज को राष्ट्रतव को ऊँचा बनाना चाहते है बेटा! विचार क्या हमारा वेदमन्त्र कह रहा था, कि जैसे कल के सुन्दर समय में, महाराजा पुलस्त्य मुनि की चर्चा प्रगट कर रहे थे परन्तु महात्मा पुलस्तय ऋषि महाराज जिनका जीवन सदैव तपस्या में परणित रहा। परन्तु उनके ममतव आ जाने पर, उनकी प्रतिष्ठा में, सूक्ष्मवाद आया। जो महापुरुषों की वाणी को स्वीकार नहीं करता, उनकी वाणी को ममतव के आश्रित हो करके समाप्त कर देता है। उस मानव की प्रतिष्ठा में अन्तर्द्वन्द्व आ जाता है, अन्धकार छा जाता है। मेरे प्यारे! महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज और कुक्कुट मुनि का दोनों का शास्त्रार्थ होता रहा विचार विनिमय होता रहा महात्मा पुलस्त्य मुनि महाराज अध्ययनशील थे, तपस्वी थे, परन्तु दोनों का विचार मग्न होते हुए, उन्होंने एक ही निर्णय किया, ऋषि असुतम पुलस्त्य ने यह कहा हे ऋषिवर! मैं तुम्हारे वाक को स्वीकार करता हूँ, मेरे में ममतव आया। तो ऋषि ने कहा कुक्कुट जी ने क्या महाराज जब तुम्हारे में ममतव आ गया तो राष्ट्र का जन जीवन कैसे पनपेगा? पुलस्त्य ऋषि महाराज बोले कि महाराज! उस विषय को मैं नहीं जानता। तो महात्मा ने कहा कि हे ऋषिवर! तुम्हारे इस ममतव का परिणाम यह होगा। क्या राष्ट्र में सर्वत्र सामग्री होते हुए, अग्नि के विशाल आंगन में, यह राष्ट्र परणित हो जाएगा। मेरे प्यारे! यह जब उन्होंने कहा आगे चल करके यह जो राष्ट्र लंका का राष्ट्र स्मरण आता रहता है। मेरे प्यारे! वही हुआ, जो ऋषि ने कहा, मैं बेटा! सूक्ष्म सी उनके चरित्र और वह सम्बन्धित चर्चाएं जो मैंने कई काल में भी प्रगट की है आज भी बेटा! में

उस चर्चाएं को करने चला हूँ।

रावण राष्ट्र में दार्शनिक विमर्श

महात्मा कुकुट मुनि महाराज, महर्षि शाण्डिल्य मुनि महाराज दोनों का विचार विनिमय हो रहा था, परन्तु विचार विनिमय कर रहे थे और उन्होंने एक वाक माना क्या महाराज मैं यह जानना चाहता हूँ कि साधकों के लिए जो साधक हमारे द्वारा आते है विवेकी बन करके आते है उनके लिए कोई वेद में कोई ऐसा मन्त्रार्थ हो जिससे उसका उच्चारण करके उसकी एक माला बनाई जाए। जैसे धागे में मन के होते है तो महात्मा कुक्कुट जी ने शाण्डिल्य जी से कहा कि महाराज! मेरे विचार में तो यह आता हे कि एक दार्शनिकों की सभा हो और दार्शनिकों की सभा में यह विचार विनिमय होना चाहिए।

मेरे प्यारे! यह विचार विनिमय ही हो रहा था परन्तु उनके आश्रम में यह मानो प्रसारण हुआ कि राजा रावण के यहाँ मानो सब ऋषि मुनियों की एक सभा है, और सब ऋषि मुनियों को, दार्शनिकों को राजा रावण की लंका में प्रविष्ट होना चाहिए। मेरे प्यारे! महात्मा कुक्कुट ने कहा कि मुझे तो समय प्रर्याप्त नहीं है। शाण्डिल्य जी आप पधारे। और वहाँ जो विचार विनिमय होगा वह मुझे वर्णन कराओ। महर्षि शाण्डिल्य और मुद्गल इत्यादि ऋषियों का बेटा! वहाँ से गमन हुआ। परन्तु लंका में महापुरुषों की एक सभा हुई। मेरे प्यारे! उस सभा का सभापतितव महात्मा भुञ्जु को चुना गया। जब महात्मा भुञ्जु को सभापतित्व का निर्माण हुआ, तो महात्मा दधीचि ने यह कहा क्या महात्मा भुञ्जु इस सभा के लिए अधिकृत नहीं हैं न यह सुशोभित होते है। महात्मा मुनिवरों! देखो, उन्होंने अप्रता ब्रह्मे दधीचि के कथनानुसार, महात्मा भुञ्जु ने, उस आसन को त्याग दिया और त्याग देने के पश्चात

उस आसन पर महर्षि भृगु जी को नियुक्त किया। उस समय महर्षि भृगु जी की नियुक्ति होने के पश्चात्, ऋषि मुनियों में हर्ष ध्वनि होने लगी। मेरे प्यारे! अब यह हर्ष ध्वनि क्यों हुई? जो सत्यवादी होता है, जो महापुरुष तपस्वी होता है, वह जब उसको जो अधिकार प्राप्त होना, वह प्राप्त हो जाता है। तो मुनिवरों! वहाँ महापुरुषों ने हर्ष ध्वनि हुई। उस समय मेरे प्यारे! देखो, राजा रावण, उनके महामन्त्री जन और मुनिवरों! देखो, नाना दार्शनिक समाज विराजमान थे। राजा रावण ने नत मस्तिष्क हो करके यह कहा हे भगवन! हे दार्शनिकों! मैं यह तुम्हारी सभा में, यह जानने के लिए उपस्थित हुआ हूँ, कि इस राष्ट्र के जन जीवन को ऊँचा बनाया जाए, और राष्ट्र का जन जीवन उस काल में ऊँचा होता है जबकि महापुरुषों की अनुपम कृपा होती है।

मेरे प्यारे! जिस समय, यह कहा तो महात्मा दधीचि ने महर्षि अङ्गिरस से कहा क्या महाराज! इसका उत्तर दिया जाए। उन्होंने कहा इसका उत्तर तो केवल यही है, क्या यह जो राष्ट्र का प्रवाह चल रहा है, यह प्रवाह मुझे तो आन्तरिक दशा में कोई प्रिय नहीं प्रतीत हो रहा। क्योंकि इससे तो ऐसा प्रतीत होता है, जैसा राष्ट्र की विचारधाराओं में, अपना परिवर्तन कर लिया, क्योंकि राष्ट्र की जो विचारधारा होती है, वह एक ही मानो सूत्र में होती है, और जहाँ राष्ट्र की धारा, भिन्न भिन्न सूत्रों में दृष्टिपात आ रही है, जब मुनिवरों! देखो, अङ्गिरस ने यह कहा, तो उस समय मेरे प्यारे! महात्मा भृगु ने कहा, चलञ्चम् ब्रव्हे कृता अस्वान ब्रह्मे कृति आवान, मुझे यह राष्ट्र ऐसा प्रतीत होता है, जैसे इस राष्ट्र में, मानवीयता का कुछ ह्रास हो रहा है। परन्तु हम मानवता की स्थापना करने के लिए अवश्य प्रेरणा दे रहे हैं। हे रावण! तुम अपने राष्ट्र में, मानवता की स्थापना करो। राजा रावण ने कहा भगवन! मैं किस

प्रकार कर सकूंगा? उन्होंने कहा कि तुम्हारे राष्ट्र में यह जो उड़ान उड़ी जा रही है, चन्द्र यानो की, और शुक्र यानो की, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में जाने वाले यानों में, तुम्हारे यहा वैज्ञानिक प्रयास कर रहे हैं, परन्तु इन यानों में जाना तो प्रिय है, परन्तु इसके साथ में तुम्हारे राष्ट्र का राष्ट्रीयकरण होना चाहिए राष्ट्र में एक मानवीयता होनी चाहिए, और मानवता की ह्रास दृष्टिपात कर रहा हूँ। मेरे प्यारे! जब यह वाक उनके मस्तिष्क में आया राजा रावण ने कहा भगवन! मैं किस प्रकार इस लंका को ऊँचा बना सकता हूँ? उन्होंने कहा कि तुम लंका को ऊँचा इसके चरित्र से बनाओं, और अनाधिकार अधिकार को विचारो। मेरे प्यारे! यह सभा थी इसमें और भी तथ्यों पर विचार होना था, और वह विचारधारा क्या थी कि मेरे राष्ट्र में विज्ञान कैसे पनपे? क्योंकि मेरे राष्ट्र में भिन्न भिन्न प्रकार की शालाएं हैं, और उन शालाओं में अन्वेषण होते है, उन शालाओं में जो अन्वेषण हुए, मानो वह अन्वेषण, जैसे वायु का अन्वेषण है, अग्नि का है, जल का है, और पृथ्वी का है, मानो उनके तथ्यों पर विचार विनिमय किया जा रहा है। मेरे जो जेठे पुत्र है इन्द्रजीत जिनको मेघनाथ कहा जाता है भगवन! वह सदैव वायु के सम्बन्ध में वायु के परमाणुवाद के सम्बन्ध में विचार विनिमय करते रहते है। प्रभु! आज मेरा विचार धाराओं में परिवर्तन आ रहा है, परन्तु वह जो प्रतिभा और प्रयत्न जब दोनों का समावेश होगा, उस काल में मैं अपने राष्ट्र को ऊँचा बना सकूंगा।

मेरे प्यारे! यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार का विचार विनिमय हुआ परन्तु राजा रावण के प्रत्येक गृह में अनुष्ठान होने लगे, याग होने लगे मेरे प्यारे! देखो, सभा में कोई वास्तविकता का निर्माण नहीं हुआ जब निर्णय नहीं हुआ तो ऋषि मुनि अपने अपने आसन पर उन्होंने प्रस्थान किया परन्तु राजा रावण के राष्ट्र में तो

वास्तविकता का निर्णय नहीं हुआ उस निर्णय न होने का परिणाम क्या था क्योंकि रावण उस राष्ट्र का अधिकार ही नहीं था क्योंकि जिस काल में जिस समाज में अधिकार और अनाधिकार को विचारा नहीं जाता उस समाज में बेटा! प्रायः चरित्र का ह्रास हो जाता है मेरे प्यारे! जब अधिकार को वस्तु प्राप्त होती है उसका यदि सदुपयोग करता है जैसे मेरी प्यारी माता है परन्तु माता को भी माता बनने का अधिकार होता है और पितर को भी पितर बनने का अधिकार होता है वैज्ञानिक को भी वैज्ञानिक बनने का अधिकार होता है राजा को भी राष्ट्रीयकरण करने का अधिकार होता है। और जब मुनिवरों! अनाधिकार चेष्टा की प्रदान की जाती है तो वहाँ सुशीलता समाप्त हो जाती है। महानता का विनाश हो जाता है।

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है जब मैं माताओं के ऊपर विचार विनिमय करने लगता हूँ माता वसुन्धरा के सम्बन्ध में जब यह विचारता हूँ कि माता कौन है? माता तो वसुन्धरा होती है परन्तु हे मेरी मां! तू वसुन्धरा है, तू अपने गर्भस्थल में हमें बनाने वाली है और हम तेरे गर्भस्थल में एक महानता को प्राप्त करते है मेरे प्यारे! वह माता है जो माता बनना जानती है परन्तु माता कौन होती है जो अपने हृदय को जानती है माता वह जानती है माता वह कहलाती जो अपना आन्तरिक श्रृङ्गार को रत्त रहती है जिस श्रृङ्गार में आभूषण में रत्त रहती है कौन सा आभूषण अपनाना है। हे मां! तू वसुन्धरा है वेद ने तुझे वसुन्धरा और देवी कहा है। मानो तू श्रृङ्गार से सुसज्जित है, परन्तु वेद का ऋषि कहता है, श्रृङ्गार माताओं के द्वारा होना चाहिए, और श्रृङ्गार से सुसज्जित होनी चाहिए। परन्तु मां तूझे ममतव बनने के लिए कौन से श्रृङ्गार को अपनाना है? मेरे प्यारी माता को, उस श्रृङ्गार को अपनाना है, उस आभूषण को अपनाना है जिस आभूषण को अपनाने

के पश्चात हम आभूषण को बाह्य जगत में अर्पित कर दे।

माता का शृङ्गार

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है बेटा! जब महात्मा शाण्डिल्य मुनि महाराज मुनिवरों! देखो, शाण्डिल्य क्या? बहुत परम्परा का इतिहास, मुझे साहित्य अपनाना है। बेटा! जब माता के गर्भस्थल में, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज विराजमान थे, महर्षि वशिष्ठ मुनि की माता का नाम मामकृति था मानो मामकृति के द्वितीय स्थली में, उनका नाम ऊषा था, ऊषा कृति मानो देखो, माता ऊषा के गर्भ में, जब मुनिवरों! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि का प्रवेश हुआ, माता गायत्री और छन्दों का पठन पाठन करती थी। मेरे प्यारे! वह विद्या रूपी श्रृङ्गार को अपनाने लगी। जब माता वेदों का अध्ययन करती, जब विशेष कर गायत्री और गायन रूपों से गाती, तो इस शब्द ऐसा अप्रिय नहीं आता था श्रोत्रों में जिससे बालक के अन्तःकरण में अशुद्धता प्रदान हो जाएं। हे मेरी मां! तू कैसी भोली है मां! तेरे प्रभु कितना निकट है, निर्णाणवेत्ता, निर्माण कर रहा है। परन्तु मां को ज्ञान नहीं होता, मेरे प्यारे! महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज, जब माता के गर्भस्थल में अध्ययन कर रहे थे, क्योंकि माता, जिस श्रृङ्गार को अपनाती है, बालक उसी श्रृङ्गार से युक्त हो जाता है। मेरे प्यारे! माता के गर्भस्थल में, प्रत्येक माह में, प्रत्येक प्रकार का अनुसन्धान करना, नाना प्रकार का भोजन, नाना प्रकार की औषधियों का पान करना। मैंने बहुत पुरातन काल में बेटा! इसकी विवेचना की, तो माता ऊषा, सदैव उनका कार्य माता उषा इसलिए कहते है क्योंकि उषा काल में, आसन को त्याग करके वह सदैव मानो गायत्री और छन्दों का पठन पाठन करती, अपनी अन्तर्भाव से, आन्तरिक जगत को ऊँचा बनाया। हे मां! तेरा आन्तरिक भाव

क्या है? आन्तरिक आभूषण है कि तेरे चित्त में शान्ति होनी चाहिए। तेरे चित्त में करूणा होनी चाहिए, माता तेरे चित्त में मानो संसार का वैभव नहीं होना चाहिए। तू जब वेद रूपी गायत्री रूपी आभूषण को अपना करके, मानो अपने मस्तिष्क की ज्योति का ध्यान करती है, तो मां तेरे गर्भ से उत्पन्न होने वाले बालक ब्रह्मवेत्ता बनते हैं।

मुनिवरों! मुझे स्मरण है माता गार्गी गायत्राणी मुनिवरों! देखो, नग्न रहती थी मेरे प्यारे! जब वह नग्न रहती तो एक समय क्योंकि मुनि महाराज यह विचार विनिमय करते कि मैं आज की माता से कुछ प्रश्न करूँ। मेरे प्यारे! जब वह उनके द्वार पर पंहुचें तो वह भयंकर वनों में आश्रम में, नग्न रहती थी, विवेक था उसके द्वारा ऋषि स्वाति ने कहा मातेश्वरी! तुम नग्न क्यों रहती हो? मेरे प्यारे! उस समय ऋषि कन्या ने कहा देवी! ने पुत्री अब्रहे ब्रह्मवेत्ता ने कहा हे ऋषिवर! संसार में कोई नग्न रहता है? उस समय कहा हे मातेश्वरी! मैं आपको दृष्टिपात करता हूँ। उन्होंने कहा हे ऋषिवर! यह नग्नता नहीं है नग्न प्राणी वह होता है, जिसकी इन्द्रियाँ अनुशासन में नहीं होती। मानो जिसके मन में चञ्चलता होती है, हे ऋषिवर! वह संसार में सदैव नग्न रहता है। तुम मुझे नग्न उच्चारण कर रहे हो। प्रत्येक इन्द्रियों के ऊपर प्रत्येक देवता विराजमान है, और वह देवता यदि देववत का कार्य कर रहा है, तो वह वस्त्रधारी भी वस्त्रों को न धारण करने वाला भी, वस्त्रों को धारण कर रहा है। हे ऋषिवर! अस्वतम् आन्वतम जमदग्नि गोत्र में उत्पन्न होने वाले ऋषि! मैं यह तुम्हें उच्चारण कर रही हूँ कि मानव का आभूषण क्या है? मानव का प्रत्येक इन्द्रिय के विषयों का ज्ञान होना चाहिए। और उसके ज्ञान के साथ में हवि देने वाला हृदय रूपी जो, यज्ञ वेदी में, याग करने वाला याज्ञिक हो। तो वह मानव वास्तव में स्वर्ण के आभूषण का कहलाता है। हे

ऋषिवर! मानो देखो, मैं नग्न नही हूं मैं नग्न दृष्टिपात हो रही हूँ। परन्तु देखो, केवल मेरी इन्द्रियों को, इन्द्रियों के ऊपर वस्त्र धारण करने को, तुम वस्त्र धारी उच्चारण कर रहे हो। यह मुखारबिन्द से शोभा नहीं दे रही है। मानो देखो, विचार यह है कि प्रत्येक इन्द्रियाँ पर ज्ञान रूपी वस्त्र होना चाहिए, यदि इन्द्रियों पर ज्ञान रूपी वस्त्र नहीं होगा, परन्तु उस मानव प्रकृति के वस्त्रों को धारण करने वाला, प्राणी भी नग्न का नग्न ही रहता है।

तो इसीलिए विचारा जाए संसार में मुनिवरों! नग्न कौन है? चाक्राणी ने कहा ऋषिवर! मैं नग्न तुम्हे दृष्टिपात हो रही हूँ। परन्तु विवेक में जाओ, विचारकों के समक्ष जाओ, तुम्हें यही प्राप्त होगा। तो मेरे प्यारे! यह माताओं के सम्बन्ध में उच्चारण कर रहा था। माँ! तेरा जो आभूषण है, वस्त्र भी होना चाहिए मैं इसका विरोधी नहीं हूँ, यह तो मैंने कुछ विवेक की चर्चा प्रगट की। परन्तु वस्त्र भी धारण करना चाहिए, परन्तु विशेषकर मानव को ज्ञान होना चाहिए, और अधिकार होना चाहिए। मेरे प्यारे! जब ज्ञान रूपी, प्रतिभा को हम अपनाते है, तो हमारा जीवन वास्तव में महान और पवित्र बनता चला जाता है।

मेरे प्यारे! माता ने, जब यह ऋषि से कहा तो ऋषि अपने आसन को चले गए प्रस्थान किया। परन्तु मैं उच्चारण कर रहा था महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के जन्म की चर्चा। मेरे प्यारे! जब माता, माता बन जाती है और वह गृह का अधिकार प्राप्त हो जाता है। मेरे प्यारे! वह माता इस समाज और राष्ट्र को उन्नत बनाती है मेरे प्यारे! महानन्द जी! ने एक समय कहा, कि जिस काल में, मुनिवरों! माताओं के श्रृङ्गार पर हनन होना, हनन होने वाले प्राणी उत्पन्न हो जाते है, तो हे मां! यह दोष माता का है। यह मानव का नहीं है, क्योंकि निर्माण तो माता के गर्भस्थल में होता है। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि मुनियों ने विज्ञान में परणित किया, बालक

का निर्माण करने वाली मां है, यदि वह कामातुर में परणित करती है, तो यह माता का ही दोषारोपण है। मेरे प्यारे! हे मां! तेरे श्रृङ्गार को हनन करने वाला इस संसार में उत्पन्न हो जाए, परन्तु यह माता का ही दोष है। यह प्राणी, मानव का दोष नही है यह मानवों का क्या दोष होगा मानो निर्माणवेत्ता जब निर्माण अच्छी प्रकार कर लेती है, विचारों से ही, निर्माण कर लेती है, निर्माणवेत्ता तो प्रभु है। परन्तु निर्माण जिस स्थली पर होता है, विचार की सामग्री देना, माता का कर्तव्य है। मेरे प्यारे! मैं आज इस सम्बन्ध में विचार मग्न होने नहीं जा रहा हूँ, विचार देने का अभिप्राय यह, कि महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के, जीवन में, माता ने ऐसी प्रतिभा, ओत प्रोत कराई, क्या उनके चित्त में अशान्ति नहीं होती। ब्रह्मवेत्ताओं में भी वह ब्रह्मवेत्ता चुने गएं। मेरे प्यारे! वह जब इसी प्रकार के महान होते।

आज मैं अधिक विवेचना तो देने नहीं आया हूँ विचार विनिमय यह कि यह जो संसार है, यह मुनिवरों! एक प्रकार का विज्ञान क्षेत्र है अनुसंधान करने वाली, अनुसंधान शाला है। यहाँ अनुसंधान होना चाहिए, मेरे प्यारे! यहाँ जितना भी विवाद होता है, वह अधिकार व अनाधिकार के ऊपर हुआ करता है। मुनिवरों! देखो, जितने भी राष्ट्र में, वाद होते है मानो समाज में वाद होते है, अनाधिकार अथवा अधिकार के ऊपर विवाद मानो देखो, उनका जगत प्रारम्भ होता है, मेरे प्यारे! मैं इस विचार में जाना नहीं चाहता हूँ, मैं यह तुम्हें उच्चारण करना चाहता हूँ, हे माता! तू वशिष्ठ जैसे महापुरुषों को जन्म दे। जो राम जैसे शिष्य को चरित्रवान बना जाए। जो लक्ष्मण जैसे को ऊँचा बना सके, मेरे प्यारे! मित्रता की प्रतिभाशाली जगत को बना सके, मेरे प्यारे! कैसी मित्रता? तुम्हें स्मरण होगा कि शत्रु को भी जो मित्र बनाने वाले हो, शत्रु को कैसे मित्र

बनाया जाता है।

महर्षि वशिष्ठ

बेटा! मैंने कई काल में, तुम्हें वर्णन करते हुए कहा है कि महाराजा! वशिष्ठ मुनि महाराज बेटा! आनन्द में विराजमान थे। माता अरूण्धती, वशिष्ठ मुनि महाराज दोनों का विचार विनिमय होता रहता। परन्तु इसी आभा को ले करके, महाराजा विश्वामित्र ने यह विचारा कि मैं गायत्राणी छन्दों का गान गाऊं, क्योंकि मुझे इस तप को प्राप्त करना है, जिस तप के कारण, मानो कामधेनु नाम का पशु भी, जिसकी रक्षा करने वाला हो। क्योंकि वशिष्ठ मुनि महाराज के आश्रम में, कामधेनु गऊ थी, जो इन्द्रपुरी से, जिनका महाराजा इन्द्र से उन्हें प्राप्त हुई। मैंने बेटा! उससे पूर्व शब्दों में कहा है, कि एक सौ एक समय अश्वमेध याग कर लेता है, बेटा! वह इन्द्र बन जाता है। परन्तु वह उस मानो वशिष्ठ को, महाराजा इन्द्र से जो कामधेनु प्राप्त हुई है, देववत्त को प्राप्त हुई, मुनिवरों! वह कामधेनु गऊ थी, जो बेटा! देखो, महर्षि विश्वामित्र के सैनिकों पर आक्रमण किया। परन्तु राष्ट्रीय नियम परम्परागतों से यह रहा है कि हम हमारे यहाँ, परम्परागतों में बेटा! यह नियमावली रही है। राजा जब अपने राष्ट्र का नियम बनाते तो याग करते विवेकी पुरुष उनके द्वारा होते तो राजाओं के यहाँ सबसे प्रथम लेखनी में बद्ध होता है क्या हम जिस प्राणी को जीवित नहीं बना सकते उस प्राणी को हनन हम भी नहीं कर सकते कितना ऊँचा उनका नियम प्रथम था राजाओं के यहाँ यह अङ्कित रहता है परन्तु यह क्यों क्योंकि राजा बुद्धिमान होने चाहिए। परन्तु वह राजा जो अहिंसा परमोधर्म की स्थापना करता है, और **अहिंसा परमोधर्म में केवल यही नहीं आता कि हम पशुओं को नष्ट करने वाले न बने, जब जलचर प्राणियों को नष्ट करने वाले न बने। क्योंकि**

परमात्मा के विश्वासी न बने परमात्मा ने जिन प्राणियों को उत्पन्न किया है, मानो जिन प्राणियों को प्रभु ने उत्पन्न किया है। प्रभु ही तो निर्माण करने वाला हो उसके नियम के अनुसार हनन होता है कोई मानव इस संसार में प्राण नहीं दे सकता, किसी प्राणी को जीवित नहीं बना सकता, हे मानव! इसलिए तुझे किसी मानव के प्राणों का हनन भी करने का अधिकार भी तुझे प्राप्त नहीं होता। मेरे प्यारे! मानो जितने भी प्राणी! हे प्रभु के राष्ट्र में, भिन्न भिन्न प्रकार का आहार है, जिस प्रकार का उसका आहार है, उसी प्रकार की उसकी रचना है, मेरे प्यारे! राजा के राष्ट्र में, यह नियम होता है सबसे प्रथम, तो कामधेनु गऊ ने जब आक्रमण किया, तो उसको नष्ट नहीं किया, परन्तु यह विचारा राजा ने कि मैं उस तप को करूंगा, जिस तप के कारण कामधेनु भी रक्षा करने वाली हो।

तो महर्षि विश्वामित्र ने बेटा! महान तपस्या की, अखण्ड तपस्या प्रारम्भ की, उस तप का परिणाम यह हुआ, कि वह तपस्वी बने, परन्तु वह अस्त्रों शस्त्रों से युक्त हो करके, अश्व पर अपना अश्वत होते हुए यह विचारा कि अब मैं वशिष्ठ के द्वार पर चलूंगा, क्योंकि ब्रह्मवेत्ताओं में वही ब्रह्मवेत्ता है। और जो निर्णय किया, ब्रह्मवेत्ताओं ये भी क्या जिसको वह ब्रह्मर्षि उच्चारण करेंगे, उसको सब ब्रह्म ही उच्चारण करो। परन्तु वह उनके आश्रम में प्रविष्ट हुए, और उन्होंने उन्हें ब्रह्मर्षि के स्थान पर राजर्षि कहा। आभूषणों से युक्त थे, उन्होंने कहा ब्रह्मा गतप्रव्हे ब्राह्मणा हे ब्राह्मण! तूझे इतना अभिमान, परन्तु जब यह वाक उनके मस्तिष्क में आया, इतने अभिमान की मात्रा, मेरे अवृतो में प्राप्त हो गई है, उस समय मुनिवरों! विश्वामित्र ने, उनके एक शिष्य को आश्रम मानो वह तपस्या कर रहे थे, अब विद्या अध्ययन कर रहे थे परन्तु तपस्वी बने। मेरे प्यारे! उनको अपने अस्त्रों शस्त्रों से विनाश को प्राप्त हो गएं।

राष्ट्रीय नियम के विरुद्ध भी, तपस्या के नियम के विरुद्ध भी। परन्तु उन्होंने अपने आसन को गमन किया। परन्तु ऋषि वशिष्ठ का हृदय कुछ अशान्ति में परणित नहीं हुआ, सान्त्वना रही, उनके हृदय में, क्योंकि ब्रह्मवेत्ता वही होता है, जो ब्रह्म को जानता है, और ब्रह्मा की सृष्टि को जानता है, परन्तु ब्रह्म की सृष्टि में विडम्बना क्या है? क्या चञ्चलता है? परन्तु उससे वह रहित है। मेरे प्यारे! अपने आसन पर पहुंचे। जब क्रोध शान्त हुआ, अपमान समाप्त हुआ तो कहा जाता है कि उनके तीन जन्मों का तप मुनिवरों! समाप्त हो गया। मेरे प्यारे! इससे मानव का ह्रास होता है, प्राणों के ऊपर ऋषि ने पुनः कठोर हृदय से पुनः तप किया नम्रता आई, पुनः उन्होंने करोड़ों गायत्री छन्दों का पठन पाठन किया जब महान तपस्वी बन गए, तो पुनः बेटा! वह अपने अस्त्रों शस्त्रों से युक्त हो करके, माता अरूण्धति और वशिष्ठ दोनों विराजमान थे, जब उनके आश्रम में प्रविष्ट हुए, उन्होंने यह पुनः राजर्षि कहा। मेरे प्यारे! क्योंकि अस्त्रों शस्त्रों से युक्त थे, उसने कहा हे ब्राह्मण! तुम्हें इतना अभिमान है क्या तुम मुझे अब भी राजर्षि उच्चारण कर रहे हो? परन्तु विडम्बना भरे शब्द है, अपमानित शब्दों का प्रतिपादन किया, और यह दृढ़ निश्चय कर लिया कि आज मैं इस ऋषि को मृत्यु को प्राप्त कराऊंगा। उनकी वाटिका में बेटा! शान्त वाटिका में विराजमान थे, अब बेटा! उन्होंने यह निश्चय कर लिया, जब यह सुषुप्ति में जाएंगे, तो मृत्यु को प्राप्त कराऊंगा।

परन्तु वह सौभाग्यशाली दिवस था, पूर्णिमा का दिवस था। मेरे प्यारे! माता अरूण्धति और वशिष्ठ दोनों विराजमान थे। दोनों का विचार विनिमय होने लगा, ऋषि बोले देवी! आज जो चन्द्रमा उदय हो रहे है, पत्नी बोली कि महाराज! सम्पन्न कलाओं से युक्त है। कैसा प्रकाश है इस मानो चन्द्रमा का, पृथ्वी को कैसा अमृतमय भरण कर रहा है, प्रभु! कैसी वनस्पति है, जो

भरणता में परणित हो रही है। पूर्णिमा का चन्द्रमा था सम्पन्न कलाओं से युक्त था, शरद पूर्णिमा, परन्तु वह प्रकाश चन्द्रमा का है यह तो विश्वामित्र की तपस्या के आगे न होने वाला प्रकाश है। मेरे प्यारे! वह जो मृत्यु के लिए विराजमान था वाटिका में वह भी श्रवण कर रहा था। इन शब्दों को उनकी पत्नी अरूण्धति बोली की महाराज! आपको तो अपशब्द उच्चारण करते है विश्वामित्र, शिष्यों को नष्ट कर दिया, एक को तुम्हारे आश्रम में शिक्षा अध्ययन करते हुए, परन्तु उनकी आप प्रशंसा कर रहे है। उन्होंने कहा देवी! मैं उनके गुणों की प्रशंसा कर रहा हूँ, उनमें जो गुण आ गएं है तपस्या का जो प्रकाश है परन्तु मैं उसको वर्णन कर रहा हूँ उसमें रजोगुण प्रधान होने के नाते मैं उसको ब्रह्मर्षि उच्चारण नहीं कर रहा।

मेरे प्यारे! वह जो शब्द थे, वह महाराजा विश्वामित्र के हृदय को उन्होंने विदीर्ण कर दिया, छेदन्य कर दिया। अरे, तू कितना अपराधी है, कितना अपंग है, मानो कितना पामर है, अरे, तूझे धिक्कार है क्या मानो तू ऐसे महापुरुषों को मृत्यु को प्राप्त करा रहा है, विचार बना रहा है। बेटा! उस समय उसके नेत्रों से जलों की वर्षा होने लगी। मुनिवरों! अस्त्रों शस्त्रों को त्याग करके ऋषि के चरणों में ओत प्रोत हो गएं और ऋषि से कहा कि महाराज! मुझे क्षमा करो। मेरे प्यारे! महाराजा वशिष्ठ मुनि महाराज ने आईए, ब्रह्मर्षि जी! आईए, आज आपने नम्रता को अपनाया है। आज तेरे में राजसत्ता नहीं रहा सतोगुण से भी ऊर्ध्वा गति को प्राप्त हो गएं हो। आज हृदय की जो विडम्बना है, हृदय की जो धारणा है, वह तेरे क्रियात्मक में प्राप्त हो गई। मेरे प्यारे! यह है पति पत्नी का दोनों का विचार, इसीलिए वेद के ऋषियों ने बेटा! इस जगत को विचार वेदी कहा है, इस पर अनुसंधानशाला ही नहीं कहा विचार वेदी भी कहा है, बेटा! जहाँ पति और पत्नीयों

के ऊँचे ऊँचे विचार होते है, वहाँ मुनिवरों! देखो, शत्रु भी अपने मित्र बन जाते है। मेरे प्यारे! गृह जो आश्रम है गृहाश्रम में जो पति पत्नी का सम्बन्ध है वह ऊँचे विचारों को लाना है वह अपने ब्रह्मचर्य को धारण करना है मेरे प्यारे! ऊँचे विचारों को लाना जब माता पिता लाते है तो उनके गृह में उत्पन्न होने वाले बालक बालिकाएं अथवा पुत्रियाँ होती है पुत्र होते है उनके अनुसार बेटा! देखो, उनके आश्रम बनते है गृह स्वर्ग बन जाता है तो मेरे प्यारे! आज हमें संसार को स्वर्ग बनाने के लिए विचारना है कि हम संसार में स्वर्ग किस प्रकार ला सकते है।

आज मैंने बेटा! यह नाना विचार धाराएं प्रगट की मुझे स्मरण आ रहा है मानो एक धारा को उच्चारण करना था मेरे विचार क्या बेटा! विचार बिखरने लगते है तो मैं क्या करूं? विचारों में मैं उसमें मग्नता की प्राप्ति होने लगती है जिसमें मैं ऋषियों के जीवन चरित्र की विवेचना करता हूँ मेरे प्यारे! माता ने अपने गर्भस्थल में बेटा! वशिष्ठ जैसे महापुरुषों को बनाया, निर्माण किया, विचारा तो मुनिवरों! देखो, इस संसार को बेटा! जहाँ अनुसंधान वेदी कहते है वहाँ बेटा! विचार वेदी भी कहते है वहाँ बेटा! देखो, जैसे गृह में गृह का निर्माण करना मानवता का मेरे प्यारे! देखो, विश्वामित्र ऋषि बन गएं। ब्रह्मवेत्ता वशिष्ठ भी ब्रह्मवेत्ता यह है बेटा! आज का हमारा वाक्, आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय क्या मेरे प्यारे! इस संसार में हम चरित्र को लाने का प्रयास करें और मुनिवरों! देखो, यह संसार चित्रावली है चरित्र वेदी है यह परमात्मा का रचाया हुआ जगत है हे मानव! यह जो जगत है यह जगत चरित्रवानों के लिए उत्पन्न किया था प्रभु ने किया है और चरित्राम् ब्रह्मा मानवता को लाना है, मुनिवरों! देखो, विचार विनिमय करना यह अनुसन्धान वेदी है, अनुसंधान है, परमाणुवादों का और विचारों का संग्रह

करके अपने विचारों को चित्रम ब्रह्मा अपने चित्त को धारण करके अपने चित्त को अशान्ति में परणित न करो। आपने चित्त को शान्ति में परणित करो। सान्त्वना में लाने का प्रयास करो। यह है बेटा! आज का वाक अब मुझे समय मिलेगा। मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो।

पूज्यपाद गुरुदवः आज का विचार अब हमारा समाप्त कल समय मिलेगा, तो अधिकार अनाधिकार के सम्बन्ध में कूछ शेष चर्चा प्रगट करेंगे। अब वेदों का पाठ होगा। ओ३म् देवं दधि ब्रह्मणा गायन्ता मानं देवाः ओ३म् तनु गायत्राः हिरेवं आभ्यां दधि गृहणां त्वा यत्तः माह हगा आभ्यां देवाः ओ३म् तनु मां हृदानि गता यत्र भा मां आभा ओ३म् ब्रह्म देवं मया सर्व भद्राः अच्छा भगवन्! आनन्द मङ्गलम भवति।

4 ०८ ०८ १९७३

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ जो पाठ्यक्रम है वह परम्परागतों से ही, विचित्र माना गया है क्योंकि उसकी प्रतिष्ठा मानवीय समाज में प्रतिष्ठित रही है, क्योंकि जिसकी प्रतिष्ठा मानवीयतव में होती है वह वेदज्ञ ज्ञान उसी समाज में प्रतिष्ठित हो जाता है। तो मेरे प्यारे! विचार यह कि आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा था, यह जो पवित्र वेदवाणी है, जो मानव समाज को ऊर्ध्वा बनाने वाली है, मानव को सत प्रेरणा प्रदान कराने वाली है, हमें उस प्रेरणादायक, ज्ञान और विज्ञान दोनों को अपना लेना चाहिए, आज के हमारे वेदपाठ

में बेटा! विचित्र वार्ता आ रही थी, आज हम यदि उसकी मीमांसा करने लगे तो मुनिवरों! ऐसा हमें प्रतीत होने लगेगा, जैसे हम परमपिता परमात्मा की गोद में विराजमान हैं।

मुझे बेटा! वह काल भली भान्ति स्मरण आता रहता है, जब यहाँ ऋषि मुनि, विराजमान हो करके, बेटा! अपने चित्त पर अनुसन्धान करते, और उसी चित्त की आभा के साथ वह परमाणुवाद को भी अनुसन्धान करते क्योंकि उनका दृष्टिकोण सदैव यह रहता रहा है, कि जब आध्यात्मिकवाद में सर्वत्र आता है तो हमें मन के ऊपर अनुसन्धान करना है, हमें चित्त के ऊपर अनुसन्धान करना है, क्या बेटा! चित्त को शान्त करने का नाम मानो उसमें तो कर्म आने ही वाला न हो, सदैव शान्त रहने वाला हो बेटा! इसको ऋषियों ने योग माना है और चित्त को हमें शान्त बनाना है परन्तु हमें इस संसार के दोषोरोपणों को दृष्टिपात नहीं करना होगा केवल हम अपने चित्त के आंगन में प्रतिष्ठित हो जाए और चित्त को दृष्टिपात करते है हम उसमें संलग्नता से परणित हो जाए जो मन चञ्चल वाद में रमण करता है।

चित्त का स्वरूप

मेरे प्यारे! इसी वाक को ले करके, महर्षि भारद्वाज मुनि, अब मुनिवरों! वह भौतिक विज्ञान में चले गएं महर्षि भारद्वाज ने यह स्वीकार किया कि जैसे वेद में चित्रम आता है चित्राङ्गी आता है, अब हमें देखो, जैसे चित्त में नाना प्रकार की धारा समाहित हो जाती है, और उस चित्त में उन धाराओं के साथ में जो सामग्री होती है, वह चित्त में प्रतिष्ठित हो जाती है। जैसे एक मानव सर्वत्र राष्ट्र का भ्रमण कर लेता है, परन्तु यदि वह पृथ्वी मण्डल का भ्रमण कर लेता है अथवा वह नाना यन्त्रों के द्वारा नाना लोक लोकान्तरों की यात्रा भी कर लेता है, तो उन जो भी दृष्टिपात किया गया, आत्मा

और नेत्रों के प्रकाश से मानो उसमें जो तरंगे है, उसमें जो धाराएं है, वह जो दृष्टिपात किया उन्हें चित्त में दृष्टिपात किया वह चित्त में चित्रित हो जाते है। अब मुनिवरों! देखो, वह सर्वत्र राष्ट्र का क्या, पृथ्वी मण्डल इत्यादि लोको का चित्रण भी मानो देखो, इस मानव के अन्तःकरण में, अथवा जिसको चित्त कहते है, उसमें समाहित हो जाता है अब उसमें इसके चित्र आ जाते है मानो देखो, जो संसार को हमने दृष्टिपात किया, नेत्रों से तो दृष्टिपात किया मन उसको चित्र को लेने वाला है परन्तु आत्मा के प्रकाश में दृष्टिपात किया गया, अब मुनिवरों! देखो, मन तो एक प्रकार का चित्रण देने वाला है संसार का चित्र ले रहा है, अब वह चित्त में विराजमान हो रहे है। अब मुनिवरों! देखो, वह अपने चित्रों की बड़ी उत्तम उत्तम विचार धाराएं आती चली जा रही थी। तो विचार विनिमय यह, कि हमारे यहाँ, यह जो चित्त नाम का स्थान है अथवा जिसमें मानव के संस्कारों का समूह रहता है अब जो वस्तु उसमें विराजमान हो जाती है उसका नाम संस्कार है। जैसे एक मानव मुनिवरों! देखो, एक मानो जगत एक स्थल को को दृष्टिपात करता है उसका चित्र मानव के चित्त में चित्रित हो रहा है, अब यदि चित्त में चित्रित नहीं होगा, तो उसको वह अनुभव नहीं कर सकता। अथवा जैसे एक मानव देखो, लोको, का ज्ञान करना प्रारम्भ करता है। बुद्धि, मेधा के द्वारा और वह यह दृष्टिपात करता है यह तो सूर्य मण्डल यह प्रकाशक स्वरूप है, मानो जो प्रकाश को देने वाला है, यह चन्द्रमा जो शान्ति देता है, मानो यह बृहस्पति मण्डल है यह आरूणि है, और यह वशिष्ठ है मानो ये सप्तर्षि मण्डल जो ध्रुव मण्डल की कल्पना करता है, तो मुनिवरों! यदि मानव के मस्तिष्क में उनके सूक्ष्म तन्तु नहीं होंगे, तो उन लोकों की जानकारी, किसी भी काल में नहीं हो सकेगी। तो यह तुमने जाना नहीं, कि मानो जैसे यह

चन्द्र मण्डल है, यह प्रकाश देता है, कान्ति देता है, और रात्रि माता वसुन्धरा के गर्भ में अमृत को प्रदान करता है, और वही तक नहीं माता के गर्भ स्थल में भी अमृत देता है। मेरे प्यारे! पुत्रों! को तो इनका जो चित्र है वह मानव के चित्त में मुनिवरों! देखो, सूक्ष्म रूपों से विराजमान है। तो ऋषि भारद्वाज ने बेटा! यह कल्पना की, और भी आदि ऋषियों ने, क्या यह जो हमारा चित्त नाम का स्थान है, यह जो मन है, बुद्धि है, और चित्त और अहङ्कार, तो मुनिवरों! इन चारों को एक सूत्र में लाने का नाम अन्तःकरण कहलाता है। उसे आन्तरिक करण कहते है, जो आन्तरिक करण करने वाले होते है, उसको अन्तःकरण कहते है। तो मुनिवरों! देखो, वह जो चित्त नाम का स्थान है, जो मन और बुद्धि के द्वारा, निर्णय किया हुआ है, वह चित्त में समाहित हो जाता है। अथवा चित्त में उसका चित्र आ जाता है। अब मुनिवरों! वह कैसा भी सूक्ष्म वार्ता हो, कैसा भी सूक्ष्म विचार हो, अथवा दर्शनों का विचार हो, आत्मा का विचार हो, परमपिता परमात्मा का विचार हो, अथवा प्रकृति के, एक एक परमाणुवाद का भी क्यों न विचार हो, परन्तु उन सबका चित्रण उनके चित्र शरीर में विराजमान हो जाते है।

अन्तःकरण

अब यहाँ ऋषि कहते है हे मानव! चित्त को जानने का प्रयास कर। यदि तू संसार को जानना चाहता है, तू लोक लोकान्तरों को जानना चाहता है, तो चित्त को जानने का प्रयास कर। अब चित्त से ऋषि ने और वेद ने ऐसा क्यों कहा है चित्त को जानो इसलिए कहा है हे मेरे प्यारे! वत्स! क्या संसार में जितना भी लोकवाद है, परमाणुवाद है, अथवा जितना भी नेत्रों से मन और बुद्धि के द्वारा जो भी ग्रहण किया जाता है, वह सर्वत्र परमाणु देखो, प्रकृति के सहयोग से प्राप्त किया जाता

है। बेटा! तुमने जाना नहीं। क्या मानो देखो, प्रकृति की सहकारिता उसमें होती है अब यदि प्रकृति उसमें संलग्न नहीं होगी, तो हम मुनिवरों! देखो, कोई कार्य नहीं कर पायेंगे, जैसे मन है, अब मन जो प्रकृति की धारा है, बुद्धि है, यह मन की धारा है, और जो चित्त अन्तःकरण यह भी मन की ही धारा है, जैसे बुद्धि की चार प्रकार की धारा, जैसे बुद्धि, मेधा, ऋतम्भरा और प्रज्ञा मानो देखो, यह चार प्रकार की और मेधा चार प्रकार की धाराएं बुद्धि की मानी है। अब यह सब मन की ही धारा है, अथवा जैसे मन देखो, अवृत्ति है, बुद्धि के क्षेत्र में जाता है, तो बुद्धि युक्त बन जाता है। यदि वह ऋतम्भरा के क्षेत्र में जाता है तो ऋतम्भरा युक्त बन जाता है। मेधा के क्षेत्र में जाता है तो मेधा युक्त बन जाता है, और मुनिवरों! देखो, प्रज्ञावी में जा करके यह प्रज्ञावी क्षेत्र बन जाता है। तो परिणाम यह मन की ही धारा है जैसे मेधा, जैसे बुद्धि मेधा, ऋतम्भरा और प्रज्ञा है अब मुनिवरों! देखो, इसी प्रकार देखो, बुद्धि के आंगन को त्याग करके, सूक्ष्म से देखो, बुद्धि है और बुद्धि बेटा! मेघावी में जाता है तो लोक लोकान्तरों को का ज्ञान होने लगता है और जब वह ऋतम्भरा में जाता है तो मानो देखो, लोकों के ज्ञान को वह अनुभव करने लगता है, और यह त्यागने लगता है और उसमें रहस्य को त्याग करने लगता है, जब कोई रहस्य प्रतीत नहीं होता, उसका नाम बेटा! विवेक है। मानो जैसे बुद्धि मेधा ऋतम्भरा और ऋतम्भरा को भी त्याग करके वह मुनिवरों! वह प्रज्ञावी क्षेत्र में पहुंच जाता है। केवल वह एक ब्रह्म को ही अपना साथी बनाता है मित्र बनाता है, एकोकी ब्रह्म को अपना मित्र बना करके, मुनिवरों! देखो, चित्त में नई धारा प्रारम्भ हो जाती है। अब वह मन में जो धारा प्रारम्भ होती है, चित्त में जो धाराएं है, इन धाराओं को हम ज्ञान और विवेक के द्वारा परमात्मा की सहकारिता के द्वारा, इस प्रकृतिवाद को त्यागने का

प्रयास करते हैं। तो मानो देखो, वह चित्त की जो प्रतिभा है, वह भी मुनिवरों! समाप्त हो करके वह अन्तरात्मा ये मोक्ष को प्राप्त हो जाता है। ऐसा हमारे ऋषि मुनियों ने, ऐसा स्वीकार किया। परन्तु मैं आज इस सम्बन्ध में विवेचना नहीं मैं उस वाक को जाना चाहता हूँ विचार ये कि मानो देखो, चित्त में संसार का ज्ञान विज्ञान उसमें अपवाद माना जाता है, जितना परमाणुवाद है, अथवा जितना लोकवाद है, लोक लोकान्तरों में जाना यन्त्रों का बनाना, निर्माण करना विज्ञानशाला में परणित होना, और नाना प्रकार के परमाणुओं को एकत्रित करके, चित्रण बनाना, यह सर्वत्र मानो देखो, चित्त में, इनकी धाराएं विराजमान होती है। क्योंकि चित्त जो है यह प्रकृति का सूक्ष्म तम तन्तु माना गया है। और जो सूक्ष्म तन्तु है, उसको हमारा मस्तिष्क कहते हैं।

प्रकृति से चित्त

अब मुनिवरों! देखो, जो वह चित्त है वह प्रकृति से बना हुआ है इसलिए प्रकृति के जितने भी यन्त्रवाद है, प्रकृति का जो एक एक परमाणु है, एक एक लोक लोकान्तर है, उसकी धारा इस बेटा! देखो, चित्त में विराजमान रहती है तो यह तो तुमने जान लिया इसीलिए ऋषि मुनियों ने बेटा! सुन्दर ब्रह्माण्ड की कल्पना की है। आज मैं देखो, पिण्ड और ब्रह्माण्ड की कल्पना को करने तो नहीं जा रहा हूँ, परन्तु विचारना यह कि मानो देखो, यह तो आध्यात्मिक वेत्ताओं ने अपना निर्णय दिया है आध्यात्मिक वेत्ताओं ने यह कहा है कि हम संसार में आध्यात्मिकवेत्ता बने तो चित्त को हम शोधन करें परन्त देखो, चित्त जो है यह प्रकृति के आंगन के मानव को उसी मार्ग से सर्वत्र को जाना है

मेरे प्यारे! देखो, इस मार्ग को त्याग करके हम वास्तव में प्रतिपदा में और हम देखो, चित्त के स्थल से आनन्द से दूरी चले जा रहे है यह आत्मा उस समय मुनिवरों! संसार की क्रिया उसको नहीं भासती है वह केवल एक चेतना में चेतना चेतना दृष्टिपात होती है।

मेरे प्यारे! यह तो आध्यात्मिक वेत्ताओं का मत है परन्तु अब कुछ विज्ञानवेत्ताओं का मत स्वीकार करो, परन्तु देखो, भौतिक विज्ञानवेत्ता यह कहते है क्या संसार में जो भी कुछ क्रिया है वह केवल प्रकृतिवाद मानी जाती है परन्तु हमारे यहा परम्परा के जो ऋषि हुए है जैसे महर्षि भारद्वाज ऊँचे वैज्ञानिक हुए है उन्होंने बेटा! इस क्रिया का इस संसार को संचालन करने वाली कोई सत्ता को स्वीकार किया और वह सत्ता क्या? उसको हमारे यहाँ चेतना प्रभु कहा जाता है। परन्तु ऋषि मुनियों ने यह कहा है कि यह जो चित्त नाम का वेदों में दर्शनों में चित्त आता है और उन्होंने बेटा! महर्षि भारद्वाज ने चित्त को ले करके भी ऋषि मुनियों ने बेटा! उन परमाणुओं को एकत्रित करना प्रारम्भ कर दिया जिन धाराओं से चित्त में संस्कारों का प्रादुर्भाव होता है मेरे प्यारे! देखो, ऋषि भारद्वाज ने उसी के आधार पर ले करके मानो नाना प्रकार की धातुओं को एकत्र करना प्रारम्भ किया क्योंकि जिन धातुओं से हम किसी की चेतना को मानो देखो, संसार को दृष्टिपात करते है विभाजनवाद भी करते है इसी प्रकार उन्होंने मुनिवरों! देखो, प्रकृति में जो विभाजनवाद हो रहा था उस विभाजनवाद को जानने का प्रयास किया महर्षि भारद्वाज ने उन्होंने रावण के विधाता कुम्भकरण को अपना साथी बनाया क्योंकि हमारे यहाँ त्रेता के काल में राजा रावण के जो विधाता कुम्भकरण थे पुलस्त्य ऋषि महाराज के पौत्र मानो देखो, उससे ऊँचा वैज्ञानिक नहीं था मैंने बहुत पुरातन काल में इससे पूर्व काल में भी कहा बेटा! क्या यह छह माह तक हिमालय

की कन्दराओं में मानो चिन्तन करते थे विज्ञान का और छह माह तक वह मानो लंका में वैज्ञानिकों के मध्य में शिविर लगाते।

तो मेरे प्यारे! महानन्द जी! ने एक समय मुझे यह प्रगट कराया क्या आधुनिक काल का जगत यह कहता है कि छह माह तक वह निन्द्रा में रहते थे और छह माह तक वह जागरूक रहते थे प्रायः ऐसा नहीं परन्तु वह छह माह राष्ट्र के लिए देते थे और छह माह तक वह हिमालय में शान्त अज्ञातवास में विज्ञान का चिन्तन करते थे प्रायः ऐसा माना जाता है परन्तु मुझे उनका जीवन एक स्मरण भी आता रहता है तो विचार विनिमय यह कि महर्षि भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला में, राजा रावण के विधाता, कुम्भकरण जिसको निस्सति आस्वाथ वैज्ञानिक कहा जाता था। परन्तु वह सदैव चित्रों पर चिन्तन करते रहते थे, कि वह जो चित्र आते है, वह कहाँ से आते है? इन्होंने एक एक शब्द में चित्र माना है महर्षि भारद्वाज ने एक एक शब्द में चित्र माना है और उन्होंने बेटा! देखो, ऐसा कहा है महर्षि भारद्वाज मुनि ने कि देखो, हमारा यह जो अन्तःकरण है मानो जिसको हम चित्त कहते है और वह जो चित्त नाम का स्थल है उसी प्रकार यह प्रकृति का भी चित्त है यह तो मानव शरीर में चित्र है। प्रकृति का क्योंकि पञ्च महाभौतिको का यह तो संघात हुआ मानो देखो, इनका एकोकीकरण हुआ, एकोकीकरण हो करके अब मुनिवरों! देखो, यह मानव शरीर का निर्माण हो गया। अब मानव शरीर का निर्माण होने के पश्चात्, मेरे प्यारे! मानवीय जब बनता चला गया, अब मानो देखो, इन पञ्च महाभौतिक सूक्ष्म धाराओं की, परमाणुओं की, और महापरमाणुओं की, अणुओं की धाराओं का मुनिवरों! देखो, चित्त नाम का स्थल बन गया। इसी प्रकार ऋषि भारद्वाज ने, यह निश्चय किया, कि जैसा चित्त मानव के स्थान में है, मानो यह नगों की आची

में कौन है क्योंकि मैं अपने पूज्य गुरुदेव के द्वारा जो अध्ययन किया, वह विद्या मानो इस मेरे चित्त में विराजमान है। अब मुनिवरों! उन्होंने विचारा की इसी प्रकार वायु मण्डल में क्या मानो उन पञ्च यह भौतिक जो भेदन है, उनमें वह धाराएं विराजमान है, उन धाराओं को जानना है।

वायुमण्डल में विचारधारा का भ्रमण

तो कहा जाता है मेरे प्यारे! कि महर्षि भारद्वाज मुनि ने इस धाराओं के ऊपर चित्रण करना प्रारम्भ कर दिया। चिन्तन करने लगे, विचार विनिमय करने लगे, तो मुझे बेटा! उनकी विज्ञानशाला भली भान्ति स्मरण आती रहती है। मेरे प्यारे! उन्होंने ही चित्त को ले करके, चार यन्त्रों का निरीक्षण किया। उन्होंने सबसे प्रथम एक चित्र का, कि मैं यह जानना चाहता हूँ, कि जैसे एक मानव, एक महापुरुष, एक स्थली पर रहता है। परन्तु उस जिस स्थली पर उस महापुरुष के जो वातावरण हैं, उसके विचार, जो अन्तःकरण के वातावरण के जो विचार हे विचारधारा है वह वायु मण्डल में भ्रमण करती रहती है। मानो मैं यह जानना चाहता हूँ कि वह जो वायु में जो धाराएं है इस स्थली पर जिस स्थली पर ऋषि तपस्या करते हैं, और वह तप के जो परमाणु है, वह उस स्थान पर विराजमान होते हैं। तो ऋषि ने इसके आंगन में बेटा! उस यन्त्र का निरीक्षण किया, जिस यन्त्र को उन्होंने निर्माण किया और उस यन्त्र में यह विशेषता थी कि एक मानव एक स्थान पर विराजमान है, ढ़ाई घड़ी के पश्चात्, मुनिवरों! यदि वह मानव चला जाए ढ़ाई घड़ी के पश्चात उस यन्त्र में देखो, उस मानव का उसमें चित्र आ जाता है।

तो मुनिवरों! देखो, यह विज्ञान धारा है क्योंकि उसी चित्र को ले करके, उन्होंने चित्राण अन्वेषण अग्रात नाम का यन्त्र का निर्माण किया। उस यन्त्र में यह

विशेषता थी कि मानव चला जाए, परन्तु ढ़ाई घड़ी के पश्चात उसका चित्र उसके समक्ष यन्त्र में प्रायः आ जाता था। तो मुनिवरों! देखो, वह यन्त्र उन्होंने कैसे जाना? वह जाना हे इस प्रकृति के परमाणुओं से, क्योंकि इसमें अग्नि के और वायु के परमाणुओं का अधिक विश्लेषण होता है और जल के परमाणु उससे सूक्ष्म होते है, और पार्थिव परमाणु मानो उसके आवाकृति में होते हैं, और अन्तरिक्ष के परमाणु की अधिकता होती है, वह एक यन्त्र बनाया जाता है। मुनिवरों! जिसका मिलान किया जाता है और उससे मुनिवरों! एक यन्त्र बन जाता है। वह जो यन्त्र है इसमें मानो यह विशेषता आ जाती है, और वह चित्त के आधार पर, योगीजन वह चित्त को जान लेते हैं।

इसी प्रकार मुनिवरों! उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया। अब आगे चल करके, मेरे प्यारे! उन्होंने द्वितीय यन्त्र का निरीक्षण किया। द्वितीय यन्त्र किस प्रकार का था जैसे मानो एक मानव है यदि वह उन्होंने इस यन्त्र में और भी विशेषता जानी जैसे एक मानव देखो, अन्तःकरणीय है उसकी यदि सौ वर्ष की अवस्था है तो बाल्य काल के संस्कार सौ वर्ष के पश्चात भी मानव जीवन में आ जाते हैं। वृद्धजन में वह बाल्यकाल की कल्पना करता है, और प्रायः वह स्मरण आ जाते है, प्रायः मैं मित्रों के साथ ऐसे आंगन में रमण करता रहता था, ऐसी खिलवाड़ होती रहती थी, तो वह जो एक अन्तःकरण में, वह जो संस्कार था वह जागरूक हो गया। इसी प्रकार उन्होंने यह जाना कि यह जो अन्तरिक्ष है, वह मुनिवरों! देखो, प्रत्येक शब्द में, रक्त के बिन्दु में चित्रावली होती रहती है, चित्रावलियों के दिग्दर्शन होते रहते है। तो मैं, इसको भी जानूं। तो ऋषि ने बेटा! यह जानने का प्रयास किया, इसमें महर्षि भारद्वाज, स्वाति ब्रह्मचारी, और श्वेत्ताम्बरी प्रीतिभा और माता ब्रीही, सोम केतु जो मुनिवरों! वैज्ञानिक थे इनकी

विज्ञानशाला में जो मुनिवरों! विशेषण करते थे, मेरे प्यारे! देखो, इनको जानने के लिए, महर्षि भारद्वाज मध्य में विराजमान होते, और वह उनसे देखो, वेदों का अध्ययन यन्त्रों का अध्ययन के ऊपर उनका विचार विनिमय चलता रहता था। तो ऋषि ने बेटा! यह निर्णय किया उन्होंनें अनमाती ऋषि को क्या महाराज देखो, उन्होंने उस यन्त्र का दिग्दर्शन किया यज्ञशाला में तरूण थे वह विज्ञानशाला में मेरे प्यारे! देखो, जैसे एक मानव है, और इस मानव का मेरे प्यारे! देखो, उस मानव का उस प्राणी का यदि निधन हो जाए, एक मानव सौ वर्षो पूर्व निधन हो गया है, यदि कहीं उसका रक्त का बिन्दु उसका प्राप्त हो जाए, तो मुनिवरों! एक रक्त के बिन्दु में, इतने परमाणु हैं, मानो वह यन्त्र इस प्रकार का था सो वर्ष पूर्व, जिस मानव का निधन हो गया, उस यन्त्र में देखो, उस मानव का साक्षात्कार चित्र आ जाता था। एक रक्त के बिन्दु से, तो परिणाम यह ऋषि ने यह निर्णय किया, क्या एक रक्त के बिन्दु में भी प्रायः इतने परमाणु होते हैं, उन्होंने बेटा! परमाणुवाद के ऊपर बहुत ऊँचा बल दिया। महर्षि भारद्वाज ने दो प्रकार के यन्त्रों का यंत्रित किया।

वातावरण की शुद्धता और अशुद्धता

अब तृतीय यन्त्रों उन्होंने इस प्रकार का यह निर्णीत किया, उन्होंने यह सिद्ध किया है कि हे मानव! जो भी तू शब्द उच्चारण करता है, वह अशुद्ध है या शुद्ध है। परन्तु देखो, वह अन्तरिक्ष में विराजमान हो जाते है। अब मुनिवरों! देखो, ऋषि ने यह सिद्ध किया है, कि वातावरण अशुद्ध कैसे होता है, और शुद्ध वातावरण कैसे होता है? उन्होंने बेटा! देखो, मैं भी किया करता हूँ इन परमाणुओं को, क्या जैसे एक मानव है, मुनिवरों! पति पत्नी है, पुत्र है, पुत्रियां है। मानो पुत्र वधु है, और गृह में यदि मुनिवरों! देखो, मानव एक

दूसरे से मानव प्रसन्न रहेगा, तो गृह में स्वर्ग की कल्पना की जाएगी, और जब यदि एक दूसरा मानव कलह से युक्त रहता है, कलह रहती है तो उनमें मानो देखो, सदैव नेत्रो से जलो की वर्षा होती रहती है कलह में तो वह गृह गृह नहीं रहता वह नारकिक गृह बन जाता है जो नारकिक गृह बन जाता हैं। क्योंकि वह परमाणु जो शोक के परमाणु गृह में वातावरण में ओत प्रोत हो जाते है तो मुनिवरों! देखो, पहले गृह शुद्ध हुआ अशुद्ध हुआ मानव कहता है कि यह गृह तो मुझे शोकायुक्त प्रतीत होता है।

मेरे प्यारे! इसी प्रकार ऋषि ने यह सिद्ध किया है, कि यह जो अन्तरिक्ष है मानो इस अन्तरिक्ष में जो परमाणु रमण करते है, जैसे एक मानव मिथ्या ही मिथ्या उच्चारण करता है, मेरे प्यारे! उसका अन्तःकरण उसे धिक्कारने लगता है जब शान्त होता है, परन्तु देखो, क्योंकि अन्तःकरण में भी वह चित्त विराजमान है, मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा है कि वह जो अशुद्ध वातावरण है वह वायु मण्डल में भरण हो जाते है और उस वायुमण्डल में मुनिवरों! देखो, शुद्ध जो शब्द होते है वह द्यौ लोक को प्राप्त हो जाते है, तो महर्षि भारद्वाज ने ऐसा सिद्ध किया है कि प्रत्येक शब्द के साथ में मुनिवरों! देखो, इस मानव का चित्र भी जाता है, मानो चित्र भी जाता है इसके साथ में तो ऋषि ने यह सिद्ध उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया, जिस यन्त्र को चित्रावली अन्वाषण प्रतिभा वायु यन्त्र कहते हैं। मेरे प्यारे! इस यन्त्र में यह विशेषता थी कि वह यन्त्र वायु मण्डल में त्याग दिया गया, जब वायु मण्डल में त्याग दिया गया, तो पृथ्वी पर एक यन्त्र विराजमान है तो मुनिवरों! देखो, उस यन्त्र की उसमें छाया आती रहती थी अब मुनिवरों! देखो, उसमें उसकी धाराएं दृष्टिपात आती तो ऋषि ने यह सिद्ध किया है कि एक एक शब्द के साथ में मानव का चित्र भी जाता है इतना परमाणु

जाता है, एक एक शब्द के साथ में, क्या मुनिवरों! देखो, जितने परमाणुओं से माता के गर्भस्थल में मुनिवरों! देखो, मानव का निर्माण हो जाता है बालक का निर्माण होता है इतने परमाणुओं का, एक ही शब्द में विकास हो जाता हे मानो वायु मण्डल में तरंगें में तरंगित हो जाती हैं। अशुद्ध शब्द हो जो अशुद्धों में प्रमुख हो जाते है शुद्ध हो करके द्यौ लोक को प्राप्त हो जाते हैं। मेरे प्यारे! क्योंकि शब्द में विद्युत अधिक होती है, मानो देखो, वह शुद्धता के मानो देखो, उसकी तरंगों का अङ्कित की जाए। तो मानो **शुद्ध वातावरण में विद्युत का प्रभाव अधिक होता है। और अशुद्ध में सूक्ष्म होता है।**

तो इसी प्रकार ऋषियों ने यह सिद्ध किया है क्या मानो देखो, द्यौ लोक को इस यन्त्र में यह विशेषता थी बनती वह दोनों प्रकार के शब्दों का विभाजन होता है। बेटा! उस यन्त्र में दृष्टिपात आता है। अब मुनिवरों! देखो, शुद्ध परमाणु तो वायुमण्डल में दृष्टिपात आते है, यन्त्रों के द्वारा, उनका रूप भिन्न दृष्टिपात आता था विद्युत के आंगन में, अब मुनिवरों! देखो, शुद्ध का श्वेत्ताम्ब ब्रह्मे अस्वाति यह दोनों माना गया क्या मानो देखो, श्वेत्ताम्ब पिताम्बरी वर्ण होता है, शुद्ध वातावरण में और मुनिवरों! देखो, जो अशुद्ध होता है उसमें हरित मानो देखो, पीत वर्ण होता है उस मानो देखो, कालानवृत्ति वर्ण होता है। उस मानो देखो, कालानवृत्ति वर्ण होने के नाते उसे अशुद्धवाद में परणित माना गया। मेरे प्यारे! ऋषि ने यह सिद्ध किया, दोनों प्रकार के शब्द बेटा! यन्त्र में विभाजन होते दृष्टिपात आते हैं। जैसे मुनिवरों! देखो, मानव जब न्याय करता है, **तो शुद्ध और अशुद्ध को वह अपने अन्तःकरण से प्रायः जान लेता है**, लेखनीबद्ध भी कर देता है इसी प्रकार एक योगी वाणी के ऊपर अनुसन्धान करने वाला यह जान लेता है इसकी वाणी में अशुद्धवाद है, या शुद्धवाद

है। मेरे प्यारे! आयुर्वेद का पण्डित भी यह जान लेता है शुद्धवाद है या अशुद्धवाद है तो विचार विनिमय यह बेटा! कि दोनों प्रकार के परमाणु मानो उसमें मिश्रित होते हैं, और उसमें मुनिवरों! देखो, जिस परमाणु, मुनिवरों! कुछ परमाणु देखो, अग्नि के होते हैं अग्नि से आधा परमाणु और देखो, जल के होते हैं, और वायु के होते है और मुनिवरों! देखो, उसके अधिक परमाणु अन्तरिक्ष के होते हैं और मानो इन सबसे सूक्ष्म और बहुत ही सूक्ष्म मात्रा में परमाणु इस पृथ्वी के होते है, इन पञ्च महाभौतिकों का एक दूसरे से मिलान करते हुए, परमाणुओं का मिलान करके बेटा! वह चित्रावली प्रतिभा यत्र बन जाता है। जिससे बेटा! शब्दों का विभाजन किया जाता है।

मेरे प्यारे! जैसे पृथ्वी में नाना देखो, विभाजन होने वाला षट रसों का विभाजन कह रहा है नाना प्रकार की वनस्पतियां है परन्तु उनके भिन्न भिन्न प्रकार के रसास्वादन हैं, प्राणों का विभाजन हो रहा है बेटा! मन के द्वारा।

मेरे प्यारे! इसी प्रकार वायु मण्डल में परमाणुओं के द्वारा मानो देखो, प्राण के द्वारा वास्तव में प्रतिभा यह सर्वत्र बेटा! उनका विभाजन होता दृष्टिपात हो रहा है। तो मेरे प्यारे! ऋषि ने बेटा! यह नाना प्रकार के यन्त्रों का ऋषि ने दिग्दर्शन किया। मेरे प्यारे! विचार विनिमय यह, आज मैं विज्ञान के क्षेत्र में जाना नहीं चाहता हूँ। मैं आज तुम्हें यह उच्चारण करने आया हूँ, मेरे प्यारे! आध्यात्मिकवाद और भौतिकवाद दोनों का मिश्रण होना चाहिए। दोनों एक साथ में रमण करने चाहिए। क्योंकि यदि मुनिवरों! विज्ञान प्रगतिशील होता रहा, तो अन्त में बेटा! चित्रों का और मुनिवरों! देखो, विज्ञान का दुरूपयोग होना प्रारम्भ हो जाएगा, और जब विज्ञान का दुरूपयोग होना प्रारम्भ हो जाता है, उस समय बेटा! देखो, समाज में रक्तभरी क्रान्तियों का

आना स्वाभाविक हो जाता है।

मेरे प्यारे! मैंने बहुत पुरातन काल में, अपना विचारों को व्यक्त करते हुए कहा था मुनिवरों! देखो, जिस समय छात्रों में विज्ञान के दुरूपयोग के चित्रण आने लगते हैं, तो जानो कि राष्ट्र में रक्त भरी क्रान्ति आ गई है। परन्तु देखो, वह चित्रों में विज्ञान का दुरूपयोग होता दृष्टिपात करते है, तो बेटा! देखो, उनका चरित्र सुरक्षित नहीं रहता, और क्या मुनिवरों! देखो, राजा के समाज में अथवा समाज में जब चरित्र नहीं होगा तो मुनिवरों! देखो, समाज ऊँचा कैसे बनेगा? समाज तो ऊँचा चरित्र से ही बना करता है। मुनिवरों! देखो, वह यदि चरित्र ऊँचा न रहा, तो विज्ञान का दुरूपयोग होता रहा, वहाँ बेटा! कर्तव्यवाद नहीं होता, और जब कर्तव्यवाद नहीं होता तो मुनिवरों! देखो, वहाँ मानवीयता भी नहीं होती, वहाँ सदैव रक्त भरी क्रान्ति के सदैव समागम आकार बनते रहते हैं। मुझे स्मरण आता रहता है वहाँ रक्त भरी क्रान्तियों के बेटा! एक विचार बनते रहते है, अन्तःकरण में मानो देखो, अग्नि धीमी धीमी प्रदीप्त होती है, एक समय वह आता है क्या वह अग्नि बेटा! प्रदीप्त हो करके राजा के लिए राष्ट्र के लिए, हानिकारक और एक वाक तुम्हें और निर्णय किए देता हूँ, बेटा! परम्परागतों से नाना प्रकार के वाद हैं, परन्तु जिस समय राष्ट्रीयवाद का निर्माण अपठित समाज के द्वारा होता है, उस समय मुनिवरों! देखो, रक्त भरी क्रान्ति आने में कुछ देरी नहीं रहा करती है। एक वाक मैं और उच्चारण किए देता हूँ बेटा! तुम्हें आज मेरा वेद का विषय नहीं था क्या मुनिवरों! देखो, मैं विज्ञान की धाराओं को प्रगट कर रहा था विज्ञान भौतिकवाद होना चाहिए, यह नाना प्रकार का यन्त्रवाद मुनिवरों! भारद्वाज मुनि ने जिनके यहाँ बेटा! बृहस्पति में जाने वाले यान थे, मङ्गल में जाने वाले यान थे और उन्होंने बेटा! देखो, ध्रुव यान के ऊपर निर्माण किया,

निरीक्षण चल रहा था, और भी नाना लोक लोकान्तरों में उनकी गति प्रायः थी, परन्तु देखो, विचार धारा यह ऋषि ने यह सिद्ध किया, क्या विज्ञान होना चाहिए, दोनों प्रकार का। परन्तु आध्यात्मिकवाद इसलिए अनिवार्य है, क्योंकि विवेकी पुरुष होने चाहिए, क्योंकि आध्यात्मिकवाद से क्रियात्मक जब आध्यात्मिकवाद होता है तो बेटा! उससे विवेकी पुरुष होते है। निष्पक्ष पुरुष होते है, और जहाँ विवेकी पुरुष होते है वहाँ मुनिवरों! देखो, विवेकी पुरुषों के द्वारा राष्ट्र और समाज का निर्माण होता है और वह जो निर्माण है राष्ट्रीयता उससे मानवीय समाज ऊँचा बना करता है आओ, मेरे प्यारे! मैं अधिक विवेचना देना नहीं आया हूँ विवेचना देने का अभिप्राय यह कि मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ, परम्परागतों से जो विवेकी पुरुष होते है वह निष्पक्ष होते है, मेरे प्यारे! तुम्हें प्रतीत होगा त्रेता के काल में जब महाराजा रावण ने मुनिवरों! देखो, लंका को कुबेर से विजय कर लिया था लंका को जब कुबेर से विजय कर लिया विजय करने के पश्चात मुनिवरों! देखो, लंका में राजा राष्ट्रीयपन होना था तो महाराजा पुलस्त्य ऋषि महाराज के: राजा रावण पौत्र होते थे उन्होंने मुनिवरों! देखो, महर्षि कुक्कुट मुनि महाराज और महात्मा मुञ्जु के और भी आदि ऋषियों को निमन्त्रण दिया। परन्तु महर्षि कुकुट मुनि महाराज उस समय महातपस्वी थे, उनको राजपुरोहित बनाया, और यह कहा कि आप महाराज इस सभा का सभापतित्व करें और इस बालक का निर्माण करें। मेरे प्यारे! महाराजा कुक्कुट मुनि महाराज जहाँ आध्यात्मिक वेत्ता थे वहाँ आयुर्वेद के महा प्रकाण्ड बुद्धिमान थे, वहाँ आयुर्वेद की दृष्टि से, राजा रावण को मस्तिष्क का अध्ययन किया, अध्ययन करके उसमें पुलस्त्य ऋषि महाराज से धीमे से कहा क्या महाराज! यह जो बालक है, तुम्हारा जो पौत्र है, युवा है, शक्तिशाली है, परन्तु देखो, यह वैज्ञानिक भी बनेगा

परन्तु देखो, यह राष्ट्र को राष्ट्रीयता में नहीं ला सकेगा और राष्ट्रीयता में लाने का अभिप्राय है कि राष्ट्र को कर्तव्यवाद में लाया जाएं, कर्तव्यहीन प्राणियों को कर्तव्यवाद में लाना, चरित्र में लाना यह राष्ट्र के लिए अनिवार्य है तो हे भगवन! हे ऋषिवर! मैं इसका राज्याभिषेक नहीं करूंगा। क्योंकि मुझे यह अवैध प्रतीत होता है। मेरे प्यारे! ऋषियों का हृदय, विवेकियों का हृदय तो निष्पक्ष होता है, अब महर्षि पुनस्त्य ऋषि ने विचारा, यह तो अब मैं क्या करू? ऋषि ने इस वाक को स्वीकार नहीं किया। याग को स्वीकार न करने से, महात्मा भुञ्जु मुनि महाराज, जो शाण्डिल्य गोत्रीय थे, उनको सभापति बनाया, और उनका मुनिवरों! देखो, राष्ट्रीय राज्याभिषेक उनके द्वारा कराया। तो विचार यह कि मुनिवरों! हमारे यहाँ, जो विवेकी पुरुष होते हैं, वह स्पष्टवादी होते है। मानो देखो, उस स्पष्टता को महात्मा कुक्कुट ने कहा था महर्षि पुलस्त्य से मानो यह तुमने बड़ा अप्रतम् अन्वेकृत किया है समाज के हनन का कार्य किया है ऋषिवर! तुमने तुम पौत्र के मोह में आ गएं हो परन्तु तुमने कर्तव्यवाद का तुमने विचार नहीं किया क्योंकि ऋषि महाराज मौन हो गएं परन्तु देखो, ऋषि ने यह कहा कि महर्षि लंका में अग्नि मैं अपने समक्ष की दृष्टिपात करूंगा वह समय आ जाएगा।

मेरे प्यारे! तुम्हें प्रतीत होगा महात्मा भुञ्जु ने और महात्मा कुकुट मुनि महाराज ने रावण को कई काल में उपदेश दिया परन्तु मैं इस विचार में साहित्य में जाना नहीं चाहता हूँ विचार विनिमय यह क्या मुनिवरों! देखो, हमारा विचार यह है क्या जो विवेकी पुरुष होते है आध्यात्मिवेत्ता पुरुष होते है चित्त के जानने वाले पुरुष होते है उनका जीवन बेटा! निष्पक्ष होता है। महान और पवित्र होता है उनकी पवित्रता प्रभु के समक्ष रहती है यह है बेटा! आज का वाक मैं कोई अधिक विवेचना देने नहीं आया विचार विनिमय यह कि दोनों प्रकार का

विज्ञान होना चाहिए दोनों प्रकार की धारा होनी चाहिए जब यह राष्ट्र और समाज ऊँचा बनेगा यदि मुनिवरों! देखो, भौतिक विज्ञान रहा तो भौतिकता का देखो, दुरूपयोग हो करके समाज भ्रष्ट हो जाएगा आध्यात्मिक वाद और भौतिकवाद दोनों सामान्यत्व हो करके रस समाज का उत्थान करें।

यह है बेटा! आज का वाक अब मुझे समय मिलेगा मैं बेटा! शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम अपने प्यारे! प्रभु का गुणगान गाते हुए आध्यात्मिक और भौतिकवाद दोनों के ऊपर विचार विनिमय करते चले जाएं यह है बेटा! आज का वाक अब वेदों का पाठ होगा, कल समय मिलेगा। कुछ सूक्ष्म चर्चाएं कुछ विज्ञान की चर्चाएं आध्यात्मिकवेत्ता की चर्चाएं कल प्रगट कर सकूंगा। आज का विचार समाप्त, अब वेदों का पाठ होगा।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो।

पूज्यपाद गुरुदेवः ओ३म् देवं दधि ब्रह्मणा गायन्ता मानं देवाः। ओ३म् तनु गायत्राः रेवं आभ्यां दधि गृहणां त्वा माः यत्रं माहः भगा आभ्यां देवाः। ओ३म् तनु मां हृदानि गता यत्र भा मानो आभाः। ओ३म् ब्रह्मा देवं मया सर्व भद्राः।

5 ०९ ०८ १९७३ गो मेध याग

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम, तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया हमारे यहां परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस परमपिता परमात्मा की आभा का प्रायः

वर्णन किया जाता है। क्योंकि वह जो जगत है यह मन्थन किया हुआ है। मेरे प्यारे! प्रभु ने, प्रकृति का मन्थन किया और मन्थन करने के पश्चात यह रचना दृष्टिपात आ रही है। जैसे बेटा! इस संसार की रचना का, मन्थन किया हुआ, उसी प्रकार, वेद रूपी जो पवित्र ज्ञान है, इसी प्रकार इस संसार का मन्थन करने के पश्चात यह भी हमें दृष्टिपात आता है। मेरे प्यारे! यह प्रभु का ज्ञान है और यह मन्थन किया हुआ ज्ञान है यह मन्थन किसने किया, यह प्रभु ने ही मन्थन किया, जब सृष्टि का प्रारम्भ होता है, तो सृष्टि के प्रारम्भ में मानो जैसे प्रकृति के परमाणु अनन्त माने जाते हैं, प्रकृति का कारण अनादि माना जाता है। इसको कोई रच सकता नही, इसी प्रकार वेद रूपी प्रकाश जो अथवा विद्या है, वह भी मुनिवरों! अनादि तत्त्वों के साथ में इसके गर्भ में रमण करता रहता है। क्योंकि वेद रूपी प्रकाश को कोई उत्पन्न नही करता, ज्ञान को कोई उत्पन्न नही करता जैसे प्रकाश सदैव ही सत्य है। इसी प्रकार प्रकाश की जो मीमांसा वह भी सत्य मानी जाती है।

मेरे प्यारे! सृष्टि के प्रारम्भ में मानो देखो, ऋषियों के द्वारा जो ज्ञान आता है, वह अनादि है। आत्मा के समीप रहने वाला है। क्योंकि वह जो वेद रूपी प्रकाश है, वह मानव के अन्तःकरण को पवित्र बनाता है, जिस प्रकार मुनिवरों! नेत्रों का सूर्य प्रकाशक बन करके आता है, वह नेत्रों का देवता कहलाता है। इसी प्रकार हे मानव! तेरे द्वारा, जो वेद रूपी सूर्य उदय हो जाता है, तो तेरा अन्तःकरण प्रकाशवान हो जाता है। और अन्तःकरण में जब प्रकाश हो जाता है, तो हे मानव! तेरे द्वारा अन्तर्द्वन्द्वता नही रहती। अथवा अज्ञान नही रहता, जब अज्ञान नही रहता, जब ज्ञान ही ज्ञान दृष्टिपात आता है, तो बेटा! इस संसार में विडम्बना भी नही होती जब विडम्बना नही होगी। तो मुनिवरों! देखो, चित्त एकाग्रित हो जाता है। चित्त में जब

अन्तःकरण में आता है तो बेटा! देखो, चित्त की संज्ञा भी समाप्त हो हो करके वह आत्मवत में रमण करती है। देखो, इस प्रकार प्रकाश बेटा! रमण करता है, एकोकी प्रकाश में रमण करता रहता है, बेटा! यह कैसी विचित्रता है, मेरे प्यारे! प्रभु की, आज हम उसी लिए, बेटा! वेद रूपी प्रकाश को अपनाना है। क्योंकि जिस प्रकाश को अपनाने से हमारा जीवन प्रकाशमान होता हो वही विद्या बेटा! कल्याणयुक्त कल्याणकारक है। आज हमें कल्याण को प्राप्त करना है, कल्याण के मार्ग को गमन करना है, और वह मार्ग है, प्रकाश वह मार्ग है, ज्ञान। वह मुनिवरों! देखो, ज्ञान और सन्निधान करते रहते है। जैसे बेटा! हमारे यहां प्रतिभाशाली, महापुरूषों ने नाना प्रकार की विवेचना की हैं, बेटा! मैं उन विवेचनाओं में तो नही जाऊंगा, परन्तु विचारना यह है कि नाना रूपों के साथ इसकी विवेचना होती रहती है। परन्तु सविता नाना प्रकार के रूपों में रमण करती रहती है यहां जब हम उन छन्दों के गर्भ में जाते हैं तो प्रत्येक छन्द हमें उस आभा में युक्त होता दृष्टिपात आता है जिस आभा में रमण करने के पश्चात हमारे जीवन की आभा एक मार्ग में रमण करने लगती हैं। मैं बेटा! आज के वेद पाठ में मैंने कई कालों में वर्णन करते हुए, कहा आज मेरे प्यारे! महानन्द जी! की कुछ प्रेरणा और वह प्रेरणा यह कि मैं यागों के सम्बन्ध में पुनरूक्ति मैं कई समय कर पाएं हैं।

आज भी मुझे स्मरण आता रहता है कि वेद के पठन पाठन के आधार पर क्योंकि यागों की चर्चाएं, मैं कई काल में प्रगट करता रहता हूँ हमारे यहां वेदों में यागों का बडा महत्व माना गया है और भिन्न भिन्न प्रकार के याग होते हैं मैंने बेटा! कई काल में याग की चर्चाएं प्रगट की, शिव नाम मुनिवरों! देखो, पर्वतों को कहा जाता है, और पर्वतों के गर्भ में जो खनिज है उसको जानने वाला वह याग कर रहा है। परन्तु वह

उसको शिव याग कहते हैं, शिव याग का अभिप्राय है कि शिव नाम परमात्मा को कहा गया है, मेरे प्यारे! देखो, शिवम् ब्रह्मे विष्णु हमारे यहां परमपिता परमात्मा के नाना पर्यायवाची शब्द हमारे यहां प्रायः आते रहते हैं, मैं उन पर्यायवाची शब्दों में परमात्मा का नामोकरण करने नही जा रहा हूँ, परन्तु विचार विनिमय यह है हमारा कि मैं बेटा! प्रत्येक स्थली में यागों का वर्णन प्रायः आता रहता है। हमारे यहां जन समाज में राष्ट्रीयता में प्रायः तीन प्रकार के यागों का वर्णन आता रहता है। मैंने इन यौगिक की चर्चाएं बेटा! कई काल में प्रगट की है इससे पूर्व शब्दों में मेरे प्यारे! महानन्द जी! की एक प्रेरणा है, न प्रतीत इनकी प्रेरणा इस प्रकार क्यों प्राप्त होती है, आज भी मुनिवरों! देखो, पुनः से यागों का वर्णन करने जाऊंगा, हमारे यहां माता वसुन्धरा की विवेचना होती रहती है। हे माँ वसुन्धरा तू हमारा कल्याण करने वाली है, यह परन्तु माँ है, जो मुनिवरों! देखो, माता हमारे हमे जो वसुन्धरा रूपों से वर्णित की जाती है। जो अपने में हमें बसाने वाली है। उस माता का नाम वसुन्धरा है, जिसके गर्भ में हम वशीभूत रहते हैं। हे माँ! तेरे गर्भ में हम सदैव वशीभूत रहते है। तो वास्तव में वेद ने तुझे वसुन्धरा कहा है, वसुन्धरा का अभिप्राय केवल यही नही है, यहां मुनिवरों! देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने बारह वर्ष का तप करने के पश्चात उन्होंने एक पोथी का निर्माण किया था, जिस पोथी का नाम शतपथ ब्राह्मण कहा जाता है। जो शत का पथिक होता है, वह ब्राह्मण है, उन्होंने उस पोथी में नाना प्रकार के यागों का वर्णन किया, गो पथ में भी आता रहता है। परन्तु उसमें तीन प्रकार के याग तो प्रमुख माने हैं, वास्तव में तो कन्या याग भी आता है देवी याग भी आता है विष्णु याग, ब्रह्मयाग, शिव याग, वृष्टि याग, पृत्रेष्टि याग नाना जैसे अहिल्या याग है, अजामेध याग है, अश्वमेध याग

है, और गो मेध याग है। तो भिन्न भिन्न प्रकार के यागों का वर्णन आया। परन्तु इन सर्वत्र यागों में परन्तु यदि लिया जाएं, तो कन्या याग को प्रमुख माना है। कन्या याग के पश्चात देवी याग को माना है। देवी याग के पश्चात, उन्होंने गो मेध याग को माना है। गो मेध याग के पश्चात उन्होंने अश्वमेध याग को माना है। अश्वमेध के गर्भ में, विष्णु याग ब्रह्मयाग शिव याग श्रुति याग और नाना और वृष्टि याग, यह इसके गर्भ में परणित हो जाते हैं।

तो मेरे प्यारे! वाक क्या कि हमारे यहां तीन प्रकार यागों की विवेचना किया करता हूँ, आज मैं पुनः से इन तीन यागों की विवेचना करने जा रहा हूँ। क्योंकि ज्यों की त्यों नही परन्तु पुनरूक्ति है, विचार क्या मुनिवरों! देखो, हमारे यहां तीन प्रकार के यागों का वर्णन प्रमुख आता है, सबसे प्रथम याग हमारे यहां गो मेध याग है द्वितीय याग अश्वमेध याग आता है, अश्वमेध याग के पश्चात अजामेध आता है। तो मुनिवरों! विचार किया जाता है कि हमारे यहां गो मेध याग क्या है? हमारे यहां गो नाम पृथ्वी को कहा है और गो नाम माता को भी माना है मेरे प्यारे! भिन्न भिन्न रूपों में भिन्न भिन्न प्रकार की विवेचना जैसे हमारे यहां गो मेध गो नाम माता का है और गो नाम पशु को भी माना है परन्तु कौन सी माता को हम गो कहते हैं जो गो हमें अपने में धारण करती है और हमें उत्पन्न करने वाली है माता का नाम गो कहा जाता है परन्तु देखो, गो पृथ्वी को भी कहते हैं, जिससे नाना प्रकार की वनस्पतियों का जन्म होता है, उस माता का नाम गो कहा गया है। गो मेरे प्यारे! अब गो नाम यहां पशु को माना है, कौन से पशु का नाम गो है? जो नाना बृखों की उत्पति करती है। नाना वनस्पतियों का पान करके दुग्ध को प्रदान करती है। मेरे प्यारे! इसी गो की व्याख्या ले करके भगवान कृष्ण ने, महाराज कृष्ण ने बेटा! देखो, गऊओं

की पूजा की पशुओं की पूजा की, गऊओं की पूजा की क्योंकि गऊ नाम इन्द्रियों का है पूजा का अभिप्राय है, इनका यथाशक्ति पालन करना, यथा शक्ति इन्हें स्थान देने का नाम गो है। उसकी पूजा है, तो मुनिवरों! देखो, सब महाराज भगवान कृष्ण के राष्ट्र में जब मुनिवरों! देखो, सांय काल को नाद होता, तो गऊं अपने अपने आसन पर स्थित हो जाती, और ऐसे दुग्ध को दुहा जाता, उनके राष्ट्र का कल्याण होता, जिससे जिस राजा के राष्ट्र में दुग्ध देने वाला पशु होगा, वह राष्ट्र सम्पन्न होगा, मेरे प्यारे! वहां का मानव समाज शक्तिशाली होगा मुनिवरों! विचार विनिमय यह कि गो नाम पशु का है। परन्तु गो नाम ब्रह्मचारी को कहते हैं, और यह गो नाम का जो पशु है, इसकी बड़ी विशेषताएं हैं। परन्तु यह नाना प्रकार की वनस्पतियों का पान करती है, दुग्ध को प्रदान कराती है, जिसको मानव पान करता है। उसी से घृत होता है जिससे याज्ञिक पुरूष, याग करते हैं, उसे देवताजन भी पान करते हैं, क्योंकि वह वनस्पतियों का रस है। मेरे प्यारे! गो जब दुग्ध देती है, तो वह वनस्पतियों का रस कहलाता है। जैसे द्यौ मण्डल का रस विद्युत माना गया है, इसी प्रकार हमारे यहां मुनिवरों! देखो, गो नाम जब दुग्ध देता है, नाना प्रकार की वनस्पतियां ही तो पान करता है, और इसके उत्तर में मुनिवरों! सुन्दर सा हमे दुग्ध प्रदान करता है। इसीलिए गो नाम के पशु को माता कहा है। मुनिवरों! माता क्यों कहते हैं? क्योंकि इसके प्रत्येक श्वांस में, प्रत्येक शरीर की गति में, कोई विज्ञान है। मुनिवरों! देखो, वह विज्ञान क्या है? मानो इसके रीढ़ के साथ में, एक सूर्यकेतु नाम की नाड़ी होती है, निचले भाग में पार्थिव कृतिक नाम की नाड़ी होती है, और मध्य भाग के साथ में, चन्द्रकेतु नाम की नाड़ी होती है, मुनिवरों! देखो, इसके ऊर्ध्व भाग में, मेरे प्यारे! देखो, इसको जो ऊर्ध्व भाग है मानो मध्य भाग के निचले स्थान का जो

भाग है, उसमें मुनिवरों! देखो, जेठाय और वशिष्ठ मण्डल की प्रत्येक प्रतिभा उसमें आती है। वहां एक यत्र है, नाड़ी है, जिस नाड़ी को स्वाति नाड़ी कहते हैं। जो नाड़ी मुनिवरों! देखो, कान्ति को ग्रहण करती है, उस कान्ति में सदैव ऐसी प्रतिभा है, कि प्रतिपदा आस्वात यच्येति, इन धातुओं का मिलान होता है, परन्तु जैसे वनस्पतियां पान करती है, जब ये शरीर में मन्थन होता है। मुनिवरों! देखो, वह जो सूर्य नाम की नाड़ी होती है उससे सम्बन्ध होता है क्योंकि चन्द्र केतु नाम की नाड़ी होती है उससे उससे रसों का स्वाकृति होता है। तो सर्वत्र मेरे प्यारे! देखो, रस उसमें परणित हो जाते हैं, स्वर्ण की मात्रा अधिक होती है, इसीलिए जो मानव गो घृत और गो दुग्ध को पान करता है, मेरे प्यारे! उसका शरीर बलिष्ठ होता है। क्योंकि उसमें स्वर्ण की मात्रा अधिक होती है। इसीलिए उसका पीत वर्ण होता है।

गो मेध याग

तो परिणाम यह कि मैं इस सम्बन्ध में अधिक विवेचना देने नही जा रहा हूँ, पशु की वास्तव में बेटा! हमें पूजा करनी है, जिस पशु की पूजा करने वाला, प्राणी वास्तव में मुनिवरों! देखो, सौभाग्यशाली कहलाता है। मेरे प्यारे! विचार क्या कि गो नाम ब्रह्मचारी को भी कहते हैं। कौन ब्रह्मचारी गो नाम का है? मुनिवरों! देखो, जो आचार्य कुल में प्रविष्ट होने वाला है, आचार्य कुल से पूर्व देखो, उसको पशु गो कहते हैं। जब वह आचार्य के कुल में प्रविष्ट हो जाता है, तो आचार्य उसे अपने द्वारा मुनिवरों! विद्या का अध्ययन करता हुआ मानो देखो, उसमें मेध का परणित कर देता है मेध नाम विद्या का है, मेध नाम ज्ञान का है, मेध नाम प्रकाश का है मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी को पशु

से मेध में परणित किया जाता है तो वह आचार्य मुनिवरों! देखो, गो मेध याग कर रहा है।

मेरे प्यारे! इसे गो मेध याग कहते हैं, गो मेध याग का अभिप्राय यह कि मुझे एक समय मेरे प्यारे! महानन्द जी! ने मुझे प्रगट कराया कि महाभारत काल के पश्चात जो मध्य का काल, उसमें प्रायः गो नाम की आहुति अग्नि में दी जाती थी, प्रायः कुछ ऐसा नही परन्तु देखो, यह पामर व्यक्तियों का कार्य है, वेद कहता है, गो वृताम गो वृणी अस्ता गो वाचा गो वृणी मेधा गो को मेध में परणित कर दो। मेध नाम विद्या का है, प्रकाश का है, मेरे प्यारे! देखो, वह जो ब्रह्मचारी माता के द्वार, पर माता की लोरियों में पनप रहा था, वह पशु के तुल्य है, उसे विद्या नही हैं। परन्तु यह संस्कार, संस्कारों को जागरूक बनाना है, इसको मेध में परणित कर दो मुनिवरों! देखो, वह अब गो मेध याग कहलाता है जब आचार्य को आचार्य तपा हुआ होता है, जितना मन्थन करने वाला आचार्य होगा, उतना ही ब्रह्मचारी सुन्दर बनेगा। ब्रह्मचारी उतना मेध में परणित होता रहेगा, और आचार्य यदि तपा हुआ नही है, तो मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचारी भी तपा हुआ नही होगा, मेध में परणित नही होगा। तो मेरे प्यारे! देखो, वेद नाम विद्या का है, जिसमें महानता हो, पवित्रता हो, उज्जवलता हो, मेरे प्यारे! उसका नाम हमारे यहां गो मेध माना है। जहां मुनिवरों! देखो, याग को मेध कहते हैं, वहां मुनिवरों! देखो, गुरु और शिष्य विराजमान हो करके, मन्त्रों के द्वारा याग करते हैं, उसको भी गो मेध कहते हैं। मेरे प्यारे! उसके द्वारा जो विज्ञान परमाणु उत्पन्न होता है उसको मन्थन करने वाले को याग करने वाले को गो मेध कहते हैं बेटा! विचार विनिमय क्या उसको गो मेध कहा गया है।

इसके पश्चात जब यह गो मेध पूर्ण हो लेता है, इसके पश्चात अश्वमेध आता है अश्व नाम घोड़े का है,

पशु का भी है, अश्व नाम सूर्य का भी है, अश्व नाम राजा का है, और अश्व नाम मेरे प्यारे! यहां आत्मा को भी अश्व माना है। मेरे प्यारे! आत्मा का अश्व क्यों माना है? मुनिवरों! देखो, अश्व पर सवार होने वाला, धारण करने वाला मेरे प्यारे! अश्वपति कहलाया है। और अश्वमेध नाम, उसके ज्ञान को कहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, यदि राजा के यहां राजा नाम अश्व का है और प्रजा का नाम मेध माना है, मुनिवरों! देखो, यहां परमपिता परमात्मा को अश्व माना है, और उसकी प्रतिभा है, उसको मेध माना है। मेरे प्यारे! देखो, जहां सूर्य को अश्व माना है, अश्व भी देखो, उनको नाना प्रकार उसको मेध माना है। जहां भिन्न भिन्न प्रकार से उसकी विवेचना की है, परन्तु आज मैं अधिक विवेचना न देता हुआ विचार यह मुनिवरों! यह कि अश्व नाम राजा का है, मेध नाम प्रजा का है। जिस राजा के राष्ट्र में अश्वमेध याग होते हों, मुनिवरों! देखो, एक सौ एक अश्वमेध याग करने वाले को इन्द्र कहा जाता है। हमारे यहां धिराजों की एक सभा होगी, और उस सभा का सभापतितव वह इन्द्र कहलाता है। जो अश्वमेध याग करने वाला हो, अश्वमेध याग कौन करता है। संसार को विजय करने वाला, जिसका संसार में मुनिवरों! कोई भी विरोधी ना हो, कोई राजा उस राजा पर आक्रमण करने वाला न हो, मानो देखो, वह राजा इतना शक्तिशाली होता है, और इतना उसका सुचरित्र ऊँचा होना चाहिए। जिससे वह मृत्यु से, ज्ञान से, बल से मुनिवरों! देखो, संसार को विजय करने वाला हो उस राजा का नाम अश्व कहा गया है, और वह राजा और प्रजा दोनों मिल करके राष्ट्रीयता में बेटा! अश्वमेध याग करते हैं। जो अश्वमेध याग कर लेता है, वह इन्द्र बन जाता हैं।

मेरे प्यारे! हमारे यहां जब अश्वमेध याग किया जाता हैं तो बाल्यकाल से अश्व को शिक्षा दी जाती है,

और जब युवा हो जाता है तो उसको संसार के प्रत्येक राष्ट्र में भ्रमण करने वाला होता है, और उसको कोई भी ग्रहण कर ले, तो राजा का कर्तव्य है, कि वह राजा संग्राम करें अथवा ब्रह्म ज्ञान से उसे मानो परास्त करने के पश्चात, तब उसको कोई भी प्राप्त करने वाला न हो, तो कोई भी ग्रहण करने वाला न हो, तो वह अश्व अपनी स्थली पर आ जाता है। राजा को उस काल में, मुनिवरों! अश्वमेध याग करना है। तो वह जो अश्वमेध याग है यह परम्परागतों का ज्ञान है, परम्परागतों का कर्म है, मेरे प्यारे! देखो, यह याग करने वाला, जो भी याग है, प्रत्येक राष्ट्र को अपने में धारण करता है। अपने ज्ञान वृत्तियों के द्वारा वह भी याग है। राजा का सर्वत्रतव याग यही है, परन्तु इसके पश्चात वह देव कर्म करता है, बुद्धिमानो के द्वारा, ब्राह्मणों के द्वारा, ब्रह्म ज्ञान के द्वारा याग करता है देव याग करता है। तो बेटा! वह अश्वमेध यागी कहलाता है।

मेरे प्यारे! और राजा एक सौ एक अश्वमेध याग करने वाला इन्द्र बनता है, बनता है, वह त्रिपुरी में रहता है। त्रिपुरी में उसका निवास रहता है, आसन रहता है। मेरे प्यारे! वह जो आसन है, वह जो उसका गृह है वही उसकी देखो, सर्वत्र राष्ट्रों की प्रतिष्ठा मानी जाती है। मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है कि हमारे इसी इन्द्र की उपाधि इसी प्रकार प्राप्त होती रही है। आओ, मुनिवरों! देखो, उसको अश्वमेध याग कहते हैं। हमारे यहां राजा महाराजा हरिश्चन्द्र भी देखो, अश्वमेध याग करते हैं। उन्होंने जब निन्यानवे याग पूर्ण होते थे उनके तो मुनिवरों! देखो, उस समय महाराज विश्वामित्र ने उनकी परीक्षा ली, याग में परणित कर दिया, इन्द्र की प्रेरणा से मेरे प्यारे! देखो, वह याग अश्वमेध कहलाया। तो मुनिवरों! देखो, वह अस्वात पिता राष्ट्र ब्रह्मे पिता सर्वत्र याग ब्रहे महाराज हरिश्चन्द्र ने देखो, सर्वत्र राष्ट्र ही

मुनिवरों! देखो, दान में परणित कर दिया था। वास्तव में राषट्रीय विचारों से, राष्ट्र देने का अधिकार नही होता परन्तु वह राजा ने सर्वत्र राष्ट्र को अधिपति ही दान में दान में दे दिया तो परिणाम क्या मुनिवरों! उसको अश्वमेध याग, इन्द्र बनने ही वाला था कि उसकी परणित कृतियां तरंगें उत्पन्न हो गईं। परन्तु मैं साहित्य में ले जाना नही चाहता हूँ, परिणाम क्या अश्वमेध याग वह मानव करता है, जो अपने राष्ट्र में अपने समाज में, कोई उसका द्रोही न हो अपने समाज में भी कोई न हो सुचरित्र होने चाहिए। सुविचारक होने चाहिएं, क्या इन्द्रियों का जो मन्थन करता है, उसके जो मानो देखो, उसके जो मन्थन किया हुआ जो घृत है, उसके पान करने वाला बेटा! धिराज वह अश्वमेध यागी होता है। वह याग करने का उसे अधिकार होता है।

मेरे प्यारे! देखो, तृतीय जो याग है, उसका नाम अजामेध है, मेरे प्यारे! अजा नाम दर्शन को कहते हैं, अजा नाम प्रकृति का है, अजा नाम मुनिवरों! आत्मा का जो किसी काल में भी ज्ञान का नाम भी अजय कोई भी देखो, अजय कृतियों में धारण नही करते, मेरे प्यारे! अजा नाम, अजा मेध नाम राजा के राष्ट्र में बेटा! अजा नाम के वैज्ञानिक होने चाहिएं। जो किसी से अजय न हो सके, परास्त न हो सके, ऊँचे ऊँचे वैज्ञानिक होने चाहिए, राजा के राष्ट्र में, मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है, मेरे प्यारे! महानन्द जी! मुझे एक बहुत प्रियता प्रगट कराया करते हैं कि महाराजा! विष्णु का जो वाहन है, वह गरूड़ है। परन्तु गरूड़ पर विराजमान हो करके विष्णु संसार का भ्रमण करते हैं। लोकों का भ्रमण करते हैं, तो मुनिवरों! देखो, यहां पर्यायवाची शब्दों में, गरूड़ नाम वैज्ञानिकों को माना है। जिस राजा के राष्ट्र में, अजामेध यागी पुरूष होते हैं, क्योंकि अजा नाम प्रकृति का, जो प्रकृति के परमाणुओं को मन्थन करने वाले होते हैं, परन्तु वहां गरूड़ास्त्र, वरुणास्त्र, वातायास्त्र,

धनास्त्र, देवी अस्त्र नाना प्रकार के अस्त्रों शस्त्रों का निर्माण जहां किया जाता हैं, मेरे प्यारे! राजा के राष्ट्र में ऐसे ऐसे यान होने चाहिएं। जो शत्रु को विजय करने वाले जो शत्रु को वह यान दृष्टिपात किए हैं, वायुयान होने चाहिए। मेरे प्यारे! जिनमें वायु तत्त्व प्रधान हो, अग्नि तत्त्व प्रधान हो, वरुणास्त्रों पर अग्नेस्त्र जिससे अग्नि को शान्त करने वाला हो। बेटा! तुम्हें प्रतीत है भगवान राम ने जब रावण से संग्राम किया था, तो महर्षि भारद्वाज ने अपनी सर्वत्र विज्ञानशाला को अर्पित कर दिया। और यह कहा था राम! तुम्हें रावण पर विजय पाना है यह लो मेरी विज्ञानशाला इसमें अग्नेयस्त्र है, वरुणास्त्र है, वरुणास्त्र में यह विशेषता होती है एक मानो अग्नये अस्त्र का प्रहार किया द्वितीय में वरुणास्त्र का प्रहार करके मुनिवरों! विशेषता होती है। यन्त्र में वह अग्नि को अपने में धारण कर लेता है। और मुनिवरों! देखो, जलों और पण समाप्त हो जाता है, इस यन्त्र का कोई प्रभाव भी नही होता। मेरे प्यारे! इस प्रकार का विज्ञान राजा के राष्ट्र में अजामेध यागों के द्वारा उत्पन्न होता है। अजामेध याग मेरे प्यारे! देखो, वैज्ञानिक जन याग करते हैं, यज्ञशाला में, और उन यागों में, नाना प्रकार की प्रतिभा उत्पन्न होती हैं। सुगन्धियां उत्पन्न होती है, उन्हें प्रायः धारण किया जाता है, और वह जो धारण करने वाली प्रतिभा है, मुनिवरों! देखो, वह नाना प्रकार के यानों को उत्पन्न करते हैं। मुनिवरों! विचार विनिमय क्या हमारे यहां गरुड़ यान होने चाहिए, जिसमें विष्णु विराजमान हो करके लोकों का भ्रमण करने वाला हो। विष्णु नाम राजा का है, गरूड़ नाम वाहन का है। मेरे प्यारे! वेद का ऋषि कहता है यज्ञाम् ब्रह्मवे सूर्य लोकाः हे यज्ञमान! तेरी गति मानो पृथ्वी मण्डल से ले करके मानो सूर्य मण्डलों तक होनी चाहिए मानो जेठाय, ध्रुव मण्डल तक होनी चाहिए। मैंने बेटा! बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय कराया

था। आज मैं बेटा! विज्ञान के युग में नहीं जाना नही चाहता हूँ। मैं विज्ञान के तथ्यों में नही जाना चाहता, विचार विनिमय यह कि हमारे यहां, मुनिवरों! देखो, वैज्ञानिक होने चाहिए, मुनिवरों! देखो, गरूड़ नाम विज्ञान का है, जिस राजा के राष्ट्र में गरूड़ नाम के वैज्ञानिक होते हैं, उस राजा क्योंकि वैज्ञानिकों का नाम ही गरूड़ है। जैसे बेटा! गरूड़ सर्प को निगल जाता है, इसी प्रकार, उस राजा के राष्ट्र में जो वैज्ञानिक तथ्यों की प्रतिभा को निगल करके, यन्त्रों के रूप में परिवर्तित कर देते हैं। उनका नाम गरूड़ कहलाता है।

आओ, मेरे प्यारे! मैं अधिक विवेचना तो देने तो नही आया हूँ, विचार विनिमय क्या उसका नाम अजामेध याग है, अजामेधों का अभिप्राय यह, कि हम वास्तव में अजय बने। हम किसी से परास्त न बनें। विज्ञान में, बुद्धि में, ज्ञान में, विज्ञान में यानो में उड़ान उड़ने वाले होने चाहिए। मेरे प्यारे! वह याज्ञिक पुरूष कहलाए जाते हैं। याज्ञिक पुरूष तो यानों में रमण करते हैं, याज्ञिक पुरूष की उड़ान तो ऊर्ध्वा गति में होती है। आओ, मेरे प्यारे! मैं आज क्या उच्चारण करने चला गया, कि तीन प्रकार के यागों का वर्णन करना है। मुनिवरों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, संसार का साहित्य, जब मैं साहित्यिक चर्चाओं में जाता हूँ, तो बेटा! मुझे मेरा हृदय गद गद होने लगता है। मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार के याग, मुझे स्मरण है, बेटा! महात्मा ध्रुव ने सबसे प्रथम ध्रुव यान का निर्माण किया, और ध्रुव मण्डल कितना प्रबल है, कितना ऊर्ध्वा में रहने वाला है, मुनिवरों! देखो, यह जैसे सूर्य है, मैंने कई काल में वर्णन किया। आज भी मैं करूंगा। जैसा हमारा यह पृथ्वी मण्डल है, ऐसी ऐसी तीस लाख पृथ्वियाँ सूर्य मण्डल में समाहित हो जाती हैं, और जैसा सूर्य एक सहस्त्र सूर्य, बृहस्पति में, और जैसा बृहस्पति है ऐसे एक सहस्त्र बृहस्पति आरुणि में, जैसा आरुणि है

बेटा! ऐसे एक सहस्त्र आरुणि बेटा! ध्रुव मण्डल में, समाहित हो जाते हैं। इतना विशाल मण्डल और महात्मा ध्रुव ने बेटा! देखो, आज से लाखों वर्षों पूर्व एक यान का निर्माण किया था, नारद मुनि की विज्ञानशाला में, मुनिवरों! देखो, नारद मुनि मुनि थे सर्वश्रेष्ठ मुनि थे, वह सदैव विज्ञान में रमण करते रहते थे। उनके द्वारा ऐसी ऐसी पादुकाएं थी, जिनमे बेटा! विराजमान हो करके, वह वायु यान में रमण करते थे। मेरे प्यारे! देखो, उन पादुकाओं के आधार पर, महात्मा ध्रुव ने बेटा! करोड़ो वर्ष की अवस्था के यान का निर्माण किया था, जिस यान में विराजमान हो करके, वह ध्रुव मण्डल की यात्रा करते थे। आज मैं उस विज्ञान में जाना नही चाहता हूँ, विचार विनिमय यह कि यह विज्ञान तो हमारा जन्मसिद्व अधिकार है, क्योंकि मानव जन्म लेता है, माता के गर्भस्थल से, पृथक होता है, तो बालक विज्ञान में रमण करने लगता है। मेरे प्यारे! देखो, वह वैज्ञानिक, उनको अजामेध याग करने की विद्या आती है। और अजामेध याग होने चाहिए, मेरे प्यारे! मुनिवरों! देखो, मेरे प्यारे! महानन्द जी! ने वर्णन किया, कि आधुनिक मध्य का काल ऐसा आया क्या अजा नाम बकरियों की आहुति देने लगे, बेटा! यह तो पामर व्यक्तियों का कार्य है। पुत्र! मानो यह महापुरूषों का कर्तव्य नही। क्योंकि देखो, अर्थों का अनर्थ करने से समाज भ्रष्ट हो जाता है और और अर्थों को शुद्ध रूप में लाने से समाज उन्नत हो जाता है।

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं अधिक विवेचना तो देने नही आया हूँ, केवल विचार विनिमय यह कि आज हम यागों का वर्णन करते रहें। यागों में परणित होते रहें, सदैव यागों में रमण करते रहें, संसार सागर से पार हो जाएं। यह है बेटा! आज का वाक्, आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम अपने प्यारे प्रभु का गुणगान गाते हुए, देव की महिमा को जानते

हुए, ज्ञान और विज्ञान में रमण करते हुए, हम यागों में रमण करते रहें, अब मुझे समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। आज का वाक समाप्त अब वेदों का पाठ होगा। इसके पश्चात यह वार्ता समाप्त हो जाएगी।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन्! आज्ञा

पूज्यपाद गुरुदेवः ओ३म् देवाः गृह वाचन्नः नमा रथं दधि ब्रह्म गणाः ओ३म् दधि रेवं मा वञ्चरी ब्रजा आभ्यां ऋषि ब्रह्म गणा ओ३म् ब्रह्म मणा देवं मया सर्वं भद्रा आनन्द मङ्गलम् भवति।

6 १० ०८ १९७३ शिक्षा का अधिकार किसको

अधिकार अनाधिकार की चेष्टा

आओ, मेरे प्यारे! हम एक दूसरे के एक धागे में, इन मनकों को पिरोईत करते चले जाए जिन मनकों को धारण करने से मानव के जीवन में एक प्रतिष्ठा आ जाती है। परन्तु यह जो विद्या है बेटा! यह परम्परागतों से ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में चली आई है। हमारे यहां यह विद्या अधिकार अनाधिकार को विचार करके इस विद्या को प्रदान किया जाता है। मेरे प्यारे! जब यह विद्या प्रदान की जाती है, तो निर्णय किया जाता है ब्रह्मचारी से, यह ब्रह्मचारी इतना योग्य है अथवा नही तो मुनिवरों! देखो, जब वह वाक प्रगट कर देता है कि यह योग्य है तो उस काल में बेटा! यह विद्या उसे प्रदान की जाती है जैसा यमराज व नाचिकेता की चर्चा आती है, जब यमराज से नाचिकेता ने कहा कि महाराज कि महाराज! मैं आत्मा के तत्वों को जानना चाहता हूँ, यह आत्मा शरीरों को त्याग करके कहां जाता है उस समय यमाचार्य ने बेटा! क्या कहा था तुम्हे प्रतीत है यमाचार्य ने कहा था हे ब्रह्मचारी! तू संसार के वैभव को क्यों नही प्राप्त करता, संसार के राष्ट्र को स्वीकार कर नाना पत्नीयां हों, नाना कामधेनु गऊं, तेरे

द्वारा होनी चाहिए। ऐश्वर्य सर्वत्र तेरे द्वारा हो, बालक नाचिकेता ने क्या उत्तर दिया जिज्ञासु ने बालक नाचिकेता ने यही कहा था क्या भगवन यह विद्या आप मुझे प्रदान करने इस द्रव्य का मुझे प्रलोभन इस संसार के द्रव्य का, वैभव का मुझे प्रलोभन दे रहे हैं। यह प्रलोभन तो भगवन ऐसा है, यह द्रव्य तो संसार का आज रहेगा, कल यह नही रहेगा। जब नही रहेगा तो कष्ट अपार होगा, और भगवन मैं इस द्रव्य को जानना चाहता हूँ, उस सम्पदा को जानना चाहता हूँ, जो भगवन इस शरीर को त्यागने के पश्चात भी वह सदा मेरे द्वारा बनी रहे। मेरे प्यारे! बालक जिज्ञासु ने जब यह कहा तो यमाचार्य का अन्तरात्मा गद् गद् हो गया और यह कहा कि यह ब्रह्मचारी तो इस विद्या का, तो इसे अधिकार है मेरे प्यारे! यहां नाना ऋषि मुनियों ने इसी प्रकार की प्रतिभा। अब यह बेटा! यह तो ब्रह्म विद्या की चर्चा आ गई। अब मैं तुम्हे कुछ राष्ट्रीय विचारधारा प्रगट कर रहा हूँ। उसे और श्रवण करो। मेरे प्यारे! अब समाज के स्तर पर आ जाओ, जिस वाक को मैं प्रगट करने जा रहा हूँ, मेरे प्यारे! हमारे यहां प्रत्येक अवस्था में राष्ट्रीय करण में राष्ट्रीय विचारधारा में अधिकार व अनाधिकार के ऊपर विचार विनिमय किया जाता है। यह आज नही परम्परा का शब्द है, बेटा! यह बहुत ही परम्परा का शब्द है। इसको मैं उच्चारण कर रहा हूँ मुनिवरों! देखो, द्वापर के काल में आ जाओ जब वहां भी उन्होंने अधिकार अनाधिकार की विवेचना होगी। हमारे यहां एक प्रश्न उत्पन्न होता है। संसार में बेटा! आज से साढे पांच हजार वर्षों पूर्व मानो एक विश्व संग्राम हुआ। जिस विश्व संग्राम में मुनिवरों! देखो, अट्ठारह अक्षौणी मानवीय दल समाप्त हो गया हमे। यह विचारना है कि इतना संग्राम क्यों हुआ? विश्व संग्राम क्यों हुआ इसका मूल कारण क्या बना। मैं इस सम्बन्ध में कुछ सूक्ष्म सी चर्चा प्रगट करना चाहता हूँ, मेरे प्यारे!

यह तो तुम्हे प्रतीत है कि मानो देखो, हमारे यहां महाराजा शान्तनु का वंशलज, और महाराजा शान्तनु के वंशलज में उनके पुत्र देवव्रत हुए और उनका संस्कार जब द्वितीय हुआ तो उनसे विचित्र, वीर्य हुए। परन्तु विचित्र वीर्य से दो पुत्र उत्पन्न हुए एक तो अन्ध था और एक पाण्डु था धृतराष्ट्र और पाण्डु परन्तु ये अप्रतम देवव्रत ने अपने पिता की इच्छा पूर्ण करने के लिए सङ्कल्प बद्ध हो गए कि उसके लिए उन्होंने भीष्म प्रतिज्ञा प्रदान की और वह प्रतीज्ञा ऐसी थी जो प्रतिज्ञा मानो क्या उसकी को व्रत कहते हैं। जिस प्रकार का जो व्रत धारण करता है उसी में प्रतिष्ठित हो जाता है। मेरे प्यारे! वह राष्ट्रपिता कहलाते थे। मेरे प्यारे! मुनिवरों! देखो, जब हमारे यहां महाभारत के काल में एक प्रथा थी और वह प्रथा मानवीय प्रथा थी मुनिवरों! देखो, महारानी अस्सुताम् धृतराष्ट्र की धर्मदेवी जिसको गान्धारी कहा जाता था। गान्धारी सदैव अपने पति की प्रतिज्ञा में कटिबद्ध रहती थी परन्तु उसका जो नियम था क्या जो भी राष्ट्रीय स्तर के प्राणी होते वह अपनी सन्तानों को त्याग करके उनका निधन हो जाता तो उनकी सन्तानों का वह स्वयं पालन पोषण करती। तो मुनिवरों! देखो, इस प्रकार गान्धारी के एक सौ एक पुत्र कहलाते थे। उनके गर्भ से उत्पन्न होने वाला मुनिवरों! देखो, सबसे प्रथम दुर्योधन, द्वितीय जरयोधन, तृतीय विक्रम, चतुर्थ में स्वाति, और मुनिवरों! पञ्चम में श्वेताम्बरी, और मुनिवरों! देखो, षष्टम में आक्रेति, और मुनिवरों! देखो, सप्तम में श्वानकेतु, और मुनिवरों! माधवाकृति ये आठ पुत्र कहलाते थे गान्धारी के। जो माता गान्धारी के गर्भ से जिन्होंने जन्म लिया। अब मुनिवरों! देखो, ब्रहे मानो अभ्यातम् में अब्रहे पुत्र कहलाते थे वह ऐसे थे जो मुनिवरों! देखो, राष्ट्रीय स्तर के प्राणी थे उनका निधन हो गया अनथाथ सन्तानों का वह पालन पोषण करते थे परन्तु उसमें यह नियम था

कि अपने पुत्रों में और उन पुत्रों में वह कोई अन्तर्द्वन्द स्वीकार नही करती थी तो इसीलिए विधाताओं में भी किसी प्रकार का मद नही था उनमें कि ये मेरे विधाता नही है तो इस प्रकार का उनका सङ्कल्प उनकी विचारधारा रहती परन्तु यह राष्ट्रीय स्तर पर उनका पालन होना। तो मुनिवरों! महाराजा देवव्रत के मस्तिष्क में और मुनिवरों! पांच पुत्र कुन्ती पुत्र कहलाते थे कुन्ती के तीन पुत्र थे दो पुत्र माद्री के कहलाये गये मानो देखो, महाराजा पाण्डु और देवव्रत में राज्य में स्वाति नामाम् राष्ट्रीय में जा करके उन्होंने मानो एक वैज्ञानिक यन्त्र को नष्ट किया और जो मानो स्वयम्बर में माद्री को भी विजय करके लाए। उनके दो पुत्र थे उनके दो पुत्र थे अश्विनी कुमार। मुनिवरों! देखो, जिनको हमारे यहां अश्विनी कुमार पुत्र कहा जाता है । उनके हमारे यहां मुनिवरों! देखो, ब्रहे कृति अस्वाताम मृकुताः ऐसा हमारे यहां माना गया जैसे जैसे युधिष्ठिर, अर्जुन, भीम, नकुल और सहदेव थे तो नकुल और सहदेव को दोनों को अश्विनी कुमार पुत्र माना गया है। परन्तु मैं एक विशेषता में जाना नही चाहता हूँ। विचार विनिमय क्या मेरे प्यारे! देवव्रत को इन सब ब्रह्मचारियों को शिक्षा दिलानी थी धनुर्विद्या अब मुनिवरों! देखो, उन्होंने अपने गुरु परशुराम के आश्रम में देवव्रत जी प्रगट हुए उनके द्वारा जब प्रविष्ट हुए तो उन्होंने कहा कहो राष्ट्रपिता तुम मेरे द्वारा क्यों आ पंहुचें? उन्होंने कहा कि महाराज कि मैं इसीलिए आ पंहुचा हूँ कि मेरी इच्छा है कि आप धनुर्विद्या को जानते हैं, उसमें परायण हैं। भगवन मेरी इच्छा यह है कि मेरा ये जो महाभारत राष्ट्र है। इनमें जो राजकुमार हैं मैं उन्हें धनुर्विद्या की विद्या प्रदान कराना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा बहुत अच्छा मेरे प्यारे! उन्होंने गमन किया और वह हस्तिनापुर में आ गए और उन ब्रह्मचारियों की एक पंक्ति लगाई, पंक्ति में स्थित करके उनके प्रत्येक

ब्रह्मचारी के मस्तिष्क का अध्ययन करना प्रारम्भ कर दिया, जब मुनिवरों! उनके गुण, कर्म स्वभाव को परशुराम ने जान लिया। तो उन्होंने यह कहा कि हे देवव्रत! ये जो ब्रह्मचारी हैं इनमें से कुछ ही ब्रह्मचारी हैं, जिन्हे धनुर्वेद की विद्या का जिन्हे अधिकार है उन्होंने कहा महाराज ये कौन कौन हैं। पांचों तो कुन्ती पुत्र हैं। पाण्डु पुत्र और गान्धारी पुत्रों में एक विक्रम है, एक स्वाति है, एक पुरोधा है, मानो देखो, पुरोधा जो प्रोह है। तीन पुत्र वह है, और पांच पुत्र मानो वह धनुर्विद्या के अधिकारी हैं अन्यथा औरों को यह धनुर्विद्या का अधिकार नही है। अब देवव्रत ने कहा कि महाराज कि मेरे लिए तो महाराज सर्वत्र ब्रह्मचारी एक से ही हैं उन्होंने कहा तो भई मैं इसमें असमर्थ हूँ। मैं अधिकारी को शिक्षा दे सकता हूँ, अनाधिकारी को मैं शिक्षा कदापि स्वीकार नही करूंगा क्योंकि अनाधिकारों के भुजों में यह विद्या जाने से रक्तभरी क्रान्ति आने का सदैव संदेह बना रहता है। इसीलिए मैं इस विद्या को कदापि प्रदान नही करुंगा। मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी देवव्रत ने इस वाक को स्वीकार नही किया, राष्ट्रपिता ने। परन्तु उन्होंने वह स्वीकार नही किया तो महाराजा परशुराम ने वहां से गमन किया।

7 १५ १२ १९७३ देवताओं के ऋण से अवऋण हों।

पितृ ऋण

तो मुनिवरों! देखो, वह माता पिता सदैव यह चाहते हैं, परन्तु देखो, किसी प्रकार का दुरित भाव पुत्र के हृदय में न आए, वह सदैव सदाचारी भी हो ब्रह्मचारी भी हो महान भी और देखो, पिता के ऋण से अवऋण होने का प्रयास करें। जैसा पुत्र माता पिता पुत्र दोनों मुनिवरों! देखो, अपने गृह में इसी प्रकार का ऋण है जो पितर ऋण कहलाता है हमें उनकी आज्ञा का पालन

करना है गृह को सुसज्जित किया है उसी विद्या को ले करके हम सदैव पालन करें मेरे प्यारे! देखो, कहलाया गया है, पिता का ऋण जो है, मानो जो पिता चाहता है, पिता सदैव यह चाहता है कि तेरे पुत्र में सर्वत्र गुण होने चाहिएं। मेरे प्यारे! देखो, पिता की सेवा उनके चरणों की वन्दना न की जाए, परन्तु जो उनकी आन्तरिक आत्मा की इच्छाएं हैं, आत्मा की जो प्रेरणा हैं, उसके अनुसार अपने मानवीय जीवन को ले जाना बेटा! यह मानव का यह पितर ऋण कहलाया गया है। जिसको माता पिता का ऋण है।

देव ऋण

परन्तु द्वितीय ऋण हमारे यहाँ देव ऋण माना जाता है। देव ऋण किसे कहते हैं? जो देवता हमें देते हैं, क्या देते हैं? जैसे सूर्य का प्रकाश हमारे जीवन को प्रकाशमान बनाता है, नेत्रों को प्रकाशमान बनाता है, मेरे प्यारे! वह सूर्य देवता है, चन्द्रमा हमें अमृत को भरण करने वाला है। सोम को प्रदान करने वाला है, अथवा सौम्य देने वाला है, उस सोम में जो चन्द्रमा हैं वह देवता कहलाता है। अग्नि हमें प्रकाश देती है, अग्नि हमें तेज देती है, हमारे शब्दों का वह प्रसारण करती है। मानो देखो, उसी प्रकार जो जल है, वह जल हमें सोम देता है, जल से ही संसार की उत्पति मानी जाती है। आज हमें वह देवता है वह जो जल देवता है जो हमारे जीवन का साथी बना हुआ है। माता के गर्भस्थल में भी जल रूप बन करके मानो देखो, वीर रूप जल रूप बन करके मुनिवरों! देखो, मानव शरीर का निर्माण होता है। मानव का लेपन होता है, शरीर का जब लेपन भी, उसी जल के द्वारा होता है। तो बेटा! हमें विचारना चाहिए कि आज हम उसके कितने बड़े ऋणी हैं, क्योंकि वह देवता कहलाता है मेरे प्यारे! देखो, जो अग्नि है वह शुष्क बनाती है, अहा! कैसा शुष्क बनाती

है, मानो उस लेपन को शुष्क बना देती है। वाह रे मेरे प्यारे! प्रभु तू कितना विचित्र है, तू कितना देव है, क्या तू माता के गर्भस्थल में लेपन को शुष्क बनाता है। अग्नि के द्वारा और वायु के द्वारा मुनिवरों! देखो, वह हमारे देवता कहलाए जाते हैं।

मुनिवरों! वह देवता अन्तरिक्ष में माता के गर्भस्थल में जो रमण करता है, यदि अन्तरिक्ष माता के गर्भस्थल में नही होगा, तो मुनिवरों! देखो, पुत्र का निर्माण किसी भी प्रकार ने हो सकेगा, मेरे प्यारे! वह देव है, वह माता पिता का तो ऋण है ही, परन्तु देवताओं का कितना विशाल ऋण है, जो हमें देते हैं, मानो देखो, नाना प्रकार के लोक लोकान्तर हमारे जीवन को संचारित कर रहे हैं, हमारे जीवन की एक आभा बने हुए हैं परन्तु हमें विचारना है कि वह जो देवता है उन देवताओं की हमें पूजा करनी है उन देवताओं के ऋण से हमें अवऋण होना है मुनिवरों! देखो, वह कैसे देवता हैं उन देवताओं के लिए हमें क्या करना है, जिन देवताओं के द्वार से मुनिवरों! देखो, कणों की उत्पति होती है, परमाणुअवाद की उत्पति होती है, उस परमाणुवाद को जो भरण है, वह अन्तरिक्ष में, अवकाश में माना जाता है। बेटा! वह वायुमण्डल में माना जाता है, मानो देखो, उन देवताओं से हमें अवऋण होना है। तो हमें अपने विचारों को सुन्दर बनाना है। हमें देववत विचारों को बनाना है, मेरे प्यारे! जैसे देवता देते हैं, उनकी कोई इच्छा प्रगट नहीं होती वह अपनी इच्छा कोई भी मानव के समीप व्यक्त नहीं करते, जैसे सूर्य प्रकाश देता है, मानो वह नाना प्रकार की वनस्पतियों को मानव के जीवन के लिए तपाता है मुनिवरों! वह गऊ के गर्भ में शरीर में देखो, घृत को बनाता है, अथवा उसका निर्माण करता है पशु को पशुवत में ही आनन्दवत को प्राप्त कराता है वही संसर्ग में आ करके देववत बन करके देवताओं की हवि बन

जाती है, मेरे प्यारे! देखो, नाना प्रकार की जो वनस्पतियां हैं। वह देवताओं की हवि बनती हैं, मानो देखो, उन देवताओं को हमे बलिष्ठ बनाना है, हम जो दुर्गन्धि में उन्हें सनित करते रहते हैं, उन्हे भरण करते रहते हैं। अब हमें बेटा! सुगन्धि प्रदान करनी है, और वह जो सुगन्धि है, मानो वह यागों के द्वारा उत्पन्न होती है। हे मानव! तू याग कर, देव पूजा कर, क्योंकि देव पूजा करने का अभिप्राय यह है कि हम देवताओं के समीप जाने का प्रयास करें, और देवताओं के समीप जाने का यदि कोई मार्ग है। तो मुनिवरों! वह कर्म एक याग माना जाता है, जो देवताओं के समीप विराजामन हो करके उस मानव शरीर में जो देवता अपना कार्य कर रहें हैं। वह देवता प्रसन्न होते हैं, और वह प्रसन्न हो करके मेरे प्यारे! देखो, देवता मानव को कीर्ति प्रदान करते हैं, यश देते हैं, मानो श्री उनके चरणों में ओत प्रोत हो जाती है। मेरे प्यारे! मैंने बहुत पुरातन काल में नाना प्रकार की व्याख्या करते हुए ऐसा कहा है, क्या संसार में मेरे प्यारे! यह जो श्री है, यदि मानव उनके द्वारा देवताओं का पूजन नहीं करता, देवताओं से अवऋण होने का प्रयास नहीं करता तो मुनिवरों! देखो, यह जो द्रव्य है, यह जो श्री है, यह मानव के द्वारा आती ही रहेगी, भरण ही करती रहेगी, इसका यदि सदुपयोग न होगा, यदि इसके द्वारा हम धर्म को नहीं सीचेंगे, हम यदि धर्म को चरेंगे, हम यह मुनिवरों! अपने सदाचार को ऊँचा नहीं बना सकेंगे इसका आश्रय ले करके तो जानो बेटा! यह लक्ष्मी ही हमारे मानव जीवन के लिए घातक बन करके रह जाती है।

मेरे प्यारे! मैंने कई काल में एक वाक प्रगट करते हुए कहा था बहुत परम्परा का वह वाक है एक समय बेटा! देखो, स्वादस नाम के राजा थे स्वादसकेतु के राजा मुनिवरों! देखो, जो बृहि कृतिक राष्ट्र में कुतिक वंशलज में कहलाए जाते हैं। कहा जाता है मुनिवरों!

देखो, एक समय एक प्रकार की आख्यिकाएं हैं और वह आख्यिकाएं क्या हैं, एक समय बेटा! लक्ष्मी और मुनिवरों! देखो, विष्णु भगवान दोनो का शास्त्रार्थ हुआ और दोनो के शास्त्रार्थ में यह वाक प्रारम्भ होने लगा, लक्ष्मी बोली कि महाराज! मैं प्रबल हूँ। वह विष्णु बोले कि कदापि नहीं देवी! जहाँ मेरा वास होता है, वहाँ मानो तेरा कोई महत्व नहीं रहता, लक्ष्मी ने कहा कदापि नहीं भगवन! जहाँ मेरा वास होता वहाँ आपका कोई महत्व नहीं रहता, मेरे प्यारे! दोनों में शास्त्रार्थ हुआ, परन्तु दोनों एक दूसरे की परीक्षा में परणित हो गएं। मेरे प्यारे! देखो, लक्ष्मी ने भगवान विष्णु के द्वार से गमन किया भ्रमण करते हुए वह मुनिवरों! देखो, स्वान केतुक नाम के राजा के द्वार पर आ पंहुची आ जाने के पश्चात आचार्य ने और भी उनके पुरोहितो ने कहा राजन्! ऋषि बहुत ऊँचा है, ऊर्ध्वा गति वाला है, मानो देखो, वे परमपिता परमात्मा से सदैव वह मिलान करता रहता है। परन्तु जब राजा ने ऋषि की प्रसंशा श्रवण की तो राजा के मन में श्रद्धा उत्पन्न हो गई, राजा ने कहा हे भगवन! आओ, आप मेरे महान गुरु हैं, आत्मिक गुरु कहलायें गयें हैं, उन्होंने कहा धन्य हैं, आप अन्न इत्यादि पान कीजिए भगवान विष्णु बोले सन्यासी जी बोले हे राजन्! मैं उस समय भोजन कर पाऊंगा, जब मेरे लिए एक ऊत्तम सा स्थान होगा मुनिवरों! देखो, राजा को तो आज्ञा की देरी थी। परन्तु वहाँ विरोचन इत्यादियों ने एक सुन्दर उन्होंने भव्य भवन का निर्माण किया। भयंकर असुतम मार्ग में मेरे प्यारे! सुन्दर वाटिका में उन्होंने भव्य भवन का निर्माण किया, भगवान विष्णु को वहाँ प्रविष्ट किया गया, वह प्रवेश करने लगे, परन्तु उस समय वह भोजनानि प्रव्हे असुताम राजा के यहाँ उस समय उन्होंने भोजन का पान किया, कहा जाता है, राजा के हृदय में ऐसी श्रद्धा उत्पन्न हुई, क्या प्रथम राजा भोजन ऋषि को कराते

उसके पश्चात मुनिवरों! पति पत्नी भोजन करते, जब ऐसा कई समय प्रथम कार्य चलता रहा कहा जाता है। जब लक्ष्मी ने यह स्वीकार कर लिया, क्या भगवान विष्णु का अधिपथ्य हो गया है। एक समय बेटा! वह लक्ष्मी भी अपना भिखारन का स्वरूप बना करके वह मेरे प्यारे! राजा के द्वार पर आ पंहुची, राजा ने कहा मातेश्वरी! भोजन कीजिए, उस समय कहा हाँ पुत्र! मैं भोजन अवश्य कर पाऊंगी, मेरे प्यारे! कहा जाता है उन्होंने उन्हे भोजन का पान कराया। वह जो भोजनम् ब्रह्मे कृता मेरे प्यारे! वह भोजन राजा के पात्रों में न करके अपनी गुदड़ी में से कृताम् मुनिवरों! पांच पात्र स्वर्ण के निकासे और यह कहा कि मैं जिस पात्र में एक समय भोजन पान कर लेती हूँ। उसमें द्वितीय नहीं कर पाती, कहा जाता है मुनिवरों! राजा ने यह विचारा यह कैसी भिक्षुक है। मानो जो यह स्वर्ण के पात्रों में भोजन करती है, यह तो बड़ी द्रव्यपति है, मुनिवरों! राजा को उस स्वर्ण को अपनाते हुए यह ध्यान हुआ, यदि यह भिखारन मेरे राष्ट्र में कुछ समय वास करेगी, तो मेरा राष्ट्र तो स्वर्णपति बन जाएगा। राजा के मन में बेटा! जब यह भावना उत्पन्न हुई, तो मुनिवरों! देखो, लक्ष्मी नित्यप्रति जितने समय वह भोजन करती उतने समय वह पात्र राजा को प्रदान करती, मेरे प्यारे! राजा मोहित हो गएं, उनके स्वर्ण पर मुनिवरों! एक माह रहने के पश्चात उन्होंने वास के पश्चात कहा राजन अब मेरा यहाँ से गमन हो रहा है उस समय राजा ने कहा कदापि नहीं लक्ष्मी तुम मेरे गृह में मातेश्वरी वास करो उन्होंने कहा कि राजन मेरा तो इतना ही समय था उन्होंने कहा माता तुम किसी प्रकार मेरे गृह में वास करोगी भी अथवा नहीं उन्होंने कहा एक प्रकार कर सकती हूँ। वह जो तुम्हारे यहाँ वाटिका में साधु रहता है यदि वह न रहे तो मैं तुम्हारे गृह में वास कर सकती हूँ जब ऐसा उन्होंने वाक प्रगट किया तो राजा ने कहा हे मातेश्वरी! मैं इस

कार्य को कदापि नहीं कर पाऊंगा क्योंकि वह तो मेरे प्रभु हैं उन्होंने कहा तो जहाँ वह है वहाँ मेरा क्या कार्य जब ऐसा लक्ष्मी ने कहा परन्तु लक्ष्मी से बोले कि हे मातेश्वरी! तुम कुछ ऐसा उपाय निर्णित करो जिसे हम अपने मुखारबिन्द से भी न कहें और उनका प्रस्थान हो जाएं लक्ष्मी बोली क्या यह तो बहुत ही सुन्दर एक उपाय है क्या तुम उन्हें भोजन न दो वह स्वयं यहाँ से अपना प्रस्थान कर पायेंगे जब ये देखो, लक्ष्मी ने ऐसा कहा मुनिवरों! देखो, भगवान विष्णु को न तो भोजन पंहुचा और महाराज विष्णु ने बेटा! वहाँ से प्रस्थान किया मेरे प्यारे! ऋषिवर! जब वह अपने गृह में प्रविष्ट हो गएं अब लक्ष्मी उनके गृह में वास करने लगी कहा जाता है मुनिवरों! अब लक्ष्मी अपना पुनः गमन करने लगी राजा ने कहा महाराज! मैंने तो अपने प्रभु के कथानुसार अपना यह कार्य किया आप का यहाँ से यदि गमन हो रहा है, तो माता मेरा राष्ट्र तो शून्य हो जाएगा लक्ष्मी बोली हे राजन्! तुम्हे यह प्रतीत है, क्या लक्ष्मी तो वहाँ रहती है, जहाँ धर्म होता है। हे भगवन! जब मेरे प्रभु ही मेरे स्वामी को तुमने अपने मानो देखो, अपने पगों से ठुकरा दिया, यदि मैं तुम्हे पांच पात्र स्वर्ण के न दूंगी, तो कल को तुम मुझे भी अपनी दूरिता से अपने गृह से पृथक कर दोगे। मेरे प्यारे! लक्ष्मी के इन वचनों को पान करके राजा का हृदय अस्वात हो गया उन्होंने कहा धन्य है। यह क्या हुआ? हे लक्ष्मी! वास्तव में मेरा प्रभु चला गया, क्या वही धर्म था? उन्होंने कहा हाँ धर्म था, जो मानव को एक महानता की वेदी पर ले जाने का प्रयास करता है। यदि वह उसको अपने से दूरी कर देता है, उस मानव का संसार में प्राण चला जाता है, रह भी क्या जाता है?

लक्ष्मी का सदुपयोग

मेरे प्यारे! देखो, लक्ष्मी ने भी वहाँ से प्रस्थान

किया, जब वहाँ से वास करने वाली लक्ष्मी ने अपना प्रस्थान किया कहा जाता है। मुनिवरों! देवी ने पात्र दिए थे, वह पात्र न प्रतीत कहां चले गएं, बेटा! प्रतीत नहीं परन्तु देखो, राजा लज्जित हो गएं, राजा ने अपनी पत्नी से कहा कि देवी यह क्या हो गया? देवी बोली कि प्रभु! जो मानव धर्म और मानवता को त्याग देता है, जो मानव मानो देखो, प्रभु को ठुकरा देता है। वह लक्ष्मी उस मानव की यही दशा हुआ करती है, तो परिणाम क्या बेटा! इन वाक उच्चारण करने का हे मानव! आज जो मानव देखो, देवताओं के ऋण से अवऋण नहीं होता, देवताओं का ऋण क्या है, धर्म है, मानवता है, याग है, मेरे प्यारे! जिस गृह में लक्ष्मी का सदुपयोग होता है। धर्म में परणित कराता है, लक्ष्मी को मेरे प्यारे! उस गृह में देखो, लक्ष्मी का वास ऊँचा बन जाता है। उस गृह में लक्ष्मी प्रबल हो जाती है, और धर्म की प्रतिष्ठा हो जाती है, मेरे प्यारे! जहाँ धर्म है, वहीं लक्ष्मी का वास होता है, विचार विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, आज हमें याग कर्म करना चाहिए। जिन यागों के द्वारा धर्म में ही मुनिवरों! देखो, द्रव्य का सदुपयोग होता रहे, तो उसका परिणाम यह होता है कि हम देव पूजा कर सकते हैं, जिस लक्ष्मी के द्वारा देव पूजा होती है, देव पूजा का अभिप्राय यह है, क्या मानो उन देवताओं का सदुपयोग करना, उन देवताओं का बुद्धियुक्त विज्ञान के आङ्गन में रमण करते हुए, बेटा! उसका सदुपयोग होता रहे। तो हम इससे अवऋण हो सकते हैं जैसे एक मानव अग्नि की पूजा करना चाहता है अग्नि की पूजा का अभिप्राय यह है अग्नि का सदुपयोग करना यह उसकी पूजा मानी जाती है जैसे जल की पूजा करना चाहता है जल की पूजा का अभिप्राय यह क्या जल मानो देखो, एक जलम ब्रह्मे अमृत है उसका सदुपयोग करना मुनिवरों! देखो, कृषक उसी जल इत्यादि से जल उत्पन्न करना उसी आपो से

अपने जीवन को ऊँचा बनाना अहा! उसका वही आदर है वही उसका सदुपयोग है, वही उसकी पूजा मानी जाती है मानो इसी प्रकार जैसे वायु है वायु का हमें पूजन करना है वायु से हमें विज्ञान के आधार पर नाना प्रकार के कणों को एकत्रित करते हुए हमें प्रसारण शक्ति को जान लेना चाहिए वह उसकी पूजा है। मेरे प्यारे! देखो, अन्तरिक्ष में शब्द ओत प्रोत रहता है, अन्तरिक्ष की आभा को जानना उसमें रमण करना मेरे प्यारे! देखो, यह उसकी पूजा मानी जाती है। पूजा का अभिप्राय क्या है? उसको अपने में सदुपयोग करना उसको अपने में धारण करने का नाम मेरे प्यारे! देखो, उसकी पूजा कहलाई जाती है, हमें जब यह विचारना है कि हमें उसकी पूजा करना है, हमें उससे अवऋण होना है, तो बेटा! देवपूजा करनी है, हमें देवताओं को जिनको हम दुर्गन्धि से युक्त करते रहते हैं। वहाँ हमें सुगन्धि युक्त बनना है, हमें वहा याग करना है, शब्दों से ऊँचा वाक उच्चारण करना है, मेरे प्यारे! देखो, वह देवपूजा कहलाती है। अब देवता दो प्रकार के होते हैं, जैसे हमारे यहां पूजा देवताओं की आभा में दो प्रकार के देवताओं की व्यख्याएं आती रहती हैं। एक व्याख्या तो देखो, जड़ देवताओं की है, द्वितीय व्याख्या हमारे यहाँ चैतन्य देवताओं की मानी जाती है। चैतन्य देवता कौन है? जो पुरोहित हैं जो मानो देखो, बुद्धिमान है। हमें उनकी पूजा करनी है, मेरे प्यारे! देखो, जैसे आचार्यजन हैं पुरोहित जन हैं अपने गृह में आते हैं मानो उनका वास होता है, उनका पूजन करना द्रव्य के द्वारा मानो जो वह चाहते हैं, परन्तु जो वह उपदेश देते हैं, उसके अनुसार जीवन को ऊँचा बनाना उनकी आवश्यकताओं को जानने का नाम मेरे प्यारे! वह बुद्धिमानो का पूजन करना है। पूजन का अभिप्राय क्या है? क्या उनके जीवन को और उनकी आवश्यकताओं को ले करके जो मुनिवरों! देखो, अपने

गृह को अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाने का प्रयास करते हैं, बेटा! वह चैतन्य देवता बेटा! उनकी पूजा करते हैं। पूजा का अभिप्राय यह कि वह जो ब्राह्मण जन है, जो ब्रह्म को जानने वाला ब्रह्म को चरने वाला है। मेरे प्यारे! देखो, ब्राह्मण है, उस ब्राह्मण की पूजा का अभिप्राय मानो देखो, उसकी आवश्यकताओं को जानना और जो उसके मनों की इच्छा है, मानो जो सत्यता में परणित होने वाला आकांक्षा उनको पूर्ण करने का नाम वह उसकी पूजा कहलाई जाती है। जैसे बेटा! तुम्हें प्रतीत होगा मैंने कई काल में तुम्हे व्याख्या प्रगट करते हुए कहा है, एक समय बेटा! महाराज रघु के यहाँ मुनिवरों! देखो, महाराजा वत्सल ब्रह्मचारी वरतेन्तु के शिष्य उनके द्वार पर आए, परन्तु देखो, महाराज रघु ने उनकी पत्नी ने मानो जब द्रव्यहीन हो गएं, तो याग में पूर्ण किया था, मेरे प्यारे! महाराज कुबेर से उनका आक्रमण हुआ, परन्तु आक्रमण क्या, वह स्वप्न में ही सब द्रव्य अर्पित कर गएं थे, और यह उन्होंने कहा था हे राजन्! आज तो रघु वंश का आज तो महाराज दिलीप के वंशलज है, आओ, संग्राम क्यों करते हैं, जितना द्रव्य आपको चाहिए, वह मेरे कोष में से ले जाईएं, परन्तु वह द्रव्य ले करके महारजा रघु ने देखो, महाराजा वत्स ब्रह्मचारी को प्रदान किया, परिणाम क्या चौदह लाख मुद्राएं प्रदान की, क्योंकि वह उनका वह अपने गुरु से एक वचन था, मेरे प्यारे! देखो, उन्हें प्रदान किया क्योंकि वह उनका कर्तव्य था वह उस ब्रह्मचारी की उस बुद्धिमान की मेरे प्यारे! वही पूजा कहलाई जाती है। मुनिवरों! तुम्हे यह प्रतीत होगा, राजा दशरथ के यहाँ मुनिवरों! देखो, महाराजा विश्वामित्र जब याग कर रहे थे, तो दैत्य जन उनके द्वार पर आते, परन्तु दैत्यों के आने के पश्चात उनके याग को वह भ्रष्ट कर जाते थे, महाराज विश्वामित्र ने यह विचारा अब मैं क्या करूं? परन्तु उन्होने एक प्रतिज्ञा की हे राक्षको! हे दैत्यों! मैं

राजा रघु वंश में जाऊँगा, प्ररन्तु देखो, राजा अज के पुत्र दशरथ है, उनके राजकुमारों को ला करके, तुम्हारा विनाश कराऊँगा, कहा जाता है मुनिवरों! देखो, महाराजा विश्वामित्र ने यह प्रतिज्ञा की, इसी प्रतिज्ञा के साथ साथ मेरे प्यारे! उन्होंने वहाँ से गमन किया भ्रमण करते हुए वह मुनिवरों! देखो, राजा दशरथ के द्वार पर आ पंहुचे, महाराजा दशरथो गुप्तां ब्रहे अस्ति ऋषि असुता देवताओं का आगमन प्राप्त करते ही उन्होंने अपने मन मे यह विचारा कि यह तो ऋषिवर मेरे द्वार पर आ गएं हैं। उन्होंने उनके आसन को त्याग करके उनके चरणों में ओत प्रोत हो गएं, सर्वत्र सभासद मुनिवरों! उनके चरणों में ओत प्रोत हो गएं, ओत प्रेत हो करके राजा ने अपनो स्थान प्रदान किया, आओ, भगवन! पधारो वह विराजमान हो गएं. राजा दशरथ ने कुछ अन्न इत्यादि का पान कराने के पश्चात ऋषि से कहा कहो भगवन! आप ने इस आसन को कैसे पवित्र किया, महाराज विश्वामित्र ने कहा हे राजन्! मैं इसीलिए तुम्हारे द्वार पर आया हूँ, मुझे राम और लक्ष्मण दोनों राजकुमारों को प्रदान करो, क्योंकि मैं अपने याग को पूर्ण करा रहा हूँ, उस समय राजा दशरथ बोले कि महाराज! मैं क्षत्रिय हूँ, मैं राजा हूँ, मेरा यह कर्तव्य है कि मैं तुम्हारे याग को पूर्ण कराँऊगा। उन्होंने कहा कि मैं कदापि भी नहीं ऐसा नहीं कर पाऊँगा, क्योंकि मुझे राजकुमारों को अपने याग को पूर्ण कराना है, मेरे प्यारे! जब उन्होंने ऐसा कहा राजा बोले कि महाराज! यह बालक तो अबोध है, मानो सूक्ष्म है, अभी विद्यालय से आयें हैं, मानो देखो, वह तुम्हारे याग को पूर्ण नहीं करा सकेंगे। उन्होंने कहा कि महाराज! मुझे तो इन्हीं को ले जाना है, परन्तु इतने में हमारे यहाँ परम्परो में राजा रघु के यहाँ उस वंशलज में यह परम्परा थी, क्या जहाँ राज स्थलों पर राजा विराजमान हो करके न्याय करते थे, इसी प्रकार मेरे प्यारे! उसी आसन पर विराजमान हो

करके मुनिवरों! उनकी पत्नीयां देवी देखो, न्यायालय में विराजमान रहती थी, माता कौशल्या उस स्थली पर विराजमान थी, कौशल्या ने कहा हे राजन्! तुम इतने मोह आतुर क्यों हो रहे हो? मानो देखो, मैंने आज के दिवस के लिए अपने पुत्र को जन्म दिया था, यदि मेरा पुत्र एक ऋषि के याग को भी पूर्ण नहीं करा सकता, तो क्या मेरा यह गर्भाशय मानो यह निरर्थक हो जाएगा। मेरे प्यारे! माता ने जब इन शब्दों को उच्चारण किया, तो मुनिवरों! देखो, सर्वत्र सभा मौन हो गई, राजा भी मौन हो गया, और उसने कहा राजन! तुम मोह में न आओ, क्योंकि देखो, राजकुमारों का यह कर्तव्य है। मानो देखो, यदि इस कर्तव्य का पालन याग को पूर्ण नहीं करा सकते, देवताओं के ऋण से यदि वह अवऋण नहीं होंगे, तो मानो देखो, हमारा यह राष्ट्र और यह समाज यह कैसे ऊँचा बनेगा? मुनिवरों! देखो, माता कौशल्या को उन शब्दों को पान करने वाले मेरे प्यारे! राजा दशरथ मौन हो गएं, और राजा ने कहा धन्य है देवी! मैं तुम्हारी आज्ञा का पालन करूंगा, मेरे प्यारे! देखो, रजा ब्रह्मणे कृतं प्रव्हा अस्ति सुप्रजा कहा जाता है राजा दशरथ ने उन राजकुमारों को प्रदान कर दिया, लीजिए प्रभु मेरे प्यारे! वह देव पूजा कहलाई जाती है। मुनिवरों! जो चैतन्य देवता जो पुरोहित हैं, जो राष्ट्र का उत्थान करना चाहते हैं जो समाज को उन्नत बनाना चाहते हैं, वेद की परम्परा को ऊँचा बनाना चाहते हैं, मेरे प्यारे! देखो, पुरोहित राजकुमारों को ले करके और मुनिवरों! स्वस्ति स्वस्ति कह करके राष्ट्र से उन्होंने वहाँ से गमन किया, मेरे प्यारे! देखो, अस्त्रों शस्त्रों की विद्या पान करने वाले महान पुरोहित मानो देखो, वह देवता थे, देवता कौन होता है? जो अपने वमन की हुई अपनी विद्या को ग्रहण की हुई विद्या को मानो उसका वमन करता है, और ब्रह्मचारी को क्रियात्मक में लाने का प्रयास करता है। मेरे प्यारे! वह

विद्या एक पवित्र विद्या कहलाई जाती है, अहा! राजकुमारों को मुनिवरों! देखो, विद्या प्रदान करने लगे, उसका परिणाम मेरे प्यारे! अस्त्रों शस्त्रों में पारायण कराएं धनुर्वेद की विद्या प्रदान करते हुए राजा ने उन राजकुमारों को बेटा! सुसज्जित बनाया उनके वीरतव से उनके मनों में उनके शरीरों में वीरतव की एक पवित्र भावना परणित कर दी। मेरे प्यारे! देखो, वे देव पूजा कहलाती है, जिससे हमें अवऋण होना है, हमारे यहाँ दो प्रकार के देवता कहलायें जाते हैं, आज मैं बेटा! इनकी व्याख्या बेटा! देखो, विस्तार से नहीं करना चाहता हूँ, क्योंकि देवताओं की पूजा का अभिप्राय क्या है? हमें अग्नि के परमाणु और जल के परमाणु, अन्तरिक्ष के परमाणु, वायु परमाणु, पृथ्वी परमाणु इन पञ्च महाभौतिक परमाणुओं का मिलान करना भी हमारे यहाँ होना चाहिए। इन देवताओं की यही पूजा है, जो उनके गृहों में जो हमें नित्य कर्म वह प्रदान करते हैं। उन परमाणुओं का मिलान करना राष्ट्र और समाज को उन्नत बनाना इनसे बेटा! हमारा यज्ञ रूप होना है, मानो देखो, इसको हम मुनिवरों! देखो, जहाँ पितृ ऋण है, वहां देव ऋण है, और देव ऋण के पश्चात मुनिवरों! देखो, ऋषि ऋण कहलाया गया है, ऋषि ऋण का अभिप्राय क्या है?

बेटा! ऋषि कहते हैं, तपस्वी को हमें प्रायः तपस्या करनी चाहिए, उनके ऋण से यदि हमें अवऋण होना है, तो मेरे प्यारे! हमें तपस्वी बनना है, और तप किसे कहते हैं? मैंने तप की मीमांसा करते हुए कई काल में कहा है, मेरे प्यारे! इन्द्रियों के निग्रह करने का नाम तप है, तप किसे कहते हैं? मेरे प्यारे! देखो, धर्म के दस लक्षणों की व्याख्याओं का नाम उनको धारण करने का नाम देखो, मेरे प्यारे! तप कहा जाता है। सबसे प्रथम हमारे यहाँ अहिंसा आती है, सत आता है, अस्तेय आता है, ब्रह्मचर्य आता है, यह मानो यम और

नियम का पालन करने वाला जो मानव है, वही मुनिवरों! देखो, यहाँ ऋषि ऋण से अवऋण हो सकता है। आज हमें ऋषि ऋण से अवऋण होना है, तो ऋषियों का जो तपश्चर है, मानो ऋषि मुनियों का जो एक मानवीय उनकी एक धारा है, उसे अपनाना उसे क्रियात्मक में लाने का नाम मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ऋण कहलाया गया है, ऋषि ऋण का अभिप्राय क्या है, आज हमें मुनिवरों! देखो, प्रत्येक वस्तु के ऊपर अनुसन्धान करना है अनुसन्धान करते हुए उनकी जो लेखनियाँ हैं उनका जो विचार है, उनकी जो तपश्चर्य के ऊपर अनुसन्धान है, उसे धारण करना उसे अपनाना इसे अपनेतव में रमण करने का नाम बेटा! देखो, वह ऋषि ऋण कहलाया गया है। हमें उससे अवऋण होना है, तो हम सदैव ऋषियों का आज्ञाओं का पालन करते रहें, ऋषि कहते हैं हे मानव! तू अपनी आत्मा को ऊँचा बना। हे मानव! तू आत्मा को ऊँचा बना क्योंकि आत्मा का जो भोजन है, वह ज्ञान है, आत्मा का जो भोजन है, वह तप है, आत्मा का जो भोजन है, वह इन्द्रियों का निग्रह है, आत्मा का जो भोजन है, वह नौ द्वारों को मानो देखो, नौ द्वारों के देवताओं को जानने का नाम मेरे प्यारे! आत्मा का भोजन है।.........शेष अनुपलब्ध।

8 ०८ ०८ १९७४

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहां, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र अथवा देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है जिस देव की आभा हमें प्रत्येक शब्द में दृष्टिपात आ रही है। जब हम प्रकाश को विचारने लगते हैं तो एक

एक शब्द में से परमपिता परमात्मा की प्रतिभा हमारे सम्मुख प्रतिपादित दृष्टिपात होने लगती है। मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज मैं कोई विशेष चर्चा प्रगट नही कर रहा हूँ, परन्तु आज का हमारा वेद का ऋषि क्या कह रहा है, वेद का ऋषि भिन्न भिन्न प्रकार की वार्ता प्रगट कर रहा था, हमारे यहां, परम्परागतों से ही, ऋषि मुनियों ने, ब्रह्म विद्या को जानने के लिए, अधिक बल दिया, यह कहा कि हे मानव! तेरे जीवन में ब्रह्मवेतत्ता होनी चाहिए, क्योंकि ब्रह्मवेत्ता जो पुरूष होता है, वह संसार में ऐसी अपनी विद्या को प्रकाश को ले करके उदय होता है जिस प्रकार प्रातःकाल का सूर्य अन्धकार को नष्ट करता है और प्रकाश देता चला जाता है इसी प्रकार बेटा! जैसे यह ब्रह्मवेत्ता पुरूष होते हैं। वह आत्मवेत्ता को, आत्मयीता को अपनाने का प्रयास करते हैं। परन्तु वह उसी में सदैव संलग्न रहते हैं। आज बेटा! मैं तुम्हारे समीप एक वार्ता प्रगट करने जा रहा हूँ।

ब्राह्मण

हमारे यहां कुछ यागों का वर्णन आता है। नाना प्रकार के यागों का वर्णन, तो परम्परागतों से आता रहा है। परन्तु तुम्हें यह प्रतीत होगा, मेरे पुत्रों! कि संसार में, नाना प्रकार के यागों में मानव को परणित होना, एक महानता मानी जाती है। हमारे यहां महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने, नाना प्रकार के यागों का वर्णन किया है, आज मैं बेटा! उन यागों के प्रकरण में तो जाना नही चाहता हूँ, परन्तु वेद में, याग में एक ऐसी प्रतिभा होती है, जो मानव को प्रभावित बना देती है। मानव का अन्तःकरण यह उच्चारण करता है कि वास्तव में यह जो जीवन की धारा है यह प्रतिष्ठित दृष्टिपात होने लगती है। हमारे ऋषि मुनियों ने बेटा! एक श्रृङ्खला बनाई, वह श्रृङ्खला बद्ध करने वाले शब्द

हैं, उनको विचारना है। एक समय बेटा! मौग्दल्य ऋषि महाराज मुनिवरों! मैत्रेय ऋषि के द्वार पर जा पंहुचे। मैत्रेय ऋषि ने उनसे प्रश्न किया क्या तुम ब्राह्मण हो? अथवा नहीं ऋषि ने कहा कि महाराज! ब्राह्मण कैसे होते हैं? उन्होंने कहा यह मैं नही जानता यह तुमसे जानना चाहता हूँ? ऋषि ने कहा कि ब्राह्मण, ब्राह्मण वह होता है जो एक दूसरे की श्रृङ्खला, एक दूसरे की प्रतिभा को जानता है। जो सृष्टि के मूल कारण को जानता है, और उसके आधार पर अपने जीवन को क्रियात्मक बनाता है, वह ब्राह्मण कहलाता है। तो मुनिवरों! देखो, यह उन्होने सान्त्वना तो नही दी, परन्तु देखो, उसने मौग्दल्य जी से इसका उत्तर दे दूंगा उन्होंने कहा कि एक दूसरे की प्रतिष्ठा है क्या? तो उस समय बेटा! ऋषि ने वर्णन कराया, कि हे मानव! मैं यज्ञशाला में विराजमान हूँ। मैं यज्ञ के ही प्रकरण को ले करके, उपस्थित भी हुआ हूँ। चलो इसी के आधार पर अपने विचार प्रगट कीजिए। उस समय मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचारी ने कहा, एक दूसरे की जो प्रतिष्ठा है, वह इस प्रकार है, वह तुम श्रवण करो। मेरे प्यारे! उन्होंने एक मनके को धागे में पिरोना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने धागे का वर्णन करते हुए मनकों का वर्णन करते हुए, उन्होंने एक प्रतिभा और उनकी विचारधारा को व्यक्त किया। ऋषि ने ब्रह्म को ले करके और मानवीय निर्माण तक की वार्ता प्रगट की। ऋषि ने कहा यह ब्रह्म है मानो यह जो ब्रह्म है इसी की चेतना से यह जगत चेतनित हो रहा है, और ब्रह्म की जो प्रतिष्ठा है, वह महतत्त्व में मानी जाती है और महतत्त्व की जो प्रतिष्ठा है, वह अन्तरिक्ष में हैं, और अन्तरिक्ष लोक की जो प्रतिष्ठा है, वह वायु में हैं, वायु की प्रतिष्ठा अग्नि है, अग्नि की प्रतिष्ठा जल है, और जल की प्रतिष्ठा पृथ्वी है, मानो पृथ्वी की प्रतिष्ठा, नाना प्रकार की वनस्पतियां हैं, अन्न है, और अन्न की प्रतिष्ठा प्राण है, और प्राण की

प्रतिष्ठा मन है, और मन की प्रतिष्ठा वाक है, और वाक की प्रतिष्ठा वेद है, और वेद की प्रतिष्ठा याग है, यज्ञ जिसको कहा जाता है परन्तु याग की प्रतिष्ठा बेटा! ब्राह्मण माना गया है। यह भी तो बेटा! एक श्रृङ्खलन किया मानो यह भिन्न भिन्न रूपों में दृष्टिपात होने लगी। तो इस प्रकार हम इसे भी स्वीकार करते हैं। मानो जैसे ब्राह्मण है ब्राह्मण को त्याग देते हैं, याग है, याग से वेद है, वेद से वाक और वाक से मुनिवरों! देखो, वाक से मन है, मन से प्राण ओर प्राण अन्न और अन्न से पृथ्वी और पृथ्वी से जल, जल से अग्नि, अग्नि से वायु, और वायु अन्तरिक्ष ओर अन्तरिक्ष से बेटा! महतत्त्व माना गया है। इस प्रकार यह एक दूसरे की प्रतिष्ठा मानी जाती है। परन्तु विचारना यह है, कि यह जो ब्रह्म है ब्रह्म की प्रतिष्ठा बेटा! ब्राह्मण है। वेदों का और एक दूसरे का मुनिवरों! आज मैं बेटा! इस सम्बन्ध में अधिक विवेचना तो प्रगट नही करूंगा, परन्तु हमारे ऋषि मुनि जब, ब्रह्मचारी आचार्य के गृह में प्रविष्ट करता है, तो उस समय यह निर्णय किया जाता है कि किस विद्या को यह जानना चाहता है, उस विद्या का इसे अधिकार है अथवा नहीं परन्तु वह जानता है या नहीं, जैसे बेटा! इसकी परीक्षा हो। तो हमारे यहां जब महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज, और राजा जनक की सभा में महर्षि याज्ञवल्क्य को बेटा! ब्रह्मवेत्ता चुना गया, अथवा ब्रह्मवेत्ता वह बन गएं क्योंकि उन्होंने नाना गऊओं को ले करके, और उन्होंने स्वर्ण से गुंथे हुए सींग को, मथ करके और यह कहा जो ब्रह्मवेत्ता हो, वह इन गऊओं को अपने आश्रम में ले जाएं तो बेटा! यज्ञदत्त ब्रह्मचारी, उनका शिष्य, उनके समीप आया परन्तु वह याज्ञवल्क्य ने कहा हे ब्रह्मचारी! तुम गऊओं को ले जाओ अपने आश्रम को, ब्रह्मचारियों के लिए परन्तु ऋषियों में मानो ब्रह्मवेत्ताओं की सभा में एक क्रान्ति उत्पन्न हो गई। और उन्होंने कहा कि यह ब्रह्मवेत्ता है? राजा जनक के

पुरोहित अश्वल ने कहा क्या तुम ब्रह्मवेत्ता हो? उन्होंने कहा नही, भगवन! मैं ब्रह्मवेत्ता तो नही हूँ। उन्होंने कहा तो तुम गऊं अपने आश्रम को कैसे ले जा रहे हो? उन्होंने कहा महाराज! वहां ब्रह्मचारी अध्ययन करते हैं उनके लिए दुग्ध चाहिए, और गऊं यहां पर्याप्त थी वे तो यज्ञदत्त के साथ उनको गऊओं का गमन कराया, इतने में दिग्ध ने कहा, तुम ब्रह्मवेत्ता हो। तो तुम यदि ब्रह्मवेत्ता नही हो तो इतना अपराध क्यों किया? परन्तु ऋषि याज्ञवल्क्य ने कुछ प्रसन्न हो करके कहा कि हे ब्राह्मण! हे ऋषियों! मेरे से तुम प्रश्न करो, मैं इसका भली भान्ति जानता दूंगा, तो उत्तर दूंगा और उत्तर तुम्हारा बन पाए तो मुझे तुम अपने स्थान पर स्वीकार कर लेना अथवा नहीं। परन्तु ब्राह्मणों की सभा में सान्त्वना छा गई। अश्वल ने प्रश्न किए परन्तु चाक्राणी गार्गी, उसी सभा में उपस्थित थी उसने उपस्थित हो करके कहा हे ब्राह्मणों! हे अर्द्धभाग! हे दिग्ध! यदि तुम्हारी आज्ञा हो, तो मैं इस ब्रह्मवेत्ता, याज्ञवल्क्य से दो प्रश्न करना चाहती हूँ उन्होंने कहा बहुत सुन्दर। मेरे प्यारे! याज्ञवल्क्य के समीप उपस्थित हो गएं उसने कहा ऋषिवर! तुम्हें दो प्रश्न करना चाहूँगी। उन्होंने कहा बोलो देवी! मेरे से तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर बन पाएगा, तो मैं दे सकूंगा, तुम प्रश्न करो। उन्होंने कहा तो अब मेरे प्रश्नों का तुम उत्तर दो। चाक्राणी ने कहा भगवन! मैं यह जानना चाहती हूँ, क्या यह जो मेरा शरीर है, इसके विवेचना, अथवा प्रतिभा क्या है? तो ऋषि ने उत्तर दिया हे चाक्राणी! यह जो तुम्हारा शरीर, मुझे दृष्टिपात आ रहा है, तुम इसके सम्बन्ध में जानना चाहती हो, तो निर्णय यह है कि तुम्हारे शरीर की आभा अन्न मानी गई है। वास्तव में तो तुम्हारे शरीर की जो प्रतिभा है, वह याग है। क्योंकि शुभ कर्म करना मानव का कर्तव्य माना जाता है। वही जो उसका याग है और जो भी मानव शुभ कर्म करता है वह याग कर रहा है।

तो इसीलिए तुम्हारे मानवीय जीवन की जो आभा है वह याग माना गया है परन्तु देखो, यागां, ब्रह्म सखा तुम याग करने वाले बनो। महर्षि याज्ञवल्क्य ने कहा, कि यागं ब्रह्मे याग में प्रतिष्ठा तुम्हारे शरीर की है, जब तुम जागरूक रहोगे, तो उषर्बुद्ध कहा जाता है, उषर्बुद्ध वह होता है जो सदैव जागरूक रहता है निन्द्रा, आलस्य और प्रमाद में परणित नहीं होता हैं दोनों को हमारे यहां सिद्ध कहा जाता है वह उदयन होता है जो ब्रह्म को त्याग देता है इसीलिए मानव तू जागरूक बन, जागरूक कौन? मानव रहता है? मुनिवरों! वह मानव जागरूक रहता है जिसको काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह नही व्यापता वह मानव सदैव जागरूक रहता है। कौन ऐसा है संसार में, वह ऐसा उषर्बुद्ध है जो सदैव चेतना को जानने का प्रयास करे। और जागरूक रहता है आलस्य प्रमाद नही होता, वह मानव, तो मुनिवरों! देखो, ऐसा सिद्धाना और वह जो सिद्ध है जो प्रत्येक मानव को जागरूक करना चाहता है। वेद का ऋषि कहता है हे मां! तू जागरूक बन, यदि तू जागरूक रहेगी, तो तेरा जीवन और तेरा संसार भी जागरूक रहेगा। परन्तु प्रकृति का तो मेरे प्यारे! ऋषि ने कहा हे चाक्राणी! मानव की प्रतिष्ठा मानव का जागरूक बनना है, और जागरूक वह रहता है जो उषर्बुद्ध होता है। इसी प्रकार मानव की जो प्रतिष्ठा है, वह मानी गई है चाक्राणी बोली कि प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ कि इसकी प्रतिष्ठा क्या है? उन्होंने कहा कि देवी! यह जो मानव का शरीर है इससे कोई कार्य नही जाता परन्तु यह है कि है कि इस मानव शरीर में कार्य कर रहा है जिसके कारण यह आयु को प्राप्त होता है उसका नाम अन्नाद है क्योंकि मानव का जो आहार पवित्र होता है, तो

मानव के जीवन में सात्विकता ओत प्रोत हो जाती है।

सात्विक अन्न का प्रभाव

मेरे प्यारे! मानव को विचारना है, कि हम सात्विक वातावरण को बनाएं और हम अन्नाद को पवित्र करें, हमारे ऋषि मुनियों जब योगाभ्यास किया। तो उन्होंने शिलस्थ अन्न को प्राप्त किया, उसका आहार किया, मुझे स्मरण है बेटा! जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वार पर पंहुचा, तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने बारह वर्ष तक गायत्रियों छन्दों का पठन पाठन कराया और उन्होंने छन्दावलियों का, वेदों का अध्ययन कराया और उदर की पूर्ति के लिए जाल, वट वृक्ष का पांचांग अग्नि में तपा करके प्रदान करते थे, वह वनस्पतियां का पान करते थे जिन वनस्पतियों पर किसी का अधिकार न हो, उससे मन पवित्र बनता है, क्योंकि मन का जो सम्बन्ध है वह आहार से रहता है, इतना मानव का आहार तमोगुणी होता है, उतना ही मानव सात्विक वातावरण से पृथक होता है, उतना ही मानव योग से पृथक होता है, मेरे प्यारे! परम्परागतों से दैत्य और देवता चले आए हैं, परन्तु देवता और दैत्य यदि योग में परणित होना चाहते हैं, तो उनका आहार पवित्र होना चाहिए वह शरीर के पालन पोषण में ही संलग्न रहते हैं। परन्तु वह मनस्तव की प्रवृत्ति को प्राप्त नही हो पाते। मेरे प्यारे! विचार क्या, कि हम विचारने वाले बनें, कि हमारे मन की जो गति है, उस मन की गति को हमें विचित्र बनाना है। बेटा! तुम्हें स्मरण होगा, महाराजा पारेत्वर ऋषि महाराज, जब वह मुनिवरों! देखो, महाराजा मनु के वंशलज में, त्रेतान्त नाम मनु थे, जब वह उनके आश्रम में प्रविष्ट होने लगे, तो मुनिवरों! देखो, जब वह राष्ट्र गृह में उनका स्वागत किया तो ऋषि ने यह कहा कि मैं तुम्हारे राष्ट्रीय अन्न को ग्रहण नही करूंगा, क्योंकि यह प्रजा से एकत्रित

किया हुआ अन्नाद है, और यह राष्ट्रीय जो अन्नाद होता है, यह तमोगुण और रजोगुण से सना हुआ होता है। इसीलिए मैं ग्रहण नही करूंगा, परन्तु राजा ने आग्रह करके कहा कि भगवन! मैं स्वयं और मेरी पत्नी कला कौशल करते हैं राष्ट्रीय अन्न न हम अतिथि को प्रदान करते है। और न हम स्वयं ग्रहण करते हैं भगवन! हम तो कृषक बन करके, इस भूमि के गर्भ से अन्न की उत्पति करते हैं, अपने जीवन का संचालन करते हैं, और उसी से हम राष्ट्र का पालन करते हैं। मेरे प्यारे! जब ऋषि ने, सर्वत्र गृह का उन्होंने दिग्दर्शन किया, और राजा ने सर्वत्र निर्णय किया, तो उस समय उन्होंने अन्न का पान किया। अतिथि सेवा को, उसके पश्चात स्वीकार किया।

तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय यह कि मन का सम्बन्ध अन्नाद से होता है, इसीलिए अन्न पवित्र होना चाहिए। मैं इसकी अधिक विवेचना नही दूंगा, महात्मा दधीचि ने बेटा! बारह वर्षों तक पत्रों का पान करके, बेटा! योगाभ्यास किया और मुनिवरों! देखो, मैं याज्ञवल्क्य की चर्चा कर रहा हूँ, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने बारह वर्ष तक शिलस्थ अन्न को ग्रहण करके शतपथ नाम की पोथी का निर्माण किया। मेरे प्यारे! विचार विनिमय यह पोथी वह होती है जिस पोथी में, लेखनीबद्ध करने वाले का सदैव स्वयं बेटा! उसका विवेक, उसका चरित्र दृष्टिपात आता है। और मानवीय जो अध्ययन करने वाला होता है उसका लेखनीवादी, लेखक और मुनिवरों! देखो, अध्ययन करने वाले दोनों का हृदय एक संतुलित हो जाएं, तो वह लेखनी बेटा! हृदयग्राही बन जाती है।

तो मेरे प्यारे! मैं अधिक विवेचना नही देने आया हूँ, यह गम्भीर चर्चाएं अध्ययन करना है विचार विनिमय क्या? मेरे प्यारे! अन्न के ऊपर जब उन्होंने विवेचना की, तो चाक्राणी बोली कि महाराज! मैं इस

मन की प्रतिष्ठा को जानना चाहती हूँ उन्होंने कहा देवी! यह जो मन है, यह अन्न में प्रतिष्ठित हो जाता है और यह जो अन्न है यह पृथ्वी में इसकी प्रतिष्ठा है, पृथ्वी से उत्पन्न होता है, पृथ्वी के रूप में ही यह विकृत हो जाता है। उसी में लय हो जाता है। प्रतिष्ठित हो जाता है। मानो यह जो पृथ्वी है, इसको वेद ने बेटा! वसुन्धरा कहा है यह वास्तव में वसुन्धरा है, कामधेनु भी कहा है कामधेनु क्यों कहा है? क्योंकि यह कामधेनु मानव की कामनाओं की पूर्ति करने वाली है इससे नाना प्रकार के खाद्य और खनिज पदार्थ उत्पन्न होते हैं, यह स्वर्ण जैसी धातु का निर्माण करने वाली है, रत्न जैसी धातु इसी से उत्पन्न होती हैं, बेटा! यह जो पृथ्वी है इसको धेनु कहा है इसको, मेरे प्यारे! इसकी जो प्रतिष्ठा है, यह जल में प्रतिष्ठित हो जाती है, जहां पृथ्वी में जल है और जहां पृथ्वी में जल की प्रतिष्ठा मानी गई है, मेरे प्यारे! जल को वेद में आपो कहा है, यह जल है, बेटा! जो संसार में नाना प्रकार की उत्पति करने वाला है। माता के गर्भस्थल में, एक शक्तिशाली जल के बिन्दु से, मुनिवरों! देखो, मानव के शरीर का निर्माण होता है, एक बिन्दु जब वहां मैं जल का आपो का बिन्दु है जिसे पृथ्वी के गर्भ में, नाना प्रकार का खाद्य और खनिज उत्पन्न होता है। मेरे प्यारे! बिना आपो के अन्न भी उत्पन्न नही होता, बिना आपो के खनिज भी उत्पन्न नही होता, ये पृथ्वी में श्रवण जब बनता है तो प्रथम पात बनती है, जल रहता है, और जल जब उस जल का सम्बन्ध उन किरणों से हो जाता है, जिन किरणो से स्वर्ण की धारा उत्पन्न होती है मुनिवरों! देखो, जहां भी वह धातु का निर्माण हो रहा होगा, वही मुनिवरों! देखो, वे किरणें आती है, और जल को उष्ण बनाती हैं उसमें बेटा! पृथ्वी की मात्रा अधिक होने के नाते, मानो देखो, वह उस जल को तपाती हैं, तो स्वर्ण जैसी धातु उत्पन्न हो जाती है वह आपो की ही महिमा है। आपो बेटा!

आपो गृतं ब्रह्मे आपो से मानव का प्राण संचालन होता है, आपो से बेटा! जगत की उत्पति होती है। मेरे प्यारे! यह आपो ही है जो मुनिवरों! देखो, अपनी प्रभा में रमण करता है, इसको वेद ने सोम कहा है, चन्द्रमा को सोम कहते हैं। जल को भी सोम कहा गया है।

मेरे प्यारे! ऋषि कहते हैं, कि इसकी जो प्रतिष्ठा है आपो की वह अग्नि मानी जाती है, यह अग्नि इसको तेज कहते हैं बेटा! अग्नि कितने प्रकार की है? यह आपने स्वीकार किया होगा। मानो यह अग्नि है, जो संसार को तेजस्वी बनाती है, अग्नि है बेटा! जो प्रकाश का मूल कारण बनती है। वायुमण्डल में अग्नि रमण कर रही है, लोक लोकान्तरों को स्थिर करने वाली है, यह अग्नि ही कहलाती है। मेरे प्यारे! यह जो अग्नि है महर्षि आस्काचार्य ने अग्नि के ऊपर अनुसन्धान किया। महर्षि दधीचि ने और महर्षि अश्विनी कुमारों ने, बेटा! अग्नि को पिच्चासी प्रकार की अग्नि उन्होंने स्वीकार किया। परन्तु महर्षि आस्काचार्य और महर्षि भारद्वाज अग्नि को भिन्न भिन्न प्रकार से नही, पिच्चासी प्रकार की नही, उन्होंने ऐसा माना है ओर यह जो पिच्चासी धाराएं हैं, और यह जो पिच्चासी की एक धारा है, उस एक धारा में से निन्यानवें प्रकार की धाराओं का जन्म होता है। मेरे प्यारे! और जो निन्यानवीं धारा है, उस एक धारा में से देखो, एक सौ सत्रह प्रकार की धाराओं का जन्म होता है, मुनिवरों! देखो, जो सत्रह प्रकार की धारा है, उस धारा में से मुनिवरों! देखो, लगभग दो सौ पिच्चासी प्रकार की तरंगों का जन्म हो जाता है। एक ही तरंग में से, मुनिवरों! देखो, महर्षि आस्काचार्य और महर्षि दालभ्य जी ने, दोनों यह निर्णय किया है यह जो दो सौ पिचासी प्रकार की धारा है, उस धारा में से पांच पाच सौ प्रकार की तरंगों का जन्म होता है, जिससे आगे उन्होने लेखनी बद्ध की हैं।

तो परिणाम यह है कि अग्नि कितने प्रकार की

है, एक अग्नि बेटा! इस संसार में प्रदीप्त रहती है, इस अग्नि मुनिवरों! देखो, द्यौ लोक को प्राप्त होती है, वह जो अग्नि है, जो मानव के शरीर में प्रदीप्त रहती है विराजमान रहती है, वह भी अग्नि है, जो लोक में वेश्वानर नाम की अग्नि बन करके रहती है वह भी अग्नि है बेटा! जो आह्वनीय अग्नि बन करके जो संसार को हवि प्रदान करने वाली है। देववत को प्रदान करने वाली है, हवि को देने वाली है। मेरे प्यारे! मैं आज इस सम्बन्ध में, अधिक चर्चा प्रगट नही करूंगा, विचार क्या ऋषि ने कहा कि अग्नि ही मानो देखो, मानव का प्रतीक माना जाता है। अग्नि में ही, जल प्रतिष्ठित हो जाता है। इसी अग्नि ब्रह्मे चाक्राणी ने कहा महाराज! मैं यह जानना चाहती हूँ, क्या भगवन! यह जो अग्नि है, इसकी प्रतिष्ठा क्या है? उन्होंने कहा कि इसकी प्रतिष्ठा हमारे यहां यह अग्नि ही मानो देखो, इसकी वायु में प्रतिष्ठा हो जाती है। वायु में यह लय हो जाती है। जहां वायु हैं, वहां अग्नि है मानो अग्नि ही मानो देखो, वायु का प्रतीक माना जाता है। इसी में यह प्रतिष्ठित रहता है और इसी में ओत प्रोत हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, संसार में सर्वत्र वायु रमण कर रही है, आज मैं वायु के इतने प्रकार की धाराएं, वायु की भी मानी गई हैं। आस्काचार्य ने एक अग्नि की धारा स्वीकार की थी, इसी प्रकार वायु की भी है। वायु भी बेटा! इतने प्रकार की है। आज मैं यह जानो कि वायु स्वाति वायु है, प्रपञ्चम् नाम की वायु है, मृचि नाम की वायु है, नाना प्रकार की बेटा! देखो, वायु स्वीकार की जाती है। उस वायु में रमण करने वाला जो शब्द है, वह अन्तरिक्ष को प्राप्त हो जाता है। मेरे प्यारे! इस वायु में ही मानव की प्रतिष्ठा रहती है। जगत की प्रतिष्ठा मुनिवरों! देखो, इस वायु की जो प्रतिष्ठा है, वह अन्तरिक्ष माना गया है। अन्तरिक्ष में बेटा! प्रत्येक शब्द विराजमान रहते हैं। प्रत्येक शब्दों की प्रतिष्ठा अन्तरिक्ष माना गया है। अन्तरिक्ष में द्यौ

रहता है, बेटा! सर्वत्र परमाणु एक अन्तरिक्ष के रूप में बन जाते हैं। जहां वायु होती है वहां अन्तरिक्ष होता है। और जहां अन्तरिक्ष नही होता, वहां वायु नही होती। मेरे प्यारे! और वायु की प्रतिष्ठा महतत्व में ओत प्रोत हो जाती है। यह जो महतत्व है, महतत्व ही मानव की प्रतिष्ठा मानी जाती है। मेरे प्यारे! यह जो महतत्व है यह ब्रह्म माना गया है। इसी को हमारे यहां ब्रह्म भी स्वीकार करते हैं। वह जो ब्रह्म है, वह प्रतिष्ठित होने वाला। मानो देखो, ब्रह्म जो है वह ब्राह्मणों में प्रतिष्ठित रहता है। क्योंकि ब्रह्म की जो व्याख्या करता है, वह ही ब्राह्मण कहलाता है, उसी से ब्राह्मण बना, ब्राह्मण कौन है? जो बेटा! देखो, जो प्रकृति में महतत्व में ब्रह्म को ओत प्रोत होता दृष्टिपात करता है। मेरे प्यारे! आज का विशेष, विवेचना मैं इस सम्बन्ध में नही देने आया हूँ चाक्राणी ने कहा भगवन! क्या यही है इसकी प्रतिष्ठा? उन्होंने कहा देवी! इतनी ही स्वीकार की है। परन्तु याग को प्रजापति कहते है। और देखो, वह जो प्रजापति है, उसकी प्रतिष्ठा याग माना है, और याग की जो प्रतिष्ठा है, वह मानव का सङ्कल्प माना गया है जिसको दक्षिणा कहते हैं और देखो, दक्षिणा है वह मानव की श्रद्धा में ओत प्रोत रहती है, और मानव वह जो श्रद्धा है, वह मानव के हृदय में ओत प्रोत रहती है।

आओ, मेरे प्यारे! हम अपने हृदय को ऊँचा बनाएं अपने हृदय को विशाल बनाएं क्योंकि हृदय रूपी जो यज्ञवेदी है, जिससे प्रभु ने सृष्टि के प्रारम्भ में उत्पन्न की आज हमें सब साकल्य एकत्रित करके, एक दूसरी प्रतिष्ठा को स्वीकार करके, हमें अपने हृदय को स्वीकार करें जैसे बेटा! ब्रह्म और ब्रह्म से महतत्व और महतत्व अन्तरिक्ष, और अन्तरिक्ष से वायु, और वायु से अग्नि, और अग्नि से जल, जल से पृथ्वी, पृथ्वी से अन्न, और अन्न से मन, और मन से मुनिवरों! देखो, वाक ओर वाक्, से वेद ओर वेद से याग और याग से प्रजापति

और प्रजापति से याग और याग मुनिवरों! देखो, याग से दक्षिणा, दक्षिणा से श्रद्धा ओर श्रद्धा से मुनिवरों! देखो, हृदय की उत्पति होती है।

आओ, मेरे प्यारे! हम एक दूसरे के धागे में मनकों को पिरोते चले जाएं, जिन मनकों धारण करने से, मानव के जीवन में एक प्रतिष्ठा आ जाती है। परन्तु यह जो विद्या है, यह परम्परागतों से ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में चली आई है, हमारे यहां यह विद्या अधिकार अनाधिकार को विचार करके, इस विद्या को प्रदान किया जाता है। मेरे प्यारे! जब यह विद्या प्रदान की जाती है। निर्णय किया जाता है, ब्रह्मचारी से, यह ब्रह्मचारी इसका योग्य है, अथवा नहीं। तो मुनिवरों! देखो, जब वह यह वाक प्रगट कर देता है, कि सुयोग्य है उस काल में बेटा! यह विद्या उसे प्रदान की जाती है। जैसा यमाचार्य और नाचिकेता की चर्चा आती है। यमाचार्य से नाचिकेता ने कहा कि महाराज! मैं आत्मा के तत्त्व को जानना चाहता हूँ, यह आत्मा शरीरों को त्याग करके कहां जाता है? उस समय यमाचार्य ने क्या कहा था? बेटा! तुम्हें प्रतीत है। यमाचार्य ने कहा था कि हे ब्रह्मचारी! तू संसार के वैभव को क्यों नही प्राप्त करता, संसार के राष्ट्र को स्वीकार कर, नाना पत्नीयां हैं, नाना कामधेनु गऊं तेरे द्वारा होनी चाहिएं, ऐश्वर्य सर्वत्र तेरे द्वारा होना चाहिए। बालक नाचिकेता ने क्या उत्तर दिया जिज्ञासु ने, बालक नाचिकेता ने यही कहा था क्या भगवन! ये विद्या मुझे आप प्रदान कर रहे हैं यह विद्या का मुझे प्रलोभन न दीजिए, संसार के वैभव का प्रलोभन न दीजिए, यह प्रलोभन तो, भगवन! ऐसा है, यह द्रव्य तो संसार का, आज रहेगा कल नही रहेगा भगवन! जब नही रहेगा, कष्ट अपार होगा, और भगवन! मैं इस द्रव्य को जानना चाहता हूँ, मैं इस सम्पदा को जानना चाहता हूँ, जो भगवन! इस शरीर को त्यागने के पश्चात, वह सम्पदा मेरे द्वारा नही रहेगी।

मेरे प्यारे! बालक जिज्ञासु ने, जब यह कहा तो यमाचार्य का अन्तरात्मा गद गद हो गया। उन्होंने कहा कि यह ब्रह्मचारी तो इस विद्या का इसे अधिकार है, मेरे प्यारे! यहां नाना ऋषि मुनियों ने इसी प्रकार की परीक्षा लीं। अब मैं तुम्हें कुछ राष्ट्रीय विचारधारा प्रगट कर रहा हूँ उसे और श्रवण करो।

मेरे प्यारे! अब समाज के स्तर पर आ जाओ, तो जो वाक मैं प्रगट करने जा रहा हूँ मेरे प्यारे! हमारे यहाँ प्रत्येक अवस्था में राष्ट्रीय करणों में राष्ट्रीय विचारधारा में, अधिकार अनाधिकर के ऊपर विचार विनिमय किया जाता है। यह आज नहीं परम्परा का शब्द है। बेटा! यह बहुत ही परम्परा का शब्द है, इसको मैं उच्चारण कर रहा हूँ।

माता गान्धारी का पुत्र

मुनिवरों! देखो, द्वापर के काल में आ जाओ, तो वहाँ भी तुम्हे अधिकार अनाधिकार की विवेचना आयेगी, हमारे यहाँ एक प्रसंग उत्पन्न होता है, संसार में बेटा! आज से साढ़े पांच हजार वर्षों पूर्व मानो एक विश्व संग्राम हुआ, जिस विश्व संग्राम में मुनिवरों! देखो, अठ्ठारह अक्षौणी मानवीय दल समाप्त हो गया था। तो हमें यह विचारना है कि यह इतना संग्राम क्यों हुआ? विश्व संग्राम क्यों हुआ? इसका मूल कारण क्या बना, मैं इस सम्बन्ध में कुछ सूक्ष्म सी चर्चा प्रगट करना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! यह तो तुम्हे प्रतीत है कि मानो देखो, हमारे यहाँ महाराजा शान्तनु का वंशलज था, यह और महाराज शान्तनु के वंशलज में उनके पुत्र देवव्रत थे, और उनका संस्कार जो द्वितीय हुआ उससे विचित्र, वीर्य हुए। परन्तु विचित्र, वीर्य से दो पुत्र उत्पन्न हुए, एक तो अन्ध था, और एक पाण्डु था, धृतराष्ट्र और पाण्डु परन्तु जय अप्रतम क्योंकि देवव्रत ने अपने पिता की इच्छा पूर्ण करने के लिए सङ्कल्पबद्ध हो गएं।

जिसको उन्होंने भीष्म प्रतिज्ञा प्रदान की और वह प्रतिज्ञा ऐसी थी, जिस प्रतिज्ञा जो प्रतिज्ञा उसी को व्रत कहते हैं। जिस प्रकार जो व्रत धारण करता है, वह उसी में प्रतिष्ठित हो जाता है। मेरे प्यारे! वह राष्ट्रपिता कहलाते थे, मुनिवरों! देखो, जब हमारे यहाँ महाभारत के काल में एक प्रथा थी, और वह प्रथा मानवीय प्रथा थी मुनिवरों! देखो, महारानी असुताम धृतराष्ट्र की धर्म देवी जिसको गान्धारी कहा जाता था, गान्धारी सदैव अपने पति की प्रतिज्ञा में प्रतिबद्ध रहती थी, परन्तु उसका यह नियम था, क्या जो भी राष्ट्रीय स्तर के प्राणीं होते, वह अपनी सन्तानों को त्याग करके उनका निधन हो जाता, तो उनकी सन्तानों का वह स्वयं पालन पोषण करती, तो मुनिवरों! देखो, इस प्रकार गान्धारी के एक सौ एक पुत्र कहलाते थे। उनके गर्भ से उत्पन्न होने वाला मुनिवरों! देखो, सबसे प्रथम दुर्योधन, द्वितीय जर्योधन, तृतीय विक्रम, चतुर्थ में स्वाति, और मुनिवरों! पञ्चम में श्वेताम्बरी, और मुनिवरों! देखो, छठे में आप्रेतु, और मुनिवरों! देखो, सप्तम में श्वानकेतु, और मुनिवरों! माधवाकृति आठ पुत्र कहलाते थे। गान्धारी के, जो माता गान्धारी के गर्भ से जिन्होंने जन्म लिया, अब मुनिवरों! देखो, अब यह एक सौ ब्रहे मानो देखो, जो अभ्यातम् जो प्राण में अब्रहे पुत्र कहलाते थे। वह ऐसे थे जो मुनिवरों! देखो, राष्ट्रीय स्तर के प्राणी थे, उनका निधन हो गया, अनाथ सन्तानों का वह पालन पोषण करती थी, परन्तु उसमें यह नियम था कि अपने पुत्रों में और उन पुत्रों में वह कोई अन्तर्द्वन्द्व स्वीकार नहीं करती थी। तो इसीलिए विधाताओं को यह किसी प्रकार यह भेद नहीं था, उनमें कि यह मेरे विधाता नहीं हैं, अथवा हैं, तो इस प्रकार का उनका सङ्कलन उनकी विचारधारा रहती, परन्तु यह राष्ट्रीय स्तर पर उनका पालन होता। तो मुनिवरों! महाराज देवव्रत के मस्तिष्क में और पांच पुत्र मुनिवरों! कुन्ती पुत्र कहलाते थे, कुन्ती

के तीन पुत्र थे, और दो पुत्र माद्री के कहलाए गएं। मानो देखो, महाराज पाण्डु और देवव्रत ने राजा स्वाति नामाम अप्रेत राजा ने राष्ट्रीय में जा करके उन्होंने एक वैज्ञानिक यन्त्र को उन्होंने नष्ट किया, और मानो स्वयंबर में माद्री को भी विजय करके लाए, तो उनके दो पुत्र थे, अश्विनी, कुमार मुनिवरों! जिनको हमारे यहाँ अश्विनी, कुमार पुत्र कहा जाता है। उनको हमारे यहाँ मुनिवरों! देखो, ब्रहे कृति चाताम् ब्रीहि कृता ऐसा हमारे यहाँ माना गया जैसे भीम, जैसे युधिष्ठिर, जैसे भीम, नकुल तथा सहदेव, तो नकुल और सहदेव को दोनों को अश्विनी कुमार पुत्र माना जाता है। परन्तु मैं इस विशेषता में जाना नहीं चाहता हूँ, विचार विनिमय क्या मेरे प्यारे! देवव्रत को इन सब पुत्रों को ब्रह्मचारियों को सब पुत्रों को शिक्षा दिलानी थी, धनुर्विद्या की अब मुनिवरों! देखो, परशुराम उन्होंने अपने गुरु परशुराम से आश्रम में देवव्रत जी प्रगट हुए, उनके द्वारा जब प्रविष्ट हुए, तो उन्होंने कहा कहो राष्ट्रपिता, तुम मेरे द्वारा क्यों आ पंहुचे, उन्होंने कहा कि महाराज! मैं इसीलिए आ पंहुचा हूँ कि मेरी इच्छा है कि आप धनुर्विद्या को जानते हैं, उसमें पारायण हैं, भगवन! मेरी इच्छा यह है कि मेरा जो यह महाभारत राष्ट्र है। उनमें जो राजकुमार हैं, मैं उनको धनुर्विद्या की विद्या प्रदान कराना चाहता हूँ, उन्होंने कहा बहुत सुन्दर। मेरे प्यारे! उन्होंने गमन किया और हस्तिनापुर में आ पंहुचे, और परन्तु उन ब्रह्मचारियों की एक पंक्ति लगाई, पंक्ति में स्थित करके, उनके प्रत्येक ब्रह्मचारी के मस्तिष्क का अध्ययन करना प्रारम्भ कर दिया। जब मुनिवरों! उनके गुण, कर्म, स्वभाव को परशुराम ने जान लिया। तो उन्होंने यह कहा हे देवव्रत! यह जो ब्रह्मचारी हैं, इनमें से कुछ ही ब्रह्मचारी ऐसे हैं, जिनको धनुर्विद्या का अधिकार है। उन्होंने कहा महाराज! यह कौन कौन हैं? उन पांचों तो कुन्ती पुत्र हैं पाण्डु पुत्र, और गान्धारी पुत्रों में एक

विक्रम हैं, एक स्वाति है, एक पुरोधा है, मानो देखो, तीन पुत्र वह हैं, और और पांच यह मानो यह धनुर्विद्या के अधिकारी हैं। अन्यथा औरों को यह धनुर्विद्या का यह अधिकार है ही नहीं, अब देवव्रत ने कहा कि महाराज! मेरे लिए तो सर्वत्र ब्रह्मचारी सर्वत्र एक तुल्य हैं, उन्होंने कहा कि तो भई! मैं असमर्थ हूँ। मैं अधिकारी को शिक्षा दे सकता हूँ, अनिधकार को मैं शिक्षा कदापि प्रदान नहीं करूंगा। क्योंकि अनधिकारों के भुजों में यह विद्या जाने से, रक्तभरी क्रान्ति आने का संदेह बना रहता है, इसीलिए मैं इस विद्या को कदापि प्रदान नहीं करूंगा। मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी देवव्रत ने इस वाक को स्वीकार नहीं किया, राष्ट्रपिता ने, जब उन्होंने स्वीकार नहीं किया तो महाराजा परशुराम ने वहाँ से गमन किया ......शेष अनुपलब्ध। दिनांक ०८ ०८ १९७४।

9 २३ ०३ १९७५ सङ्कल्प

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान निहित रहता है क्योंकि जब हम परमपिता परमात्मा के विज्ञानमयी जगत को विचारने लगते हैं, तो हमें ऐसा प्रतीत होता है कि हम सर्वत्र जो प्राणी है, वे परमपिता परमात्मा की इस विज्ञाशाला में दृष्टिपात अथवा निहित प्रतीत होने लगते हैं हमारा मानवीय जीवन एक महानता में परणित होता है जब उसके ऊपर अनुसन्धान करना प्रारम्भ करते हैं, तो हम विज्ञान

की, उस महान वेदी पर विराजमान हो जाते हैं, जहाँ परमपिता परमात्मा की आभा का मानव को दिग्दर्शन होता है।

राजा का वाहन

मुझे बेटा! परम्परा का वह काल भली भान्ति स्मरण आता रहता है, जिस पवित्र काल में यहाँ ज्ञान और विज्ञान में जाने की मानव की बहुत उड़ान रही है, परम्परा का वह साहित्य, वह वार्त्ताएं की हमारे यहाँ विष्णु क्योंकि विष्णु की बड़ी उड़ानों के सम्बन्ध में नाना प्रकार की विवेचनाएं होती रहती हैं। हमारे यहाँ बेटा! विष्णु नाम राजा का कहा गया है, परन्तु राजा के राष्ट्र में जो वैज्ञानिक जन होते हैं, वैज्ञानिक पुरूष होते हैं, वह गरूड़ नामों से उनका प्रतिपादन किया जाता है। इसीलिए राजा का जो वाहन होता है, राजा का वाहन बेटा! उस राजा के राष्ट्र में विज्ञान है, मानो जब विज्ञान मानवीय धारा पर उज्ज्वल स्वरूप में परणित होने लगता है। तो बेटा! वह विज्ञान उस महान विष्णु का वाहन बन करके रहता है क्योंकि विष्णु का वाहन गरूड़ कहलाया गया है, बेटा! गरूड़ नाम वैज्ञानिक पुरूषों को कहा गया है। जहाँ विष्णु उनके ऊपर विराजमान हो करके उसकी उड़ान एक विशालता में परणित रहती है, मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज जब हम मानवीय दर्शन पर जाते हैं मानवीय विचारधारा पर अपना जीवन को उसमें ले जाना चाहते हैं, तो वास्तव में यह जगत एक प्रकार की विज्ञानशाला क्या ज्ञानशाला क्या एक मानो भव्य भवन का प्रतीत होने लगता है।

तो मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाते हुए, उस प्रभु की उस महान ज्योतिर्मयी, आनन्दमयी, श्रोत्रमयी, आभा को जानने का हम प्रयास करते रहें। मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज मुझे वह समय भली भान्ति स्मरण आता

रहता है जब यहाँ बेटा! माता को वसुन्धरा कहा गया है हमारे वैदिक साहित्य में वसुन्धरा के नाना प्रकार के पर्यायवाची स्वरूप माने गएं हैं जैसे वसुन्धरा नाम बेटा! पृथ्वी को कहा गया है वसुन्धरा नाम मानो बेटा! इस सूर्य की नाना प्रकार किरणों को भी वसुन्धरा कहते हैं मुनिवरों! वसुन्धरा का अभिप्राय है जिसके गर्भ में हम सब वशीभूत रहते हैं अथवा बसते हैं उसी का नाम बेटा! वसुन्धरा कहलाया गया है।

तो आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज हम कुछ वसुन्धरा के ऊपर अपना विचार विनिमय करना प्रारम्भ करें, मैंने बहुत पूर्व काल में वुसन्धरा के सम्बन्ध में अपनी विवेचना प्रगट की। परन्तु आज का वातावरण आज का वायुमण्डल आज की जो वायु की तरंगे है, वह बेटा! हमारे अन्तःकरण को छूती चली जा रही हैं, और हमारा अन्तःकरण यह पुकार रहा है कि माता वसुन्धरा के सम्बन्ध में कुछ विवेचना प्रगट की जाएं। बेटा! उस माता को कहते हैं, जो माता अपने गर्भस्थल से बेटा! उस बालक को जन्म देती है उस माता का नाम वसुन्धरा कहलाया गया है। जब मेरी प्यारी माता गर्भस्थल से राम जैसे महापुरूषों का जन्म होता है, भगवान राम का जन्म होता है, बेटा! वह माता कितनी सौभाग्यशालिनी होती हैं। तो आज बेटा! मैं उन वाक्यों की पुनरूक्ति नहीं करूंगा, केवल विचार यह देना है कि आज हम वसुन्धरा को विचार विनिमय करें। जहाँ वसुन्धरा बेटा! पृथ्वी का कहा जाता है, इसके गर्भ से बेटा! नाना प्रकार का खाद्य और खनिज पदार्थों की उत्पति होती रहती है, वह जो खनिज है, वह उस माँ वसुन्धरा के गर्भ से ही तो उत्पन्न होता है, खाद्य भी उसी के गर्भ से उत्पन्न होता है, नाना प्रकार की वनस्पतियों का सञ्चार होता रहता है, उद्बुद्धता होती रहती है, उससे बेटा! मानव का जीवन पनपता रहता

है।

माता कौशल्या

आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर! मैं आज एक महान बेला में जा रहा हूँ जहाँ बेटा! सङ्कल्प के ऊपर सर्वत्र जगत निहित रहता है। मुझे बेटा! वह त्रेता का काल आज भी भली भान्ति स्मरण आ रहा है, ऐसा मुझे प्रतीत हो रहा है, जैसा आज हम त्रेता के काल में विराजमान हो करके मानो उस यज्ञवेदी पर उस महान वेदी पर मुनिवरों! देखो, भव्य याग का आज हम याग को पुनः से रचनात्मक अपना कार्य कर रहें है। मेरे प्यारे! ऋषिवर! वह समय जब हमें स्मरण आने लगता है, तो वह नौ लाख वर्षो से भी अधिक समय का काल मुनिवरों! देखो, स्मरण आने लगता है, मेरे प्यारे! ऋषिवर! माता कौशल्या का जीवन आज मुझे पुनः से स्मरण आ रहा है जब माता कौशल्या मुनिवरों! बाल्यकाल में आचार्य कुल में शिक्षा अध्ययन करती थी मुनिवरों! देखो, वह राजकन्या जब मुनिवरों! महर्षि तत्त्व मुनि महाराज के द्वारा अध्ययनशील बनने के लिए ऋषि कुल में पंहुची, तो मुझे बेटा! वह समय स्मरण आ रहा है, मुनिवरों! महर्षि तत्त्व मुनि महाराज की अवस्था उस समय मुनिवरों! दौ सौ चौरासी वर्ष की थी मुनिवरों! वह वृद्ध ब्रह्मचारी मानो देखो, वेदशील और विज्ञान में रमण करने वाला बेटा! वह कन्या को शिक्षा प्रदान करते थे, मानो जब वह प्रदान करते थे तो एक समय वह कन्या विद्या अध्ययन जब कर रही थी अपने छात्रावास में विराजमान थी, रात्रि समय मध्यम रात्रि थी विचार विनिमय उत्पन्न होने लगा क्योंकि प्रत्येक मानव के अन्तःकरण में नाना प्रकार की तरंगो का जन्म होता रहता है।

मेरे प्यारे! ऋषिवर! उनके यहाँ मानो तरंगो की उद्बुद्धता होने लगी। अपने मस्तिष्क में, यह विचारा,

क्या मैं यह चाहती हूँ कि गृह आश्रम मुझे नहीं चाहिए। तो बेटा! जब ऐसा उस कन्या ने अपने सङ्कल्प को बनाया बेटा! विचार विनिमय होते हुए, वह प्रातःकाल हो गया। प्रातःकाल होते ही अपने आचार्य के द्वार पर जा पंहुची, क्योंकि आचार्य अपने कर्मकाण्ड में निहित थे। उनके द्वारा अप्रत हुई। तो ऋषि ने कहा पुत्री! तुम्हारा आगमन क्यों हुआ? उन्होंने कहा भगवन! मैं इसीलिए आपके द्वार पर आई हूँ, मेरे मस्तिष्क में एक सङ्कलन की जागृति हुई है, उन्होंने कहा क्या सङ्कल्प है? कन्या बोली कि प्रभु! मेरे मस्तिष्क में यह सङ्कल्प जागरूक हुआ है। क्या मैं संसार में गृह आश्रम में प्रविष्ट होना नहीं चाहती, उन्होंने कहा बहुत सुन्दर हे देवी! हे पुत्री! तुम्हे प्रतीत है संसार में सबसे उत्तम मानव का अन्तःकरण होता है। आत्मिक जो प्रेरणा होती है। वही प्रेरणा मानव को ऊँचा बनाती है, आज तुम्हारे हृदय में यह प्रेरणा जागरूक हुई है, क्या मैं गृह में प्रविष्ट होना नहीं चाहती। तो मैं उसको हृदय से तुम्हारा आदर करता हूँ, मानो तुम्हारी एक महान ज्योति से मैं सदैव कटिबद्ध रहता हूँ जब ऐसा उन्होंने अपना विचार प्रगट किया तो कन्या का हृदय गद् गद् हो गया। गद् गद् हो जाने के पश्चात मुनिवरों! वह विद्या अध्ययन अपने छात्रावास में करती रही समय आया जब बेटा! वह कन्या युवा होने लगी, तो पुनः यह सङ्कल्प जागा धर्मज्ञ शास्त्र पोथियों का निर्माण हो रहा था, उन्होंने अपने मस्तिष्क में विचारा यदि मैं गृह आश्रम में प्रविष्ट हो जाऊँ तो कोई अपराध नहीं है, बेटा! जब यह विचार पुनः से जागरूक हुआ उसी विचार ने रात्रि समय वही सें मुनिवरों! देखो, हृदय में उत्पन्न होते रहे, तरंगो का जन्म होता रहे, तरंगे शान्त होती रही बेटा! वही प्रातः काल वह आचार्य कुल में जा पंहुची, आचार्य कुल में जाने के पश्चात उन्होंने कहा भगवन! मैं कुछ अपनी वार्त्ताएं प्रगट करना चाहती हूँ। उन्होंने कहा बोलो पुत्री!

तुम्हारी क्या आकांक्षा है? उन्होंने कहा भगवन! मैं यह चाहती हूँ कि गृह आश्रम में मेरा वास हो परन्तु मैं अपने गर्भस्थल से एक सन्तान को जन्म देना चाहती हूँ। जिससे मानो मेरा गर्भाशय पवित्र बन जाए, महान बनता चला जाए। ऐसा बेटा! विचार आया, तो ऋषि ने कहा धन्य है पुत्री! मैं तुम्हारा हृदय से स्वागत कर रहा हूँ। क्योंकि हृदय ही मानव की एक मानो विडम्बना है, मानव का एक शुद्ध सङ्कलन है, उसी के आधार पर जो मानव अपने जीवन को व्यतीत करता है, वह अपने जीवन में, किसी प्रकार का अपराध नहीं कर सकता। ऐसा जब उन्होंने, अपना वाक मुनिवरों! निर्णीत कर लिया।

तो वह समय आया ऋषि ने राजा को अप्रत करते हुए, मुनिवरों! देखो, राजा देखो, रघु वंश में, महाराजा अज के पुत्र, राजा दशरथ से उनका संस्कार जब हुआ तो राजा दशरथ के यहाँ संस्कार हुआ, तो बेटा! बड़े आनन्दवत मानो देखो, क्योंकि रघु वंश था ये राजा सगर ले करके परम्परा चली आ रही थी क्योंकि राजा सगर के पुत्र का नाम सुखमंजस था, सुखमंजस के पुत्र का नाम रोहवृद्धि था रोहवृद्धि के पुत्र का नाम स्वानकेतु था, स्वानकेतु के पुत्र का नाम वृणी था, और वृणिका राजा के पुत्र का नाम विक्रुत था और विक्रुत के पुत्र का नाम स्वांगिनी के पुत्र का नाम भागीरथ था। भागीरथ के पुत्र का नाम क्रुतकेतु था, इसी प्रकार उनके पुत्र का नाम हरीश्चन्द था मानो यह वंशलज मुनिवरों! देखो, रघुवंश चला आया, यह जो रघुवंश है, राजा सगर से ले करके, महाराज अज तक नाना प्रकार के वंशलज हुए, जो आज मैं रघु वंश को पुनः से नहीं वर्णन करने जा रहा हूँ, केवल विचार विनिमय यह करना है क्या मानो देखो, राजा अज के पुत्र का नाम राजा दशरथ था और देखो, रघु के पिता का नाम दिलीप था, दिलीप के पिता का नाम सोप्राकु था तो

बेटा! प्राकु के पिता का नाम और भी अनन्य राजा हुए परन्तु मैं उस विषय को लेना चाहता हूँ।

विचार विनिमय यह कि हमारे यहाँ जो अज के जो पिता थे वह रघु कहलाए जाते थे, उन्होंने अपना सर्वत्र द्रव्य यज्ञ इत्यादियों में परणित कर दिया था। तो मुनिवरों! राजकन्या जब गृह में प्रविष्ट हो गई, तो मुनिवरों! देखो, तब तप की मीमांसा में सदैव रमण करती रहती थी, स्वयं कला कौशल करती और द्रव्य को उसी को पान करती थी, जो उसके बदले में आता था।

मेरे प्यारे! ऋषिवर! राजा दशरथ के तीन संस्कार हुए, उनके कोई सन्तान न उत्पन्न हुई, जब सन्तान उत्पन्न न हुआ तो एक समय राजा दशरथ, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज, तीनों विराजमान थे, राजा दशरथ बोले कि महाराज! मेरी जो अयोध्या पुरी है, मानो जो दिलीप का वंशलज है, यह आज समाप्त होने जा रहा है। जैसे सांय काल को सूर्य अस्त हो जाता है। मेरी यह आकांक्षा है क्या मेरे बीच मानो रघुवंश में अब कोई सन्तान होनी चाहिए। उस समय उन्होंने कहा बहुत सुन्दर। परन्तु मेरे विचार में ऐसा आता है कि तुम पुत्रेष्टि यज्ञ करो। पुत्रेष्टि यज्ञ रचाने से तुम्हारे यहाँ अवश्य सन्तान होगी। ऐसा विचार बेटा! राजा विचार राजा सगर के वंशलज में होने वाले राजा दशरथ ने अपना सङ्कल्प किया। ऋषि की आज्ञा पा करके, उन्होंने नाना प्रकार की सामग्री को एकत्रित किया। एकत्रित करने के पश्चात यज्ञवेदी बनाई गई, मानो देखो, याग रचाने के लिए अहा! होता जनों की ऋत्विजनों की आवश्यकता तो प्रायः होती ही है वह सब एकत्रित हो गएं तो मुनिवरों! देखो, यज्ञशाला में, यज्ञमान विराजमान हो गएं तो मुझे बेटा! वह यज्ञशाला, आज भी भली भान्ति स्मरण आ रही है। क्या वह यज्ञवेदी कितनी भव्य, कितनी सुन्दर थी। मेरे प्यारे! उस

यज्ञशाला में, मुनिवरों! देखो, आत्म ब्रह्मे मुनिवरों! देखो, ब्रह्मा के पद को ऋषि को ग्रहण कराया गया, परन्तु वहाँ यज्ञ का प्रारम्भ होने लगा। क्योंकि वह पुत्रेष्टि याग था, पवित्र याग था, उस याग में यही विशेषता थी, क्योंकि वह याग कहलाता था। हमारे यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार के, वैदिक साहित्य में यागों का वर्णन आता रहा है, जैसे पुत्रेष्टि याग होता है, वृष्टि याग होता है, विष्णु याग होता है, शिव याग होता है, मुनिवरों! देखो, अहा! शिव याग होता है अश्वमेध याग होता है। गो मेध याग होता है, अजामेध याग होता है, देवी याग होता है, कन्या याग होता है, तो भिन्न भिन्न प्रकार के, बेटा! यागों का, हमारें यहाँ वैदिक साहित्य में प्रायः वर्णन होता रहा है।

माता कौशल्या की दक्षिणा

आज मैं मुनिवरों! देखो, उन यागों का प्रायः वर्णन नहीं करने जा रहा हूँ, उनकी मीमांसा भी नहीं करने जा रहा हूँ, विचार केवल क्या आज बेटा! विचार क्या, कि जब पुत्रेष्टि या प्रारम्भ होता रहा तो ऐसा मुझे स्मरण है क्या वह यज्ञ लगभग बेटा! छह माह तक बेटा! प्रारम्भ रहा छह माह के पश्चात उस याग की पूर्णाहुति हुई, पूर्णाहुति के समय अब दक्षिणा का जब समय आया, तो कौशल्या जी उपस्थित हो करके बोली, हे प्रभु! मैं भी कुछ दक्षिणा देना चाहती हूँ। उन्होंने कहा पुत्री! तुम दक्षिणा प्रदान करो। उन्होंने कहा क्या भगवन! जो आप चाहेंगे, मैं वह अवश्य प्रदान करूंगी। तो उन्होंने कहा ऋषि यज्ञ के ब्रह्मा ने अमृतं आत्मा ने कहा क्या मेरे विचार में तो यह आ रहा है, यह जो देखो, राष्ट्रीय विचारों में नाना अभद्रता आ रही है, आज तुम्हारे गर्भ से ऐसी सन्तान का जन्म हो, जिससे तुम्हारा राष्ट्र उन्नत बनता चला जाए। मानो देखो, विवेकशील बनता चला जाए, ऐसा विचार जब उन्होंने प्रगट किया,

तो कौशल्या ने वही दक्षिणा प्रदान की, और प्रदान करने के पश्चात अपने कक्ष में जा पंहुची।

राष्ट्र अन्न में रजोगुणता

मुझे बेटा! वह समय आज स्मरण आ रहा है, माता कौशल्या के गर्भ में जब मानो देखो, पुनीत भगवान राम की आत्मा प्रविष्ट हो गई, तो माता कौशल्या का यह नियम था स्वयं कला कौशल करना, उसके बदले जो द्रव्य आता उसमें अपने उदर की प्रायः पूर्ति करती थी। मुनिवरों! वह पूर्ति। क्या इसी प्रकार अपने जीवन को व्यतीत करती रहती थी, एक समय राजा दशरथ को यह ज्ञान हुआ, क्या तुम्हारी जो राज लक्ष्मी है, वह राष्ट्र को कोई अन्न ग्रहण नहीं कर रही है। इसीलिए उनको राष्ट्र का अन्न ग्रहण करना ही चाहिए। ऐसा मुझे स्मरण है, बेटा! राजा जब उनके द्वार पर पंहुचे, अहा! कौशल्या से कहा हे कौशल्या! तुम राष्ट्र का कोई अन्न ग्रहण नहीं करती हो, उन्होंने कहा प्रभु! मैं राष्ट्र का अन्न ग्रहण नहीं करती उन्होंने कहा क्यों इसीलिए भगवन्! क्योंकि राष्ट्र का जो अन्न होता है राजन्! वह रजोगुण और तमोगुण में सना हुआ अन्न होता है इसीलिए मैं उस अन्न को ग्रहण करना नहीं चाहती मैं अपने गर्भ से ऐसे महान बालक को जन्म देना चाहती हूँ। जिससे मेरा गर्भाशय पवित्र बनता चला जाए। ऐसा विचार आते ही बेटा! उनके मस्तिष्क एक महान राजा के मस्तिष्क में बेटा! क्रान्ति उत्पन्न हुई, उन्होंने कहा यह तो बड़ा अपराध है। राष्ट्रीय अपराध है, राजा ने कहा देवी! मेरे राष्ट्र में कोई अन्न इस प्रकार का नहीं आता उन्होंने कहा भगवन! यह जो राष्ट्रीय भाव है, यह बना ही रजोगुण से है, यदि रजोगुण नहीं होगा संसार में तो राष्ट्र के निर्माण का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता, संसार में क्योंकि राष्ट्र का जो निर्माण होता है, उसमें रजोगुण होती है क्योंकि रजोगुण से ही

मानो देखो, न्याय करता है, यदि रजोगुण की मात्रा नहीं होगी, तो न्यायालय में न्यायधीश न्याय नहीं कर सकेगा, वह धिराज नहीं कहलाया जाएगा, इसी प्रकार जब यह विचार राजा ने श्रवण किए, तो राजा मौन हो गएं, मौन होने के पश्चात उन्होंने वहाँ से प्रस्थान कर लिया। अपने मन में विचारा आज मैं वशिष्ठ मुनि के द्वार पर पंहुचूगा मुनिवरों! उन्होंने वहाँ से भ्रमण करते हुए वह रात्रि समय मानो देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि आश्रम में प्रविष्ट हो गएं, जहाँ माता अरूण्धति और मुनिवरों! ऋषि वशिष्ठ मुनि महाराज दोनों का विचार विनिमय हो रहा था, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों के ऊपर विचार विनिमय होना उनका स्वाभाविक रहता था।

लोकों का गर्भस्थ शिशु से सम्बन्ध

उन्होंने यह कहा कि क्या भगवन! संसार में जो नाना प्रकार के लोक लोकान्तर हैं, जैसे वह जेठाय नक्षत्र है, उससे निचले विभाग में मानो ध्रुव कहलाया जाता है, ध्रुव के निचले कक्ष में मानो देखो, आरुणि नक्षत्र कहलाया जाता है, आरुणि के अर्द्धभाग में मानो देखो, बृहस्पति कहलाया गया है। बृहस्पति के निचले विभाग में सूर्य कहलाया गया है, और सूर्य के अन्तर्गत जो नाना प्रकार के लोक लोकान्तर हैं और इनसे ऊर्ध्वा गति में रहने वाले जो लोक लोकान्तर हैं। जैसे अरूण्धति मण्डल है, वशिष्ठ है, जैसे रोहिणी है, जेठाय है, नाना प्रकार के जो मण्डल हैं भगवन! उनकी मैं इनके लिए जानना चाहती हूँ कि संसार में इनकी छाया संसार में क्या क्या कर्म करती है। ऐसा जब उन्होंने प्रश्न किया तो ऋषि जी बोले हे देवी! आज तुम्हे यह प्रतीत होना चाहिए कि यह जो आरुणि मण्डल है, और आरुणि मण्डल के साथ में जो वशिष्ठ मण्डल है, और वशिष्ठ मण्डल से आङ्गन में ही यह जो सप्तर्षि मण्डल

कहलाया जाता है। यह सप्तर्षि मण्डल ध्रुव मण्डल की परिक्रमा करते हैं, मानो वशिष्ठ मण्डल उनके आङ्गन में रहते हैं, उनका अपना कोई अस्तित्व इनके साथ नहीं होता, परन्तु देखो, मानव के जीवन में इनकी बड़ी विशेषता होती है। हमारे यहाँ वेदों के नाना प्रकार के सूक्त आते हैं, मन्त्र आते हैं, एक मन्त्र में कहा है वशिष्ठां ब्रह्म लोक प्रव्हा व्यापक प्रव्हे आख्यानम् मन्वेतु हृदया ऋषि कहता है वेद का आचार्य कहता है क्या माता के गर्भस्थल में बेटा! हम जैसे प्यारे पुत्र होते हैं, जिस समय बालक को मुनिवरों! देखो, अष्टम माह में मुनिवरों! देखो, बालक को जब ओज की प्राप्ति होती है, ओज की शक्ति जब प्रदान की जाती है, उस समय मानो देखो, इन वशिष्ठ और अरूण्धति इन दोनो मण्डलों की उस बालक पर छाया रहती है। जब यह माता का जो ब्रह्मरन्ध्र है, ब्रह्मरन्ध्र के पिछले विभाग में मानो देखो, पीपल का पत्र का होता है, पीपल के पत्र के अर्द्धभाग के लगभग मानो एक स्थान होता है, उसमें तीन प्रकार की नाड़ियाँ होती है, स्वान, ब्रीधि, अक्रात मानो वह जो तीन नाड़ियाँ हैं, उनमें से बहतर बहतर नाड़ियों का निकास होता है, कुछ नाड़ियाँ ऐसी हैं, जो सुरीतकेतु नाम की वाहक नाड़ियाँ जिनका सम्बन्ध मानो वशिष्ठ और अरूण्धति मण्डल से होता है। माता के गर्भस्थल में मानो जो जरायु होता है, उस जरायु में मुनिवरों! देखो, लोक लोकान्तरों की छाया रहती है। यदि मुनिवरों! देखो, अष्टम माह से माता के गर्भ से अष्ट माह में बालक का निकास हो जाता है, गर्भ से बाहरीय आ जाता है, वह बालक कदापि भी जीवित न रह सकेगा, क्योंकि यह जो नाड़ियों का जो सम्बन्ध है, वो इस प्रकार का विशेषज्ञ कहलाया गया है। क्योंकि जीवन में ओज और महानता की प्राप्ति होती है, बालक को तो बेटा! मैं आयुर्वेद में नही जाना चाहता हूँ। यह तो मैं आयुर्वेद में चला गया, आयुर्वेद के विज्ञान को

लेना नहीं चाहता हूँ, विचार क्या क्या माता अरूण्धति और वशिष्ठ मुनि महाराज दोनों का मुनिवरों! यह विचार विनिमय होता रहता था, रात्रि हो, कोई समय भी हो, परन्तु देखो, पति पत्नी का जो सम्बन्ध हो संसार में वह केवल विज्ञान विचार विनिमय करने के लिए है, संसार के नाना प्रकार के सांसारिक भोग विलासों के लिए नहीं। वह तो केवल लोक और परलोक दोनो के विचार विनिमय करने के लिए बेटा! इनका सम्बन्ध होता है, इनका जीवन एक महानता में विज्ञान के स्तर पर होना चाहिए।

मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज मैं अधिक चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ, समय मिलेगा मैं कल अपनी चर्चाएं कल और प्रगट करूंगा आज तो केवल विचार यह कि हम यह विचार विनिमय कर रहे थे दोनों पति पत्नीयों का रात्रि समय शास्त्रार्थ चल रहा था विचार विनिमय हो रहा था, मुनिवरों! देखो, प्रातःकाल हो गया विचार विनिमय होते हुए, अब राजा ने कहा भगवन! मैं आपको प्रणाम कर रहा हूँ, ऋषि बोले राजन्! तुम किस समय आ पंहुचे, उन्होंने कहा भगवन! मैं सांय काल को अपने आश्रम में प्रविष्ट हो गया था, जब मैंने माता पिताओं की चर्चाओं को श्रवण किया, तो मेरा हृदय गद् गद् हो रहा था, मैं विज्ञान की चर्चाओं को और आयुर्वेदिक चर्चाओं को मानो मानवीय दर्शन की चर्चा में मैं मग्न हो रहा था। हे भगवन! मैं भी कुछ कार्यवश आपके समीप आ पंहुचा हूँ, उन्होंने कहा राजन्! क्या कार्य है? महाराज हमारी जो राजलक्ष्मी है, वह राष्ट्र का अन्न नहीं ग्रहण कर रही है, उन्होंने कहा बहुत सुन्दर, बेटा! राजा, ऋषि, ऋषि पत्नी तीनों ने वहा से प्रस्थान कर दिया, बेटा! भ्रमण करते हुए जब वह राष्ट्र गृह में प्रविष्ट हो गई, जब वह माता कौशल्या तीनों पूज्यनीयों को दृष्टिपात किया कि मेरे तो तीनों पूज्यनीय हैं। उन्होंने बेटा! तीन आसन प्रदान कर दिए,

और उन्होंने कहा आईए वह विराजमान होते रहे तीनों के चरणों को जल से स्पर्श करके उनके आचमन किए। आचमन करने के पश्चात उन्होंने नमस्कार करके बोले कहिए भगवन! मेरे लिए क्या आज्ञा है? मातेश्वरी! हे आचार्य! क्या आज्ञा है? मेरे लिए उस समय माता अरूण्धति बोली हे देवी! मैंने यह श्रवण किया है, क्या तुम राष्ट्र का अन्न ग्रहण नहीं करती हो, उन्होने कहा हाँ मातेश्वरी! मैं राष्ट्र का अन्न नहीं ग्रहण करती हूँ। उन्होंने कहा तुम क्यों नहीं करती हो, क्या मैं इसीलिए राष्ट्र का अन्न मुझे प्रिय नहीं लग रहा है, राजा ने कहा देवी! यह अन्न तो तुम्हे ग्रहण कर ही लेना चाहिए। उन्होंने कहा कदापि नहीं भगवन! मैं राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नहीं करूंगी, क्योंकि राष्ट्र का अन्न जो होता है, यह रजोगुण, तमोगुण में सना हुआ अन्न होता है।

सङ्कल्प का महत्व

इसीलिए मैं इसको ग्रहण नहीं करूंगी, जब यह वाक उन्होंने कहा ऋषि बोले नहीं देवी! तुम्हे ग्रहण कर लेना चाहिए, उन्होंने कहा हे ऋषिवर! आपको प्रतीत है, मैंने अपने आचार्य के द्वारा यह सङ्कल्प किया है कि मैं राष्ट्र का अन्न नहीं ग्रहण करूंगी, मैं राष्ट्र का अन्न ग्रहण करने के लिए कदापि भी तत्पर नहीं हूँ, न मैं इसको ग्रहण कर सकूंगी, परन्तु देखो, मैं यह विचार और उच्चारण करना चाहती हूँ, सङ्कल्प मानव का नष्ट नहीं करना चाहिए, यदि आपकी यह आकांक्षा है, क्या मैं राष्ट्र के अन्न को ग्रहण करने लगूं। अपने सङ्कल्प को नष्ट करने लगूं, तो भगवन! यह तो शोभनीय नहीं देता, क्योंकि राष्ट्रीय अन्न ग्रहण करना मेरे सङ्कल्प का नष्ट हो जाना हैं मैंने महर्षि श्रृङ्गी के द्वारा यज्ञशाला में यह

सङ्कल्प किया था क्या मैं राष्ट्र का अन्न नहीं ग्रहण करूंगी जब तब मेरे गर्भ से उत्तम बालक का जन्म न होगा हे भगवन! मैं इस सङ्कल्प को कदापि नष्ट नहीं करूंगी क्योंकि मानव के जीवन में सङ्कल्प ही होता है यह जो सर्वत्र जगत दृष्टिपात आ रहा है यह एक सङ्कल्प मात्र से ही उद्बुद्ध हो रहा है यह सर्वत्र जगत एक सङ्कल्प है प्रभु ने सृष्टि के प्रारम्भ में एक सङ्कल्प किया था वो सङ्कल्प सृष्टि बन करके कए चक्र चल रहा है नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों वाला जगत अपने अपने स्थान पर क्रीड़ा कर रहा है इसी प्रकार भगवन! देखो, माता है पिता है मानो पति पत्नी का दोनो का सङ्कल्प होता है वह सङ्कल्प मात्र से अपने जीवन को व्यतीत करते हैं मानो पिता और पुत्री है कोई भी इस प्रकार का सङ्कल्प है भगवन! यह जो सर्वत्र जगत मुझे दृष्टिपात आ रहा है यह एक सङ्कल्प मात्र ही दृष्टिपात आ रहा है हे भगवन! इस मानव का सङ्कल्प विच्छेद हो जाता है, उस मानव का जीवन न होने के तुल्य बन जाता है प्रभु! हे भगवन! मैं इस सङ्कल्प को कदापि भी नष्ट करना नहीं चाहती हूँ। मैं न इसको नष्ट कर पाऊंगी, हे भगवन्! मेरे सामर्थ्य से यह दूरी वाक हो गया है। इसीलिए मैं इसको ग्रहण नहीं करूंगी, आपके वचनों को उन्होंने कहा भगवन! आपको यह प्रतीत है, क्या सङ्कल्प से यह नाना प्रकार के लोक लोकान्तर एक दूसरे लोक में नहीं इनका मिलान हो पाता। यह अपने अपने आसन पर क्रीड़ा कर रहें हैं, अभ्येत रूपों में भ्रमण कर रहे हैं, भगवन! मेरे प्यारे! ऋषिवर! जब यह वाक उन्होंने प्रगट कराया तो मुनिवरों! देखो, इस वाक को प्रगट कराने के पश्चात ऋषि ने पुनः भी यही कहा क्या सङ्कल्प यथार्थ है, सङ्कल्प होना चाहिए, परन्तु राष्ट्रीय अन्न का अभाव भी नहीं होना चाहिए। तुम्हारे मस्तिष्क में, उन्होंने कहा भगवन! आप यह क्या उच्चारण कर रहे हैं, उस वाक की पुनरूक्ति करते चले जा रहे हैं,

इस पुनरूक्ति शब्दों को मैं कदापि भी ग्रहण नहीं करूंगी। हे प्रभु! यह जो जगत है, मानो एक सङ्कल्प मात्र है, आज सूर्य अपने समय पर उदय होता है, समय पर अस्त हो जाता है, चन्द्रमा अपने सङ्कल्प मात्र से उदय होता है, सङ्कल्प मात्र में अपना कार्य करता रहता है। इसीलिए यह जो जगत है, सर्वत्र जगत मुझे एक सङ्कल्प सा ही दृष्टिपात हो रहा है, यदि आप यह चाहते हैं कि मैं सङ्कल्प को नष्ट करूं, तो हे प्रभु! मैं सङ्कल्प को नष्ट कर सकती हूँ, यदि आप अपने सङ्कल्प को नष्ट कर दो। आज दोनों माता अरूण्धति और आप विराजमान हो यदि आप मानो देखो, सङ्कल्प को नष्ट कर दो सङ्कल्प आप में है पति पत्नी के सङ्कल्प को तो मैं भी किसी के वाक्यों की अवहेलना कर सकती हूँ, अन्यथा भगवन! मैं कदापि भी इस सङ्कल्प को नष्ट करने के लिए तत्पर नहीं हूँ। मेरे प्यारे! ऋषिवर! जब यह विचार उन्होंने प्रगट किया, इसी विचार के साथ अपनी मनोभावना को मानवीय जीवन में एक आभा का प्रायः दिग्दर्शन होता रहता है। मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज बेटा! मैं अधिक चर्चा प्रगट करने नहीं जा रहा हूँ, विचार क्या मानव में सङ्कल्प शक्ति होनी चाहिए। सङ्कल्प से बेटा! मानव का जीवन ऊँचा बना करता है, सङ्कल्प मात्र ही है, यह सर्वत्र जगत मुनिवरों! देखो, सङ्कल्प से संसार अपना क्रिया कर रहा है, क्रीड़ा चल रही है, इसीलिए बेटा! आज का यह हमारा वाक अब समाप्त होने जा रहा है। कल समय मिलेगा तो मुनिवरों! मैं कल शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। आज का वाक समाप्त अब वेदों का पाठ होगा। आज के वाक्यों का अभिप्राय क्या हम उस माता वसुन्धरा की गोद में चलें जिस माता वसुन्धरा के गर्भ में मानवीय जीवन में एक महानता की उत्पति होती रहती है। मेरे प्यारे! ऋषिवर! वह माता वसुन्धरा है, वसुन्धरा नाम प्रभु को भी कहा गया है, मुनिवरों! वह प्रभु के द्वार पर जाने का वह

सदैव प्रयास करता रहें। वही तो माता वसुन्धरा का जीवन है, यह है बेटा! आज का वाक्, अब मुझे समय मिलेगा मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा अब वेदों का पाठ होगा। ओ३म् ब्रह्म भू रयीणां गायन्ता गदे यापकं रयीणाम् ओ३म् दधि ऋषि आभा मानं भद्राणि आश्वा नरो ब्रह्म मणा देवं आ पा ओ३म् यौ सर्वा गायन्ता मानं भद्राहाम्।

10 ## ०८ ०८ १९७५

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान की महिमा सदैव ज्ञान और विज्ञान में रमण करता रहता है, प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्याएं, प्रत्येक मेरा प्यारा ऋषि मण्डल, उस प्रभु की आभा में ही गतिशील हो रहा है अथवा जितना भी यह जड़ जगत में यह जो चेतनता दृष्टिपात आ रही है, उस चेतनता में यदि कोई मूलवत्त है, तो वह चैतन्यदेव माना जाता है। वह मेरा देव कितना विचित्र है, अथवा कितनी आभा में रमण कर रहा है, शून्य वस्तु को गति देने वाला वह मेरा प्यारा प्रभु ही कहलाता है। क्योंकि वह पूर्ण है, और पूर्ण मे से पूर्ण ही अग्रत दृष्टिपात आ रहा है। मेरे प्यारे! जब हम, उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान में रमण करने लगते हैं, तो बेटा! वह प्रभु हमें अनन्तता में दृष्टिपात आने लगता है। तो क्योंकि उसी की अनन्तता, इस मानो जड़ जगत में दृष्टिपात आ रही है। जब हम लोक लोकान्तरों को क्षेत्र में जाते हैं, अथवा उस प्रभु के विज्ञान में गतिशील होना चाहते हैं, तो बेटा! हमें ऐसा प्रतीत होने लगता है, जैसे हम परमपिता

परमात्मा के, अनन्त ज्ञान और विज्ञान में रमण कर रहे हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज हम अपने देव की प्रतिभा का वर्णन करते चले जाएं, जो संसार को रचा रहा है, अथवा शून्य को गति देने वाला है। पूर्ण में से पूर्ण को उत्पन्न कर रहा है। क्योंकि पूर्ण ही वह है, पूर्ण में से गतिशील बना करके, पूर्णता को दृष्टिपात करा रहा है।

मेरे प्यारे! आज का वेद का ऋषि, हमें केवल चेतना के सम्बन्ध में जो यह उपदेश दे रहा था, अथवा वैसे द्वितीय वाक है, परन्तु जब हम उस परमपिता परमात्मा की आभा में रमण करने लगते हैं, अथवा अपने में यह दृष्टिपात करने लगते हैं, कि वे परमपिता परमात्मा हमारी अन्तरात्मा में विराजमान है। तो उस प्रभु की अनन्तता से बेटा! यह जगत गतिशील हो रहा है, और उसी की गति मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक प्राणी मात्र में दृष्टिपात आती चली जा रही है। लोक लोकान्तरों के क्षेत्र में गति करने लगते हैं, एक एक आकाश गंगा में बेटा! नाना प्रकार के लोक लोकान्तर माने जाते हैं। महर्षि याश्काचार्य से जब महर्षि प्रवाहण ने यह कहा कि महाराज! ये क्या दृष्टिपात कर रहे हो? तो महर्षि याश्काचार्य से महर्षि प्रवाहण से यह कहा था कि महाराज! मैं इस आकाशगंगा को दृष्टिपात कर रहा हूँ। महर्षि बोले कि ऐसा क्या? इस आकाशगंगा में है। तो ऋषि याश्काचार्य कहता है कि यह जो आकाशगंगा है, मैं इसमें यह दृष्टिपात करना चाहता हूँ, क्या इसमें कितना मण्डलवाद है, अथवा कितनी निहारिकाएं हैं। तो मेरे प्यारे! महर्षि याश्काचार्य ने यह कहा था कि एक आकाश गंगा में मुझे नाना प्रकार की निहारिका दृष्टिपात आती हैं। एक एक निहारिका ऐसी है, मानो जिनका प्रकाश चला हुआ, लाखों लाखों वर्षों में मेरे प्यारे! इस पृथ्वी मण्डल पर आ पाएगा। ऋषि

कहता है जब मैं और ऊर्ध्वा वाली निहारिका को दृष्टिपात करता हूँ, तो उसके ऊर्ध्वा वाली निहारिका ऐसी ऐसी हैं मेरे प्यारे! पचास पचास लाख वर्षो मे उसका प्रकाश पृथ्वी में आ पाएगा। ऋषि कहता है क्या ऐसी ऐसी मानो आकाश गंगाए उस निहारिका का प्रकाश इस पृथ्वी मण्डल पर पचास लाखो वर्षो में आयेगा ऐसी ऐसी मानो प्रभु के राष्ट्र में मेरे प्यारे! अनन्तवत मानी गई हैं। अनन्त आकाश गंगाएं हैं उन आकाश गंगाओं में अनन्त निहारिकाएं मानी जाती हैं। ऐसा वेद का ऋषि कहता है वृद्धम् ब्रह्मे निहकारष्टं ब्रह्मे प्रकाशा स्वस्त प्रव्हे आप्यातं योजनाति कृतप्पव्हा कृताः वेद का ऋषि यह कहता है क्या लाखों लाखों क्या, अरबों वर्षो में मेरे प्यारे! एक निहारिका आ पाती है, बहुत सी निहारिका ऐसी हैं, जो मुनिवरों! देखो, सृष्टि का अन्तिम समय आ जाएगा अन्तिम समय भी समाप्त होने के पश्चात मेरे प्यारे! निहारिका नहीं आ पाएगी। ऐसा प्रभु का राष्ट्र है।

मानव का मौलिक कर्तव्य

बेटा! याश्काचार्य यह कहता है याश्काचार्य जी ने यह कहा प्रवाहण जी से कि महाराज! मैंने एक ही आकाशगंगा में मानो देखो, पौणे दो अरब से भी विशेष मैंने सूर्य मण्डलों की गणनाएं की हैं। आज बेटा! जब हम उस प्रभु के विज्ञान अननतमयी को विचारने लगते हैं, उसका ज्ञान और विज्ञान कितना अनन्तवत्त माना गया है। आज मैं उसके ज्ञान और विज्ञान में जाना नहीं चाहता हूँ। परन्तु यहाँ प्रत्येक मानव वेद की परम्परा में निहित रहा है, वेदों को आभा पर में निहित रहने वाला प्राणी, अपने मे सदैव अनुसन्धानवेत्ता रहा है, अनुसन्धान करता रहा है, अनुसन्धान करना मानव का कर्तव्य है, प्रत्येक मेरी प्यारी माताएं, प्रत्येक मेरा प्यारा ऋषि मण्डल, प्रत्येक मानव जब अनुसन्धान की वेदी

पर निहित होता है, अनुसन्धान करने लगता है। क्योंकि अनुसन्धान करना, उसका मौलिक कर्तव्य माना जाता है। क्योंकि अनुसन्धान ही मानव का मौलिक जीवन माना गया है, यहाँ नाना प्रकार के अनुसन्धान होते रहें हैं, आज मैं बेटा! लोक लोकान्तरों के क्षेत्रो में नही जाना चाहता हूँ, यहां नाना प्रकार के विज्ञान नाना प्रकार अन्वेषण बेटा! परम्परागतों में रहे हैं, नाना प्रकार की आभाओं में गति करने वाला, अपनी अपनी अनुसन्धानशाला में बेटा! नाना प्रकार के चित्रों में चित्रावलियों को दृष्टिपात करता रहा है।

मुझे स्मरण है बेटा! यह जितना भी भौतिकवाद है अथवा यह भौतिकवाद ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में गति करता रहा है। मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें यह निर्णय देते हुए कहा था क्या प्रत्येक मानव जब यह विचारता है, कि मेरा अनुसन्धान करना, मेरा कर्तव्य है, हमारे यहाँ नाना प्रकार के ऋषि होते रहे थे, और देखो, त्रेता के काल में, ऋषि बाल्मीकि क्या? महर्षि वशिष्ठ, महर्षि श्वेतकेतु, महर्षि विभाण्डक, महर्षि शवातक ऋषि महाराज, अग्रेत्तवर ऋषि आदि आदि ऋषियों को बेटा! समूह एकत्रित होता रहा है। ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी रोहिणी केतु, बेटा! व्रतेन्तु आदि ब्रह्मचारियों का अनुसन्धान करने का मौलिक कर्तव्य रहा है। मुझे स्मरण है बेटा! जब यहाँ भगवान राम ने राजसूय यज्ञ किया था मुझे याग के सम्बन्ध में नाना प्रकार की चर्चाएं आती रहती हैं, यागों का प्रकरण स्मरण आता रहता है, हमारे यहाँ यागों की परम्परा, बहुत ही विशिष्ठ मानी गई है। मैंने बहुत पुरातन काल में, बेटा! तुम्हे निर्णय करते हुए यह कहा था, क्या प्रत्येक मानव, मानव देखो, यागमयी माना गया है। याग की उसकी परम्परा रही है। माता वसुन्धरा की गोद में, जब वैज्ञानिक चला जाता है, जब उस वसुन्धरा के गर्भ में परणित होने के पश्चात नाना प्रकार की आभाओं से युक्त होने वाले

विज्ञान को जानने लगता है।

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं बेटा! विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ, विचार विनिमय क्या मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जब माता वसुन्धरा की गोद में, नाना प्रकार की आभाओं को जानने वाले आभाशाली ब्रह्मचारी अथवा ब्रह्मवेत्ता मानो वसुन्धरा के गर्भ में, जाने के पश्चात नाना प्रकार की आभाओं को जानते रहे हैं। मेरे प्यारे! मेरी प्यारी माताएं मानो ब्रह्म समाज देखो, ब्रह्मवेत्ताओं की आभाओं में रमण करते हुए अपने जीवन को शान्ति और वृधा, प्राकृतिक अश्वासन करते हुए मानो अपने जीवन को बेटा! सुसज्जित बनाते रहे हैं। आज मैं इस क्षेत्र में विशेष जाना नहीं चाहता हूँ। आज मैं तुम्हे यागों के प्रकरण में ले जाना चाहता हूँ, मेरे प्यारे! महानन्द जी! की सुन्दर सुन्दर प्रेरणाएं आती रहती हैं। उन प्रेरणाओं के आधार पर आज मैं तुम्हे त्रेता के काल में ले जाना चाहता हूँ, मेरे पुत्र जब देखो, भगवान राम लक्ष्मण भरत और शत्रुघ्न मानो देखो, आनन्दयुक्त विराजमान हैं। विराजमान हो करके उनके हृदय में यह प्रेरणा आ रही है कि अङ्गेत्तवर ऋषि महाराज ने यह कहा था कि हमारे विचार में यह आता है राम तुम राजेश्वरी यज्ञ करो। मानो तुम्हारे यहाँ देखो, लंका को संसार को विजय करने के पश्चात तुमने कोई याग नहीं किया, क्योंकि याग करना मानव का कर्तव्य है। जिससे समाज में मानवता आ जाए, क्योंकि मानवता के लिए प्रत्येक मानव याग कर्म करता है। याग का अभिप्राय मानव को सुसज्जित बनाना है, मानव को ज्ञान के क्षेत्र में लाना है। मानव को कर्तव्यवादी बनाना है, जब मेरे प्यारे! ऋषि ने यह कहा तो राम के हृदय में यह नाना विचार अङ्कित हो गए।

बेटा! तो ऋषि बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, उस काल की परम्परा बड़ी विचित्र मानी गई

है। हमारे यहाँ यह परम्परा मानी गई क्या परम्परागतों से ही, महर्षि बाल्मीकि आश्रम में मानो देखो, नाना राजकन्याएं, राज लक्ष्मीयां बेटा! देखो, उनके आश्रम में पुत्राणि ब्रह्मे उत्पन्ना क्योंकि पुत्र को उत्पन्न करती रहीं हैं। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि बाल्मीकि आश्रम में मुनिवरों! देखो, आयुर्वेदाचार्य क्योंकि आयुर्वेद के जानने वाले ऋषि थे, आयुर्वेद को कौन जानता है बेटा! देखो, महर्षि बाल्मीकि आयुर्वेद को जानते थे, और आयुर्वेद के पारायण बुद्धिमान होने के नाते मेरे प्यारे! देखो, त्रेता के अप्रहा रघुवंश में जितनी भी मानो देखो, राष्ट्र कन्याएं होती राज लक्ष्मीयां होती, उसमें आधुनिक विद्या आयुर्वेद की विद्याएं, मेरे प्यारे! देखो, पान करने का कार्य होता रहा है। भगवान राम को यह कहा गया कि तुम सीता को मानो उनके गर्भ से पुत्र की उत्पति होगी, महर्षि बाल्मीकि आश्रम में इनका प्रवेश कराया जाए।

तो मेरे प्यारे! भगवान राम लक्ष्मण मानो देखो, राष्ट्र कर्मचारियों ने यही विचार कि सीता का आगमनं ब्रहे मानो उनका प्रस्थान होना चाहिए। सीता ने उस याग को स्वीकार किया, मेरे प्यारे! महर्षि बाल्मीकि आश्रम में जो आयुर्वेद के महापण्डिता थे उनके आश्रम में उनको प्रवेश कराया गया वह उनके आश्रम में मानो देखो, अपनी दीक्षा अपना सन्ध्या पठन पाठन का कार्य प्रारम्भ होता है क्योंकि हमारे यहाँ परम्परा यह मानी जाती है ऋषि मुनियों के युग में ऋषि मुनियों की आभा में प्रत्येक माता मेरे प्यारे! ऋतु के अनुसार मानो भोजन छादन और नाना औषधियों का पान किया करती थी, मुझे वह काल स्मरण है मैं आधुनिक काल का तो मुझे प्रतीत नहीं, परन्तु वह काल मुझे स्मरण है बेटा! जिस काल में मेरी प्यारी माता नौ माह नौ दिवस में बेटा! देखो, माता के गर्भ से पुत्र उत्पन्न के उत्पन्न होने से तो प्रत्येक माह नौ प्रकार की औषधियों का पान किया

जाता है।

मुझे वह काल भी स्मरण आता रहता है, जब मेरे प्यारे! देखो, महात्मा भुञ्जु के पुत्र अश्विनी कुमार जब मुनिवरों! देखो, माता के गर्भस्थल में, बालक का प्रवेश हुआ तो माता स्नेहकेतु बेटा! पूर्णिमा के दिवस चन्द्रमा के सोम का रस को पान करती रही। बेटा! सोम नाम की लता होती है, उस सोम नाम की लता का पान किया जाता है। मानो देखो, माताएं जो माताएं, अपने गर्भ के अपने पुत्र को उत्पन्न करना चाहती हैं, ऊँचे बालक को जन्म देना चाहती हैं। मेरे प्यारे! उनकी आयुर्वेद में निष्ठा होनी चाहिए। आयुर्वेद का अध्ययन करना चाहिए, क्योंकि आयु के जानने वाली, आयु को देने वाली पवित्र माता होती है। मेरे प्यारे! देखो, स्नेहकृत नामक औषध होती है, उस औषध में यह विशेषता है, जिस समय योगीजन मेरे प्यारे! सोमरस का पान किया करते थे, उसमें यह है कि मानो प्रतिपदा से ले करके, वह पूर्णिमा तक, मेरे प्यारे! उस औषधि में, पत्र आना और मानो देखो, कृष्ण पक्ष आते ही, कृष्ण पक्ष में मेरे प्यारे! उसके पत्रों को का प्रतिपदा में एक, द्वितीय में दो मानो झड़ जाना उसी प्रकार मेरे प्यारे! देखो, शुक्ल पक्ष में वह पत्र हो जाना और शुक्ल पक्ष में मेरे प्यारे! उसी प्रकार की पत्तियां आ जाना तो उसको पान करने वाला मेरे प्यारे! देखो, उसको सोमलता कहा जाता है। सोमलता होती है, एक श्वेतकेतु नामक औषध होती है, एक सर्पकेतु नामक औषध होती है, त्रीति नामक औषध होती है, त्रिकुटा नामक औषध होती है, त्रिव्रत नामक औषध होती है इन औषधियों का पान करा करके, बेटा! ऋषि मुनि जब सोमरस का पान करा करके उस सोम को मेरी प्यारी माताएं अष्ट माह में जब ग्रहण करती है, तो वह बालक माता के गर्भस्थल से बेटा! आयुर्वेद का पण्डिता मानो देखो, सुसज्जित बुद्धिमत्ता, प्रखर बुद्धि

वाले बालक को वह माता जन्म देती है। वह आयुर्वेद को जानने वाली होती हैं।

आज मैं बेटा! उस प्रकरण में नही जाना चाहता हूँ, परन्तु पूर्णिमा के दिवस मेरी प्यारी माता जागरूक रह करके, मानो देखो, सोमलता जो सोमरस चन्द्रमा से उत्पन्न हो रहा है, उसको जब मेरी प्यारी माता जब पान करती है तो हे माँ! तेरे गर्भस्थल से अश्विनी कुमारों जैसे महापुरूषों का जन्म होता है, परन्तु आज मैं बेटा! इस प्रकरण में जाना नहीं चाहता हूँ, यह तो आयुर्वेद का प्रकरण है। महात्मा अश्विनी कुमारों ने मेरे प्यारे! देखो, लगभग एक सौ एक वर्ष तक यह नाना प्रकार की औषधियों के ऊपर अनुसन्धान किया ऐसा मुझे स्मरण आता रहा है, क्या उन्होंने मेरे प्यारे! देखो, एक सौ एक वर्ष के पश्चात ब्रह्म की इच्छा जागरूक हुई, कि मैं ब्रह्मवेत्ता बनूंगा।

तो मेरे प्यारे! ऐसा कहा जाता है कि महात्मा ब्रह्मवेत्ता जब उनके मस्तिष्क में यह विचार आया कि मैं ब्रह्मवेत्ता बनूंगा इन्द्र को यह प्रतीत हुआ क्या अश्विनी कुमार ब्रह्म की विद्या को पान करने के लिए तत्पर हैं, आयुर्वेद के महापण्डिता हैं, अब वह ब्रह्म विद्या के लिए गमन कर रहें हैं। उसी समय महाराज इन्द्र ने यह घोषणा कराई, कि जो अश्विनी कुमारों को ब्रह्म की विद्या प्रदान करेंगें, मानो उसके मस्तिष्क के कण्ठ के ऊपरले भाग को, दूरी कर दिया जाएगा, ऐसा बेटा! मुझे स्मरण आता रहा है, क्या जब यह विचारों की घोषण हुई तो बेटा! ऋषि मुनियों का एक समूह एकत्रित हुआ, महर्षि भृगु मुनि की अध्यक्षता में बेटा! कजली वनों में एक सभा हुई, उस सभा में नाना ब्रह्मवेत्ता विराजमान हुए उसमें महात्मा दधीचि भी विराजमान हुए, तो महात्मा दधीचि इत्यादियों ने यह कहा कि अश्विनी कुमारों को ब्रह्म की विद्या देना कोई आश्चर्य नहीं हैं। मानो कोई अपराध नहीं है, इन्द्र के

यहाँ से यदि कोई स्वार्थवाद में घोषणा हुई है तो यह घोषणा प्रिय नहीं हैं, मेरे प्यारे! ऋषि मुनियों का हृदय तो विशाल होता है, मानो तपा हुआ होता है, ऋषि मुनियों के हृदय में जब यह जिज्ञासा जागरूक हुई।

तो मुनिवरों! देखो, विचार तो सम्मुख आ गया परन्तु देखो, राजा ऋषि मुनियों ने यह कहा कि राष्ट्रीय परम्परा है, अथवा प्रणाली है इसको स्वीकार करना हमारा कर्तव्य है, मेरे प्यारे! इस कर्तव्यवाद की वेदी पर सर्वत्र ऋषियों ने यह कहा कि अश्विनी कुमारों को ब्रह्म की विद्या नहीं प्रदान होनी चाहिए इसमें महात्मा अश्विनी कुमार ने मानो देखो, अश्विनी कुमारों के लिए जब ऐसा कहा गया तो महात्मा दधीचि ने, महात्मा रोहिणी केतु ने, महात्मा कंटक ऋषि ने और मेरे प्यारे! देखो, महर्षि प्रवाहण और दालभ्य और महात्मा रेवक मुनि महाराज ने यह घोषणा की कि ब्रह्म विद्या के लिए, अश्विनी कुमारों का आसन पर आगमन होगा, तो ब्रह्म विद्या अवश्य प्रदान की जाएगी।

मेरे प्यारे! देखो, यह वाक उनकी सभा विर्सजन हो गई सन्ध्याकाल हो गया, अपने अपने कक्ष में ऋषियों ने प्रस्थान किया, मेरे प्यारे! देखो, कुछ समय के पश्चात महात्मा भुञ्ज के दोनों पुत्र अश्विनी कुमार मेरे प्यारे! भ्रमण करते हुए वह ब्रह्मा व्रतम् ब्रह्मे महात्मा दधीचि के द्वार पर जा पंहुचे, महात्मा दधीचि ने उनका स्वागत किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, अतिथि सत्कार बहुत ही ऊर्ध्वा गति में रहा है ऋषि ने अश्विनी कुमारों का अतिथि सत्कार किया नाना प्रकार के कन्दमूल इत्यादियों का पान कराया, ऋषिवर ने जब विराजमान हो करके, यह कहा कहो भगवन! अश्विनी कुमारों तुम्हारा आगमन क्यों हुआ? उन्होंने कहा प्रभु! हमारा आगमन इसीलिए हुआ है कि हम ब्रह्मविद्या को पान करने के लिए आयें हैं, हम ब्रह्म विद्या के उत्सुक है, जिज्ञासु हैं, आप हमें ब्रह्मविद्या का पान कराईए।

जब यह वाक उन्होंने श्रवण किया महात्मा दधीचि ने कहा मैं तुम्हें ब्रह्म विद्या का पान तो करा सकूंगा, परन्तु तुमने आयुर्वेद पर बहुत ही अनुसन्धान किया है, मैंने यह श्रवण किया है क्या नाना औषधियाँ वनस्पतियाँ, औषधियाँ अपने अपने मुखारबिन्द से अपने अपने गुणो का वर्णन करती हैं। परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ कि तुम क्या सहायता करोगे? अश्विनी कुमारों ने कहा क्या प्रभु! क्या प्रगट करें? उन्होंने कहा इन्द्र के यहाँ से घोषणा हुई है, जो अश्विनी कुमारों को ब्रह्म का उपदेश देगा, उसके मस्तिष्क को कण्ठ के ऊपरले भाग को दूरी कर दिया जाएगा, तुम क्या सहायता कर सकते हो? उन्होंने कहा कि महाराज! हम यह कर सकते हैं कि तुम्हारे कण्ठ के भाग को मानो औषधियों में नियुक्त कर सकते हैं, और अश्व के मुखारबिन्द से हम ब्रह्म का पान कर सकते हैं। मेरे प्यारे! महात्मा दधीचि का हृदय प्रसन्न हो गया, तो मुझे यह स्मरण आ रहा है यह विद्या परम्परागतों से ऋषि मुनि के मस्तिष्कों में रही है, मानो अश्विनी कुमारों के मस्तिष्कों में रही है, उन्होंने बेटा! देखो, महात्मा दधीचि के कण्ठ के ऊपरले भाग को औषधियों में नियुक्त कर दिया, और मुनिवरों! देखो, उनके अश्व के मस्तिष्क को कण्ठ पर स्थिर करके नाना प्रकार की औषधियों का लेपन किया, वह औषधियों पर मानो स्थिर हो गया और ब्रह्म का उपदेश क्योंकि देखो, मानो अन्तरात्मा प्रत्येक मानव के हृदय में है, हृदय से ब्रह्म का उपदेश चल रहा है, और वह अश्व के मुखारबिन्द से बेटा! ब्रह्म के उपदेश को पान कर रहे हैं। जब ब्रह्म का उपदेश पान हो रहा है, क्योंकि ब्रह्मा अप्रहे असुता मुझे स्मरण आता रहा है, ऐसा मुझे प्रतीत है बेटा! मानो देखो, अश्वताम् नामक एक औषध होती है, जो पर्वतों में प्राप्त होती है, सुरीची केतु नामक एक औषध होती है, दोनों का पात बना करके, उसको पान करने से मेरे प्यारे! देखो, अश्व की जो वाणी है, वह

मानो अश्व की भाषा को जान लेता है। उसको मानव भली भान्ति जान लेता है। बेटा! मैंने तुम्हें पुरातन काल से यह कहा है क्या एक सर्पकेतु नामक औषध होती है, उस औषध को पान करने से सर्प की वाणी को मानव सर्प की भाषा को जान लेता है योगी। मेरे प्यारे! देखो, एक सुरीचीक नामक औषध होती है, सुरीचीक नामक जो जो पशु होता है, उसकी वाणी को भली भान्ति जान लेता है। आज मैं बेटा! आयुर्वेद के ब्रह्माण्ड में आयुर्वेद की प्रतिभा में जाना नहीं चाहता हूँ, अनन्त उसका विज्ञान है, बेटा! मैं आयुर्वेद के विज्ञान में जाना नहीं चाहता हूँ।

विचार विनिमय क्या वेद का ऋषि बेटा! देखो, ब्रह्म का उपदेश दे रहा है, क्योंकि ब्रह्म का उपदेश मानो प्रत्येक अन्तरात्मा में विराजमान है, मुझे स्मरण आता रहता है, बेटा! जब महात्मा दधीचि ब्रह्म का उपदेश देते रहते थे ब्रह्म का उद्गार चलता रहता था, तो मेरे प्यारे! देखो, कोई प्राणी नहीं होता था कोई मानव नहीं होता था परन्तु देखो, प्राणी नाना प्रकार के प्राणी जो मार्गों में रहने वाले विचरण करने वाले उनके वाक्यों को श्रवण करते थे, उसमें क्या विशेषता थी, क्योंकि आत्मा का ज्ञान मानो देखो, ब्रह्म की पिपासा मानो देखो, प्रत्येक प्राणी मात्र को होती है। चाहे वह सर्पयोनि में रहे सिंह योनि में हो, मृगराज में हो किसी भी योनि में हो आत्मा को अपने पिता की पिपासा होती है। मेरे प्यारे! जहाँ अहिंसा से उद्गार होता हुआ, मानो ऊर्ध्वा गति को जाता हुआ जो मानव अपने हृदय से उद्गार प्रगट करता है। उसको प्रत्येक मानव प्रत्येक प्राणी श्रवण करने के लिए तत्पर होता है, उसी को श्रवण करता हुआ अपने में यह स्वीकार करता है कि मैं प्रभु की आनन्दमयी धारा में विराजमान हूँ।

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ, मैं प्रभु के विज्ञान में जाना नहीं

चाहता हूँ, विचार विनिमय क्या मेरे प्यारे! जब अश्विनी कुमार ब्रह्म का उपदेश पान करते रहे। तो महाराज इन्द्र को यह प्रतीत हो गया था कि यहाँ देखो, महात्मा दधीचि के आश्रम में अश्विनी कुमार ब्रह्म की विद्या को पान कर रहें हैं, महात्मा मेरे प्यारे! देखो, इन्द्र ने अपने अस्त्रों शस्त्रों को महात्मा दधीचि के कण्ठ के ऊपरले भाग को दूरी कर दिया। मुनिवरों! देखो, अश्विनी कुमारों ने उसी समय देखो, जो वह वास्तविक जो उनका कण्ठ का ऊपर ला भाग था, जो औषधियों में स्थिर था उस कण्ठ को ला करके कण्ठ के ऊपरले भाग में ज्यों का त्यों स्थिर कर दिया। नाना प्रकार की औषधियों का लेपन किया जैसे एक शङ्खला नामक औषध होती है, एक कण्टाग्री नामक औषध होती है, एक त्रि भानु, नामक औषध होती है एक स्नेहलता नामक औषध होती है, स्नेहशरद नामक एक औषध का मेरे प्यारे! कण्टक नामक औषधों का पात बना करके मुनिवरों! देखो, इनको खरल करने के पश्चात उनका लेपन करने के पश्चात मेरे प्यारे! देखो, कण्ठ में ज्यों के त्यों प्राण गति करने लगते हैं।

मेरे प्यारे! ऐसा मुझे स्मरण रहा है, क्या मानो इस आयुर्वेद की विद्या को परम्परागतों से ही, मानव को जान लेना है, अश्विनी कुमारों का सहस्त्रों वर्षो अभ्यास मेरे प्यारे! अनुसन्धान महात्मा दधीचि को ज्यों का त्यों स्थित कर दिया, ऐसा मुझे स्मरण आता रहा है। मेरे प्यारे! देखो, महाराजा इन्द्र को जब यह प्रतीत हुआ तो द्वितीय भाग दूरी नहीं कर सकता था, यह नियमावली बनी हुई थी, तो मुनिवरों! देखो, ब्रह्म का उपदेश प्रारम्भ करते रहे ब्रह्म क्या है? तो मेरे प्यारे! देखो, यह आयुर्वेद का विज्ञान आयुर्वेद की आभा आयुर्वेद की जो प्रतिभा है, यह मेरे प्यारे! देखो, यह प्रत्येक मेरी प्यारी माता के हृदय में निहित रहती है, आज जो माता अपने पुत्र को यह चाहती है कि मेरा

पुत्र ब्रह्मवेत्ता हो, मेरा पुत्र आयुर्वेद का महापण्डिता हो, त्याग और तपस्या में परणित रहने वाला हो, माता उसी प्रकार का अपने पुत्र को निर्माणित कर सकती है।

आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ, मैं इन वाक्यों में जाना चाहता था, आज बेटा! मैं त्रेता के काल में ले जाना चाहता हूँ, त्रेता के काल की वाक देखो, हमारे यहाँ त्रेता के काल मे यह नियमावली बनी हुई थी और यह नियमावली क्या थी क्या राष्ट्रीय राजकन्यांए उनके पुत्रों! का जन्म आयुर्वेद के महापण्डिता के द्वारा होता था अश्विनी कुमार मेरे प्यारे! देखो, उसमें अश्विनी कुमार भी बुद्धिमान थे, महर्षि भी मेरे प्यारे! देखो, वह आयुर्वेद के महान मर्म को जानते थे। उसके गर्भ को जानते थे। तो मेरे प्यारे! देखो, यह परम्परा अथवा इनका सृजन होता रहा है, मुझे स्मरण आता रहा है जब बेटा! देखो, उनके आश्रम में वेदों का अध्ययन करते रहे हैं, आयु का अध्ययन करने वाली मेरी पवित्र माताएं अपने गर्भस्थल में करा देती हैं। परन्तु आज मैं बेटा! इन वाक्यों में जाना नहीं चाहता हूँ। महर्षि बाल्मीकि के यहाँ मेरे प्यारे! देखो, लव का जन्म हुआ कुश उनको प्राप्त हुआ जो पुत्र मेरे प्यारे! महर्षि बाल्मीकि आश्रम में धर्नुर्विद्या का अध्ययन करते थे। तो मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ ऋषि मुनियों का समूह एकत्रित हुआ इसमें मेरे प्यारे! जिसमें ब्रह्मचारी व्रतेन्तु ब्रह्मचारी वत्स अङ्गिरा ऋषि महाराज मेरे प्यारे! महर्षि विभाण्डक महर्षि सुकेतकेतु महर्षि ब्रह्मव्रता मेरे प्यारे! नाना ऋषि मुनियों का समूह एकत्रित हुआ, जिसमे महर्षि भारद्वाज, ब्रह्मचारी रोहिणीकेतु, आदि ऋषि मुनियों को समूह बेटा! एकत्रित हुआ, तो यहाँ याग की परम्परा को स्थापित करने के लिए राजेश्वरी याग होना चाहिए। मेरे प्यारे! राम ने याग के दिवस को चुनौती प्रदान की, परन्तु राम ने भारद्वाज ब्रह्मचारी सुकेता और ब्रह्मचारी व्रतेन्तु और

वत्स से यह कहा कि मैं उस काल में याग करा सकता हूँ, जबकि मुझे याग के फल को दृष्टिपात कराया जाए। याग की आभा को दृष्टिपात कराया जाए। तो उस समय भारद्वाज मुनि ने यह कहा कि मैं अवश्य कराऊंगा, तो मेरे प्यारे! वहाँ याग का प्रारम्भ जिस दिवस को चुनौती प्रदान की थी, वह दिवस आ गया दिवस आने के पश्चात सीता को देखो, बाल्मीकि आश्रम में से लाया गया। और यज्ञशाला में मानो देखो, उनको यज्ञमान की उपाधि प्रदान की गई, यज्ञमान का जब चुनाव हुआ तो मेरे प्यारे! उदगाता इत्यादि विराजमान थे, होताजनों का समूह एकत्रित हो गया, होताजनों से यह कहा गया कि हे होताओं! तुम अपने यज्ञमान की आयु की प्रार्थना करो, हे होताजनों! तुम अपने यज्ञमान की मानो देखो, उनके जीवन की इच्छा प्रगट करों जो भी संसार में धर्म के मर्म को जानने वाले यज्ञमान उनकी आयु दीर्घ बनेगी तो धर्म की परम्परा वैदिक परम्परा मानो स्थिर रह सकेगी। इस प्रकार का वचन उन्होंने ऋषि मुनियों ने प्रगट किया होताओं से कहा होताओं ने कहा ऐसा ही होगा।

तो मेरे प्यारे! जब याग का प्रारम्भ हुआ प्रारम्भ होते जब यज्ञ का पठन पाठन का क्रम प्रारम्भ हुआ, तो स्वाहाः उच्चारण करते थे जब स्वाहाः उच्चारण करते क्योंकि स्वाहाः का अभिप्राय स्वाहाः जो शब्द है वह प्रत्येक आहुति के साथ में द्यौ मण्डल को जाता है। अथवा अन्तरिक्ष को जाता है, ऋषि कहता है क्या गन्धर्व वेदा ब्रह्म कृतां चित्राणि घृतं अस्वातं ब्रह्मे अपनातम् वेद का ऋषि यह कहता है, वेद का आचार्य कहता है कि जब यज्ञमान यज्ञशाला में विराजमान होता है, होताजनों के सहित आता है। जब वह अग्न्याधान करता है, तो अग्नि में जब स्वाहा कहता है, तो स्वाहाः के साथ में जितने होता जन हैं, जैसे ब्रह्मा, उद्गाता, अध्वर्यु, पुरोहित है, मानो जितने भी होता जन हैं,

ऋत्विज हैं और यज्ञमान हैं और यज्ञशाला इस प्रकार के आकार की बनी हुई है, उसका स्वाहाः के साथ में अग्नि की धाराओं में अग्नि की तरंगो में वह चित्र मेरे प्यारे! वह चित्र मेरे प्यारे! द्यौ मण्डल को प्राप्त हो जाता है। मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विज्ञान की चर्चा प्रगट कर रहा हूँ, आज मुनिवरों! देखो, जब भगवान राम ने यह कहा महर्षि भारद्वाज मुनि से ब्रह्मचारी सुकेता से हे ब्रह्मचारी सुकेता! हे ऋषिवर भारद्वाज! मैं जानना चाहता हूँ मैं यज्ञ के फल को जानना चाहता हूँ। इसमें क्या वैज्ञानिकता है मुझे प्रत्यक्ष दृष्टिपात कराईए, मैं विज्ञान की आभा को जानना चाहता हूँ, मेरे प्यारे! जब भगवान राम ने यह कहा तो महर्षि भारद्वाज और ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी रोहिणीकेतु, ब्रह्मचारी सामभूनि इत्यादि ब्रह्मचारियों ने कहा बहुत सुन्दर तो मेरे प्यारे! उनकी विज्ञानशाला में मेरे प्यारे! ऐसे ऐसे यन्त्रों का निर्माण हुआ था जब मेरे प्यारे! यन्त्र में निर्धारित करते थे, कि ऐसे शब्द में कितने परमाणु उत्पन्न होते हैं, और कितने परमाणुओं से माता के गर्भस्थल में बालक का निर्माण होता है।

शुद्ध मन्त्रों का प्रभाव

तो मेरे प्यारे! देखो, उसके यन्त्र में दृष्टिपात होते थे, तो वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कहता है भारद्वाज क्या हे राम! आओ, तुम दृष्टिपात करो तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने यन्त्र का दिग्दर्शन कराया जिस यन्त्र में वह स्वाहाः उच्चारण करने वाले यज्ञमान ऋत्विज थे मेरे प्यारे! देखो, उनका चित्र जा रहा है। अन्तरिक्ष में प्रत्येक स्वाहाः के साथ में अग्नि की धाराओं पर विराजमान हो करके मेरे प्यारे! देखो, उनका आकार बना हुआ, यज्ञशाला इतने आकार में बन रही थी, उस आकार वाला का मेरे प्यारे! सूक्ष्म बन करके वह यज्ञशाला में, उनके यन्त्र में मेरे प्यारे! वह स्थूल रूप से

चित्रावली बन करके दृष्टिपात आ रहा था। राम से कहा वशिष्ठ बोले हे राम! तुम दृष्टिपात करो। जितना यज्ञमान पवित्र होता है जितने ऋत्विज पवित्र होते हैं, सुहृदय से होते हैं, उतना ही यज्ञ पवित्र होता है। अशुद्ध वातावरण को नष्ट कर रहा है, पवित्रता को उत्पन्न कर रहा है। मेरे प्यारे! देखो, जब ब्राह्मण मेरे प्यारे! देखो, उद्गाता उसका गान गाता है, जितना शुद्ध वेद का मन्त्र होता है, उतना ही बेटा! वायुमण्डल में अशुद्ध परमाणुओं को नष्ट करता हुआ शुद्ध परमाणुओं को जन्म देता हुआ मेरे प्यारे! द्यौ लोक को प्राप्त हो जाता है। मेरे प्यारे! आज मैं नहीं कहता हूँ, वेद का ऋषि कहता है, विज्ञान कहता है, महर्षि भारद्वाज मुनि का विज्ञान कहता है, बेटा! महर्षि तत्त्व मुनि महाराज ने मेरे प्यारे! देखो, सतोयुग के मध्य में मुनिवरों! देखो, इस विज्ञान को भली भान्ति जान लिया था, आदि ब्रह्मा ने प्रारम्भ में जब याग की रचना हुई, तो इस आभा को प्रति जान लिया था, किसने जाना आदि ब्रह्मा ने जाना, ब्रह्मा के दो शिष्य थे, श्वे भानु और त्रेतकेतु मेरे प्यारे! दोनो ब्रह्मचारियों ने जाना मुनिवरों! देखो, परम्परागतों से विज्ञान ऋषि मुनियों के ब्रह्मवेत्ताओं के मस्तिष्कों में निहित रहा है।

आज मैं बेटा! विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं जा रहा हूँ। विचार विनिमय केवल क्या कि मैं आज अपने प्यारे प्रभु का गुणगान गाता हुआ, उच्चारण कर रहा था वेद का ऋषि यह कहता है, भारद्वाज मुनि ने यह कहा कि यन्त्र का गृह है मानो इसीलिए यज्ञमान को याग करना चाहिए। राजा के राष्ट्र में याग होने चाहिए। क्योंकि कोई भी राजा के राष्ट्र को उत्तम बनाना चाहता है, कोई भी गृह पति पत्नी अपने गृह को ऊँचा बनाना चाहते हैं, याग तो परन्तु याग के साथ में, जितनी वाणी पवित्र होती है, उतनी वाणी में अग्नि की दाह होती है, पवित्रता की दाह होती है उतना ही गृह यज्ञ वातावरण

मेरे प्यारे! पवित्र होती है, आज कोई भी मानव अपने गृह को स्वर्ग बनाना चाहता है जब वह स्वर्ग बनाना चाहता है, तो पति पत्नी अपने बाल्य बालिकओं को ले करके जब विराजमान होता है, अपने गृह में तो मेरे प्यारे! वेद का उपदेश दिया, ऋषि ने और शुद्ध और पवित्र दर्शनों का अध्ययन हो रहा है।

तो मेरे प्यारे! देखो, वह जो शब्द है, वह ही इस गृह को पवित्र बनाते हैं, उस गृह को आभा से युक्त करा देते हैं, वह गृह मेरे प्यारे! देखो, स्वर्ग की कामना करते हैं। स्वर्ग बन जाता है, जहाँ पति पत्नी गार्हपथ्य क्या गृहपथ्य नाम की अग्नि की पूजा करते हैं, गृहपथ्य नाम की अग्नि की पूजा क्या है? जो गृह में अग्नि प्रदीप्त रहती है, पति पत्नीयों का विचार वह गृहपथ्य नाम की अग्नि कहलाता है। पुत्र! वह दोनों विचार मानो देखो, दोनो के विचार दार्शनिक विचार मर्मज्ञ विचार मानो उनके गृहों में प्रसारण होते रहेंगे। गृह में प्रविष्ट होते रहेंगे, तो गृह मेरे प्यारे! उतना ही पवित्र बनेगा, आज जो भी मानव अपने बाल्य बालिकाओं को ऊँचा विचार बनाना चाहता है, स्वर्ग में ले जाना चाहता है, तो मुनिवरों! देखो, माता पिता अपने आचरणों को शुद्ध बना करके और के हृदय को तृप्त बनाना चाहते हैं। बालक के हृदय की आभा को ऊँचा बनाना चाहते हैं, सुसज्जित बनाना चाहते हैं, तो वह मेरे प्यारे! अपने पुत्रों को, पुत्रियों को ऊँचा बना देते हैं, स्वर्ग में ला देते हैं।

तो भगवान राम की मानो देखो, याग की प्रतिभा का अभिप्राय क्या था? याग की प्रतिभा का अभिप्राय केवल यही था कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना और देखो, याग कर्म करते रहें विज्ञान से उसको जानते रहें वैज्ञानिक तथ्यों को मेरे प्यारे! प्रत्येक वस्तु को जब दृष्टिपात कराते रहेंगे, तो जीवन सुन्दर बनेगा, तो विचार क्या चल रहा था विचार का प्रारम्भ

यह था कि प्रत्येक मानव प्रत्येक मेरी पुत्री को मुनिवरों! देखो, आयुर्वेद को जानने वाली मेरी प्यारी माता होनी चाहिए। आयुर्वेद के मर्म को जानने वाली हो, उसके गर्भ में परणित होने वाली नाना प्रकार की औषधियां को जानने वाले बुद्धिमान मेरे प्यारे! देखो, उनको जानने वाले हों, नाना प्रकार की औषधियों को मानव का हृदय स्वच्छ बनता है। मानव में पवित्रता आती है, अग्नि के ऊपर जब शब्द विराजमान हो जाता है, वह द्यौ लोक को जाता है, अशुद्ध शब्द जब अन्तरिक्ष में प्रवेश करता है, उससे अतिवृष्टि, अनावृष्टि के मूल कारण बनते हैं और मुनिवरों! जो शुद्ध पवित्र शब्द होता है, वह द्यौ लोक को जाता प्राप्त होता है, वह स्वर्ग में ले जाने वाला है। मोक्ष में गामी करा देता है।

तो मेरे प्यारे! आज का विचार विनिमय क्या विचार विनिमय यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, इस संसार सागर से बेटा! पार होते चले जाएं, जब हम इस संसार सागर से पार होते चले जाएंगे वह पार कैसे होंगे जब हम याज्ञिक बनेंगे याग हमारा कर्तव्य है याग में परणित होना चाहिए। प्रत्येक मानव को यहाँ याज्ञिक बनना चाहिए। याग का अभिप्राय यह केवल अग्न्याधान करना याग नही है, वह तो याग है, परन्तु उस याग में पवित्रता आनी चाहिए, हृदय की पवित्रता ब्रह्मचर्य को सुसज्जित होना चाहिए, मेरे प्यारे! देखो, उसके पश्चात पवित्र हृदय ही द्यौ लोक को जाता हमे दृष्टिपात होता है। बेटा! आज का विचार क्या हम अपने प्यारे प्रभु का गुणगान गाते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, इस संसार सागर से पार होना चाहिए, हमें पार होना है, क्योंकि आयुर्वेद की विद्या मेरे प्यारे! रचनात्मक रूप से हृदयों में रही है। ब्रह्मवेत्ताओं के मस्तिष्कों में रही है, मेरी प्यारी माताओं के हृदयों में प्रवाह से गति करती रही है, आज मैं विशेष

चर्चा प्रगट न करता हुआ अपने देव की महिमा का गुणगान गाता हुआ अपने देवतम् मानो परमपिता परमात्मा के अनन्तमयी विज्ञान को जानते हुए मेरे प्यारे! प्रभु का ज्ञान इतना नितान्तर है, इतना विशाल है बेटा! आयुर्वेद की औषधियों को हम जानते हुए, परमात्मा के जगत में परमात्मा कैसा वैज्ञानिक है? बेटा! मानो यह रचा रहा है, पूर्ण में से पूर्ण को उत्पन्न कर रहा है, वह कैसा अनुपम है, बेटा! ।

आओ, मेरे प्यारे! वह प्रभु कितना महान है, उस महानता का वर्णन करते उसकी प्रतिभा का वर्णन करते हम संसार सागर से पार होते चले जाएं, यह है बेटा! आज का वाक आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते चले जाएं, कल मुझे समय मिलेगा बेटा! कल मैं विज्ञान की और ऊर्ध्वा उड़ान उड़ने का प्रयास करूंगा, आध्यात्मिकवाद की चर्चाएं और भौतिकवाद दोनो की विवेचना मैं कल कर सकूंगा, आज का विचार अब हमारा समाप्त होने जा रहा है, कल समय मिलेगा, कल शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा, आज का वाक समाप्त अब वेदों का पाठ होगा। इसके पश्चात यह वार्ता समाप्त हो जायेगी।

11 १० ०८ १९७५ पञ्च महायज्ञ

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया। उनका पूर्व की भान्ति उच्चारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान का प्रायः वर्णन किया जाता है क्योंकि वह जो परमपिता परमात्मा का जो अनुपम जगत है, यह सर्वत्र ज्ञान और विज्ञान से परिपूर्ण है, जब हम अपना विचार विनिमय करना प्रारम्भ करते

हैं, और यह विचारते हैं कि यह जो परमपिता परमात्मा की अनुपमता है, आज हम उसको अपने में धारण करना चाहते हैं, अपनी आभा में परणित करना चाहते हैं, तो मेरे प्यारे! उसकी आभा का दिग्दर्शन हमारे मानवीय शरीरों में दृष्टिपात आने लगता है। आज का हमारा वेद का ऋषि क्या कहा रहा है, वेद का ऋषि यह कहा रहा है, ब्रह्मणे असतम यज्ञाम ब्रहे कृता वृत्तं ब्रव्हे वेद का ऋषि यह कहता है, कि यह जो सर्वत्र ब्रह्माण्ड है, यह उस महान मेरे प्यारे! प्रभु का यज्ञमयी माना है। वह परमपिता परमात्मा याग कर रहा है, उसका यागमयी ब्रह्माण्ड, यागमयी जगत बेटा! सृष्टि के प्रारम्भ से, प्रचलित हो रहा है, नाना प्रकार के हूत, प्रदान किए जा रहे हैं, पूर्णमदा, पूर्णमयी पूर्ण में से मानो पूर्ण ही दृष्टिपात आ रहा है। मेरे प्यारे! उस प्रभु का कितना सुन्दर, यह ब्रह्माण्ड यागमयी माना है क्योंकि प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या और मेरे प्यारे! ऋषि मण्डल को विचार विनिमय करना चाहिए, जब माता के गर्भस्थल में विचार विनिमय करना प्रारम्भ करते हैं तो वहाँ भी मेरे प्यारे! प्रभु का यज्ञमयी संसार दृष्टिपात आने लगता है। मेरे प्यारे! कितना सुन्दर याग हो रहा है, उस याग की आभा में, प्रत्येक मानव परणित हो रहा है। मेरे प्यारे! मुझे नाना प्रकार के वाक स्मरण आने लगते हैं, हमारे यहाँ पुरातन काल में, याग की मीमांसा करते हुए, आदि ऋषियों ने, बेटा! इस मानवीय शरीर को भी बेटा! यागमयी माना है। सृष्टि के प्रारम्भ में बेटा! जब यह ब्रह्माण्ड रूपी यज्ञशाला का निर्माण होता है, तो उस समय परमपिता परमात्मा स्वयं ब्रह्मा होते हैं, ब्रह्मा की उपाधि को प्राप्त करते हैं, और यह आत्मा मेरे प्यारे! यज्ञमान बनता है, और यज्ञमान बन करके वह परमपिता परमात्मा सुन्दर याग का निर्माण करते हैं। मेरे प्यारे! बेटा! होता, उद्गाता नाना रूपों में हाने वाला, यह जगत दृष्टिपात आने लगता है।

मेरे प्यारे! यह आत्मा सृष्टि के प्रारम्भ में जब याग की रचना होती है, तो यह उस समय यह स्वयं यज्ञमान बनता है, आत्मा परमात्मा को ब्रह्मा की उपाधि प्रदान करता हुआ, ब्रह्मा रचयिता है और आत्मा मेरे प्यारे! हूत और प्रहूत को प्राप्त कर रहा है। मानो यह अपनी बलिष्ठता को प्राप्त कर रहा है।

तो इसीलिए मेरे प्यारे! यज्ञमान का महत्व यज्ञशाला में विशेष होता है क्या उस यज्ञशाला में विराजमान हो करके, जब आहुति देता है, तो अपने को ऊँचा बनाता है, अपने को मेरे प्यारे! कर्मकाण्डी बनाता है, मेरे प्यारे! वेदों का आह्वान करता हुआ वेद के मन्त्रों को मन्त्रों के पश्चात जब स्वाहा कहता है, स्वाहा के साथ में मेरे प्यारे! जब इसका चित्रण अन्तरिक्ष में विराजमान होने लगता है। तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या कि सृष्टि के प्रारम्भ में, उस मेरे प्यारे! प्रभु ने उस संसार रुपी याग का निर्माण किया है बेटा! जिस यज्ञशाला को विचार विनिमय करने वाले, नाना ब्रह्मवेत्ताओं ने इसको नाना रूपों में परणित किया। आज मैं बेटा! इस आभा में तो नहीं पंहुच पाऊँगा, परन्तु विचारना यह है, कि यह जो संसार है, यह कितना भव्य है। प्रातः काल में सूर्य उदय होता है, अपना प्रकाश देता रहता है। संसार के उदय होते ही बेटा! प्रकाश आना, बेटा! प्रारम्भ हो जाता है, अन्धकार समाप्त हो जाता है। इसी प्रकार मेरे प्यारे! यह संसार रूपी जब याग का चक्र चलता है, तो मुनिवरों! अन्धकार, अज्ञान समाप्त होता चला जाता है प्राणदायक मानो देखो, तरंगो का विर्सजन होने लगता है। मानो जब विसृजन होता है उसी से प्रत्येक मानव जब पान करता है, तो एक महान ज्योति जागरूक हो जाती है। उस ज्योति को जो पान करने वाला है, वही मेरे प्यारे! अमृतमयी कहलाता है। वह अमृतमयी में क्या वह मृत्यु से पार होता है। वही उस अज्ञान को समाप्त करता

रहता है, तो बेटा! नाना प्रकार के यागों में परणित होता रहता है। पांच प्रकार के याग मेरे प्यारे! आदि ऋषियों ने उस समय नियुक्त किए, मानो वेद की आभा से निकासे, और यह कहा क्या यह पञ्च महायाग है। जो मानव के कल्याण के लिए है। मानव की आत्मा को ऊर्ध्वा बनाने के लिए कहे गएं हैं।

मुनिवरों! यह पञ्च याग क्या हैं? क्योंकि पञ्च तत्त्व माने जाते हैं, पञ्च ही याग हैं। मेरे प्यारे! देखो, पञ्चम ब्रह्मे कृताः मुनिवरों! यह जो पञ्च महाभूत हैं उन एक एक का एक एक याग माना है। उन यागों में परणित होना ही मानव का कर्तव्य है बेटा! ।

मुझे स्मरण आता रहता है, एक समय बेटा! ऋषि मुनियों का समूह एकत्रित हुआ, और ऋषि मुनियों के समूह में यह वाक उत्पन्न हुआ, ब्रह्मचारी सुकेता ने यह कहा था, ब्रह्मचारी रोहिणीकेतु ने यह कहा, कि हम याग को करने जा रहे हैं इन पञ्च महायागों की मीमांसा क्या है? तो महर्षि पिप्लाद ने महर्षि पिप्लाद ने महर्षि सुकेता औा तत्त्व ऋषि महाराज ने कवन्धि वृत्तकेतु ने मेरे प्यारे! शाण्डिल्य ने नाना प्रकार के वाक प्रगट करते हुए यह कहा था कि पञ्च महायागों मे सबसे प्रथम ब्रह्मयाग माना है। बेटा! ब्रह्मयाग किसे कहते हैं? बेटा! जहां ब्रह्म की मीमांसा की जाती है। बेटा! ब्रह्म के ऊपर चिंतन किया जाता है। यह ब्रह्म क्या है? मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मयाग का प्रथम प्रकरण आता है। ब्रह्मयाग उसे कहा जाता है जहाँ मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्म का विचार होता है, एक मानव सन्ध्या काल में विराजमान होता है, सबसे प्रथम वह अपनी इन्द्रियों को स्पर्श करता हुआ, वह अपनी इन्द्रियों के विषयों को, मेरे प्यारे! जानता हुआ और परमात्मा से अपना तन्मय चाहता है, परमात्मा से तन्मय चाहता है। और यह कहता है हे प्रभु! मेरी इन्द्रियाँ स्वस्थ हो, मेरी इन्द्रियाँ पवित्र हो। प्रभु! जिससे मैं आपके द्वार पर आ

जाऊं। आपकी प्रतिभा को विचारने लगूं। तो मेरे प्यारे! देखो, सबसे प्रथम मानव का कर्तव्य है कि ब्रह्मयाग में परणित हो जा, ब्रह्म याग किसे कहा जाता है? मेरे प्यारे! ब्रह्म का चिन्तन करना, ब्रह्म की प्रतिभा को दृष्टिपात करना, मैंने बहुत पुरातन काल में बेटा! तुम्हें निर्णय कराया था बहुत पुरातन काल की वार्ता है, बेटा! जब मेरे पूज्यपाद गुरूदेव कजली वनों में विराजमान होते थे, तो मानो जब वह ब्रह्मयाग करते थे, प्रातः काल में तो ब्रह्म की प्रतिभा के ऊपर चिन्तन करना प्रारम्भ करते थे, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों को निहारने लगते थें, और यह विचारने लगते थे, कि प्रभु! तू कितना विचित्र है, तेरी कैसी विचित्रता है, प्रभु! यह कैसा अनुपम जगत है, कैसे लोक लोकान्तर हैं? प्रभु! तेरे राष्ट्र में एक दूसरा मण्डल, मण्डल से मिलान नहीं करता। कैसा चक्र चल रहा है? ऋत और सत में बेटा! सर्वत्र जगत गति कर रहा है, अपने अपने आङ्गन में गति कर रहा है, नाना लोक लोकानतर अपनी अपनी परिधि पर परणित हो रहे हैं, क्रियाशील दृष्टिपात आते हैं, एक दूसरा मण्डल, एक दूसरें में समाहित होता दृष्टिपात आता है।

ब्रह्म की माला

मेरे प्यारे! जब हम परमपिता परमात्मा के आत्म याग अथवा ब्रह्मयाग के ऊपर विचार विनिमय प्रारम्भ करते हैं, तो एक एक लोक एक दूसरे लोक में मेरे प्यारे! प्रतिष्ठित हो रहा है, वह शिक्षाप्रद है, ऋत और सत में, मेरे प्यारे! गुथा हुआ है, जैसे मेरे प्यारे! माला है, और माला में मनको में धागा है एक ही धागे में मेरे प्यारे! मनके पिरोएं जाते हैं, अब जब प्रत्येक मनके धागे में पिरोए जाते हैं। तो वह माला बन जाती है इसी प्रकार मेरे प्यारे! यह लोक लोकान्तरों की माला है यह उस ब्रह्म की माला है जिस माला को धारण करने वाला

बेटा! ब्रह्मवेत्ता बेटा! ब्रह्म को प्राप्त हो जाता है।

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं विशेष चर्चा नहीं प्रगट करने जा रहा हूँ विचार क्या है? कि हम ब्रह्म के ऊपर चिन्तन करना प्रारम्भ करें, ब्रह्म क्या है? ब्रह्म जिसने सृष्टि के प्रारम्भ में, इस माला को गुथा है, माला को सृजन किया है, उस माला को धारण करने वाला, यह आत्मा है, यह इस प्रकृति के नाना तत्त्वों का जानता है, भौतिक और आध्यात्मिकवादी दोनों में गति करना चाहता है।

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है एक समय बेटा! महात्मा ध्रुव देवर्षि नारद प्रातः काल में प्रातः काल की पवित्र बेला में अन्तरिक्ष में बेटा! तारामण्डलों का प्रकाश था महात्मा ध्रुव यह कह रहे थे कि महाराज! मैं इस ध्रुव मण्डल की यात्रा करना चाहता हूँ, मैं प्रभु के ब्रह्माण्ड को जानता हुआ ध्रुव यात्रा को सफल होना चाहता हूँ। मुझे निर्णय कराईए क्या मैं ध्रुव यानों का निर्माण करता हुआ ध्रुव मण्डल की आभा को मैं जानने वाला बनूं, मेरे प्यारे! जब उन्होंने यह कहा तो नारद जी बोले ब्रह्मे ऋतः प्रव्हा हे ब्रह्मचारी! आज तुम इस ब्रह्माण्ड को जानना चाहते हो, इस ब्रह्माण्ड में मानो देखो, ध्रुव मण्डल को जानना चाहते हो, जिस ध्रुव मण्डल के लिए यान का निर्माण करना चाहते हो। मेरा तो इसमें कोई दोष अप्रहा नहीं है। मैंने कार्य और तुम्हारी बुद्धि के विकास को शान्त कर सकता हूँ।

आओ, विराजों मेरे प्यारे! वह निर्णय कराने लगे नाना प्रकार के धातु पिपादों का निर्णय कराने लगे वेद के मन्त्र का उच्चारण करते वेद की आभा का उच्चारण करते मेरे प्यारे! महात्मा ध्रुव ने ध्रुव यान का निर्माण किया, तो ऋषि कहता है, ध्रुव कहता है, क्या जब हम ध्रुव यान में गमन करते हैं, तो नाना लोकों में लोकों की परिणीधियों से दूरी हो जाते हैं। मानो एक पृथ्वी मण्डल का प्राणी मेरे प्यारे! ध्रुव की यात्रा कर रहा है,

ध्रुव मण्डल में जा रहा है, ध्रुव मण्डल कितना विशाल है, बेटा! मैंने तुम्हे बहुत पुरातन काल में निर्णय कराया था, आज भी मैं निर्णय कराने जा रहा हूँ, जैसा यह पृथ्वी मण्डल है, ऐसे ऐसे तीस लाख पृथ्वियाँ सूर्य मण्डल में समाहित हो जाती हैं, मेरे प्यारे! जैसा एक यह सूर्य मण्डल है, ऐसे ऐसे एक सहस्र सूर्य मेरे प्यारे! बृहस्पति मण्डल में समाहित हो जाते हैं, और जैसा बृहस्पति मण्डल है। ऐसे ऐसे एक सहस्र बृहस्पति आरुणि में समाहित हो जाते हैं, और जैसा आरुणि मण्डल है। ऐसे ऐसे एक सहस्र मेरे प्यारे! आरुणि ध्रुव मण्डल में समाहित हो जाते हैं। जितना विशाल ध्रुव मण्डल है, मेरे प्यारे! जो अपनी परिणीधि में क्रियाशील है। मुनिवरों! वेद का ऋषि यह कहता है, क्या देवर्षि नारद मुनि और मुनिवरों! देखो, महात्मा ध्रुव जब ब्रह्मयाग कर रहे थे, ब्रह्मयाग की चर्चाएं हो रही थी, तो मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्म की पिपासा में परणित होते हुए, वह ध्रुव मण्डल की यात्रा में तत्पर हो गएं। परिणाम क्या मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्म की आभा में विचारना हमारा कर्तव्य है, यहाँ बेटा! देखो, ऐसा ऋषि कहता है, ब्रह्म विचारक कहता है, ब्रह्म की आभा का वर्णन करता हुआ कहता है, ब्रह्मवेत्ता क्या जब हम ब्रह्म की आभा पर विचार विनिमय करते हैं मैं प्रारम्भ में मुनिवरों! देखो, एक एक अरब तो ऐसा प्रतीत होता है, कि एक एक आकाश गंगा में, एक एक अरब ध्रुव मण्डल मानी गई है। तो बेटा! विचारना चाहिए, क्या प्रभु का राष्ट्र, प्रभु का जगत, प्रभु की यह यज्ञशाला कितनी अनन्तमय मानी गई हैं। मेरे प्यारे! देखो, अनन्त तो ब्रह्माण्डमयी प्रथा मानो जो यह जगत दृष्टिपात आ रहा है, यह कैसा अनुपम है। मुनिवरों! देवर्षि व्रेतकेतु कहता है, यहाँ याज्ञवल्क्य मुनि महाराज शौनक से कहते हैं, हे शौनक! हे ब्रह्मचारी! मेरी विज्ञानशाला में मेरे विद्यालय में जो विज्ञान अब्रहे देखो, हमारे यहाँ मेरे

प्यारे! दो सौ पच्चासी प्रकार की आकाश गंगाए दृष्टिपात आ रही हैं। परिणाम यह ऋषि कहता है कि नेति नेति अन्त में क्या कोई मैंने सीमा बद्ध नहीं कर दी।

विचार क्या मेरे प्यारे! इस परमात्मा के ब्रह्माण्ड में परमात्मा की प्रतिभाएं मेरे प्यारे! नाना प्रकार की आकाश गंगाए गति करती हैं, कितना विचित्र जगत है, वह परमात्मा कितना अनन्त है, पूर्ण में से पूर्ण को उत्पन्न कर रहा है। वह परमात्मा पूर्ण है, और पूर्ण ही प्रकृति को जन्म दे रहा है। जैसे मेरे प्यारे! माता पिता पूर्ण मदं पूर्ण मा पूर्ण मुच्यते पूर्ण मे पूर्ण की उत्पति हो रही है। मेरे प्यारे! माता अपने गर्भ से पुत्र की उत्पति कर रही है, मुनिवरों! माता के गर्भस्थल में बालक का निर्माण हो रहा है, निर्माणवेत्ता निर्माण कर रहा है, परन्तु मेरी भोली माँ को ज्ञान नहीं होता, हे माँ! तेरे गर्भस्थल में हम सबका निर्माण हो रहा है, मेरे प्यारे! उस मानव शरीर में बेटा! बहतर करोड़, बहतर लाख, दस हजार दौ सौ दो नाड़ियों का निर्माण हो रहा है कितना सुन्दर वह रचयिता है, कितना महान मानो देखो, वह याज्ञिक माना गया है। परमात्मा का विचार विमिनय बेटा! जब मानव करता रहता है, धर्म को विचारता रहता है, तो मानव बेटा! व्यापक हो जाता है, मानव का हृदय संकुचित्त नहीं रहता, वह हृदय में उज्ज्वलता आ जाती है, मेरी पुत्री का निर्माण किया पुत्र का निर्माण किया परन्तु नाना नस नाड़ियों से शरीर का निर्माण किया, मेरे प्यारे! कितना सुन्दर लेपन किया, जल की सौन्दर्यता आ गई है। लेपन में वह लेपन करने वाला कौन है? बेटा! पुत्र और पुत्री को रचने वाला कौन है? मानो वह ब्रह्मचारी को कौन रच रहा है? मेरे प्यारे! वह रचयिता है वे परमपिता परमात्मा है। जब इस प्रकार का विचार विनिमय प्रत्येक मानव प्रत्येक देवकन्या प्रातःकालीन करता है। तो बेटा! मानव का हृदय व्यापक बन जाता है, मानो व्यापकता का नाम

ही मेरे प्यारे! याग माना गया है, यज्ञ किसे कहते हैं? इसको ब्रह्मयाग कहते हैं, ब्रह्मवेत्तओं ने ब्रह्मयाग की चुनौती प्रदान की है, क्या मानव का व्यापकता में प्राण और मन को जानते हुए ऋत और सत्य को जानते हुए उस ब्रह्म की आभा में निहित होना व्यापक विचार बनाना इन्द्रियों को संयम में लाना बेटा! वही मानव की व्यापकता है। उस व्यापकता का नाम बेटा! धर्म है, मानो ब्रह्म पिपासा है, ब्रह्म जिज्ञासा है, और मुनिवरों! देखो, ब्रह्मयाग को पूर्ण करना है मेरे प्यारे! उसे हम ब्रह्मयाग कहते हैं।

देव याग

द्वितीय याग मेरे प्यारे! हमारे यहाँ देव याग कहलाया गया है। देवता मानो देव याग किसे कहते हैं? जहाँ मेरे प्यारे! मैंने पुरातन काल में तुम्हें निर्णय कराया, यज्ञमान सपत्नी विराजमान हो करके, नाना होता और ब्रह्मा और अध्वर्यु, उदगाता विराजमान हो करके, जब प्रातः काल में याग करते हैं, प्रातः काल में हूत करते हैं, वह जो हूत है, मेरे प्यारे! जब आहुति देते हैं, तो उस आहुति का जो स्वरूप है, वह अग्नि के ऊपर विश्राम कर जाता है। बेटा! अग्नि देवताओं का दूत कहलाया गया है। वह अग्नि देवताओं का दूत बन करके, बेटा! अग्न्याधान, यज्ञमान जब करता है तो मुनिवरों! देखो, वह अपने में, जिसे हम कहते हैं पुष्पविमान कहते है। मानो जिसे हम हूतयान कहते हैं वह यज्ञमान सपत्नी विराजमान हो करके बेटा! कहीं मेरे प्यारे! द्यौ लोक को प्राप्त हो जाता है। द्यौ लोक में मुनिवरों! देखो, यज्ञमान के रथ के सहित मानो देखो, वहाँ चित्र भ्रमण करते रहते हैं, वहाँ शब्दों के साथ में, वह जो शब्द है वह जो चित्रण बन गया है। मानो वह उस मण्डल में द्यौ लोक में, बेटा! गति कर रहा है।

आओ, मेरे प्यारे! वही तो मानव का एक सुगुण

कहलाता है, वही तो मानव की एक आभा कहलाती है, जिसको प्रत्येक मानव को विचारना है, उसे मेरे प्यारे! हमारे यहाँ हमारे यहाँ उसे हूत कहा जाता है। उसको देव याग कहा जाता है, देवताओं की पूजा का अभिप्राय क्या एक स्थान में बेटा! यज्ञशाला मे यज्ञमान विराजमान है। एक स्थली में वैज्ञानिक विराजमान है। एक स्थली में होताजन विराजमान है। मेरे प्यारे! देखो, जब वैज्ञानिक जन यह विचारते हैं मुनिवरों! देखो, हम देवपूजा का अभिप्राय क्या है? देवपूजा का अभिप्राय है, देवताओं का मेरे प्यारे! देखो, हम देवताओं का सदुपयोग करते चले जाएं जैसे अग्नि जैसे मानो पृथ्वी है इस पृथ्वी को कामधेनु कहते हैं, मानो पृथ्वी के नाना प्रकार के स्वरूप माने जाते हैं, वैज्ञानिक जन बेटा! इस पृथ्वी के गर्भ से नाना प्रकार के खनिज पदार्थों से जानता है, मेरे प्यारे! वैश्यजन इस पृथ्वी के गर्भ से बेटा! नाना प्रकार के नाना प्रकार के अन्नाद को उत्पन्न करता है, मेरे प्यारे! अन्नाद और वैज्ञानिक जब खनिज पदार्थों में जाते हैं, विचार आता है, मेरे प्यारे! ऋषि कहता है, वेद का ऋषि कहता है, याग करता हुआ क्या पृथ्वी के अग्रत भाग में मेरे प्यारे! अन्न की उत्पति होती है। मुनिवरों! देखो, लगभग आधा योजन के लगभग मुनिवरों! देखो, पृथ्वी के तल पर उनका निरीक्षण हो रहा है, लेपन हो रहा है, उसके निचले भाग में नाना प्रकार के खनिज हैं, मेरे प्यारे! देखो, नाना प्रकार के खनिज मानो देखो, बेटा! लगभग दस दस योजन के लगभग मेरे प्यारे! नाना प्रकार के खनिज विराजमान होतें हैं, और वह जो नाना प्रकार के खनिज हैं। उन खनिजों को वैज्ञानिक जानता है, नाना प्रकार के खनिजों के पश्चात जब और निचले गर्भ में मानव जाता है। दस ग्यारह योजन के निचले भाग में पृथ्वी एक पात रूप में विराजमान है, पात रूपों में विराजमान हो रही है, मेरे प्यारे! और निचले भाग में जाते हैं, और

भी मानो अग्नि से ओत प्रोत हुआ एक पतला पात दृष्टिपात आता है। तो विचारना क्या है? मेरे प्यारे! इस माता वसुन्धरा के गर्भ में नाना प्रकार का पात और खनिज ओत प्रोत हो रहा है, तो मुनिवरों! विचार क्या? यह मेरे प्यारे! देखो, यहाँ यज्ञमान जब याग करता है, जब हूत करता है, देवताओं की पूजा करता है, पूजा का अभिप्राय क्या, क्या हम देवी की पूजा करना चाहते हैं। हम पृथ्वी की पूजा करना चाहते हैं, तो नाना प्रकार के हम खनिजों को जानने वाले बनें। नाना खाद्यों को जानने वाले बनें, परन्तु देखो, इस पृथ्वी का सदुपयोग करें, इसका सदुपयोग करने का नाम बेटा! देवी की पूजा कहलाई जाती है। जो पृथ्वी में देवता है, उसकी पूजा करना वही उसकी पूजा कहलाई जाती है।

मेरे प्यारे! देखो, तृतीय हमारे यहाँ आपो आता है अथवा जल आता है मुनिवरों! ऋषि कहते हैं जब यज्ञमान याग करता है तो मानो देखो, यज्ञशाला के अन्तर्गत एक मेखला होती है उस मेखला में जल का सिंचन करता है जल को, उसमें ओत प्रोत कर देता है, जल को उसमे भरण कर देता है। तो मेरे प्यारे! देखो, परमपिता परमात्मा ने पृथ्वी के आङ्गन में बेटा! समुद्र रूपी मेखला प्रदान की, यह पवित्र मेखला है, जो कि विष उगला जाता है, पृथ्वी नाना प्रकार के विष को उगलती रहती है, वह जो विष है, मेरे प्यारे! उसको समुद्र अपने में शोषण करता रहता है। अपने में निगलता रहता है, जब वह निगलता रहता है, तो मेरे प्यारे! मङ्गल प्रव्हा व्रतप ब्रहे वह निगलता हुआ मेरे प्यारे! उसको शोधन करता है। मानो देखो, उसको आपो कहते हैं, वह जल मेरे प्यारे! केवल समुद्रों में नही है, जब सोम की वृष्टि होती है, जल ही जल के कण बेटा! अन्तरिक्ष में छायामान हो जाते हैं। मेरे प्यारे! जब ग्रीष्म ऋतु आती है, ग्रीष्म ऋतु में मुनिवरों! देखो, वह ग्रीष्म ऋतु में जो वायु है, वह अग्नि के परमाणुओं

को ले करके जब गति करती रहती है, तो मुनिवरों! देखो, जल के परमाणुओं को अन्तरिक्ष में छा देते हैं, अन्तरिक्ष में वह छायामान हो जाते हैं। तो मुनिवरों! देखो, वही जब वर्षा काल आता है, आदित्य की किरणों में मानो तीखा पन आया उसी समय बेटा! देखो, धीमी धीमी वृष्टि प्रारम्भ हो जाती है। मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ एक मानो वृष्टि याग का प्रकरण भी आता रहा है, वृष्टि याग में मैंने बहुत पुरातन काल में वृष्टि याग के सम्बन्ध में अपनी विवेचनाएं प्रगट की हैं आज मैं वृष्टि याग के सम्बन्ध में विशेष चर्चा नहीं दूंगा वृष्टि याग के सम्बन्ध में इतना उच्चारण किए देता हूँ, क्या वृष्टि याग में समिधाएं भिन्न होती हैं, साकल्य भिन्न होता है, मन्त्रार्थ में मेरे प्यारे! भावनाएं होती हैं, उन भावनाओं में शुद्धता में पवितत्रा होती है। जिसमें बेटा! वृष्टि याग का व्रत उत्पन्न होता है, विचार विनिमय क्या मेरे प्यारे! आज मैं वृष्टि याग के सम्बन्ध में अपना विचार नहीं देने आया हूँ। विचार विनिमय क्या मेरे प्यारे! देव पूजा के सम्बन्ध में देव पूजा क्या है? देवपूजा उसे कहते हैं, मेरे प्यारे! जहाँ देवताओं का सदुपयोग किया जाता है, अग्नि का सदुपयोग किया जाता है, वायु को विज्ञान के द्वारा अपने में धारण किया जाता है, विज्ञान के द्वारा मेरे प्यारे! उस अग्नि को नाना रूपों को जान लेना चाहिए। अन्तरिक्ष में जो शब्द गति कर रहा हैं, उस शब्द को मेरे प्यारे! यन्त्रों के द्वारा धातुओं के द्वारा यन्त्रों का निर्माण करना चाहिए। वह जो अन्तरिक्ष में नाना प्रकार के शब्द गति कर रहें हैं, उन शब्दों को यन्त्र में लाना चाहिए और मुनिवरों! देखो, वह विज्ञान है, विज्ञान के द्वारा वही देखो, अग्नि का, वायु का, अन्तरिक्ष का, वहीं सदुपयोग माना गया है। मानो देखो, उससे हम नाना प्रकार के कार्यों को जानने वाले बनें। मेरे प्यारे! देखो, अग्नि से विज्ञान के द्वारा भी ऐसे यन्त्रों का निर्माण किया जाता है, जिन यन्त्रों से हम वृष्टि करा सकते हैं। बेटा!

वृष्टि को ला सकते हैं, और वृष्टि को समाप्त भी कर सकते हैं। यदि मेरे प्यारे! देखो, अग्नि में अग्नि प्रधान यन्त्रों को हम उनका आविष्कार करके उनका प्रहार करते हैं। तो वृष्टि दूरी चली जाएगी, मानो जल अग्नि वायु तत्त्व की प्रधानता में उसमें जल प्रधान विशेष होता है, उन तत्त्वों का हम निर्माण उन यन्त्रों का हम निर्माण करते हैं, वृष्टि जहाँ से देखो, मेरे प्यारे! मेघ मण्डलों को उत्पन्न करके अन्तरिक्ष में मेरे प्यारे! मानो वृष्टि प्रारम्भ मानो वृष्टि हम अपने में धारण करा लेते हैं। कृषि सुन्दर बन जाती है, मेरे प्यारे! देखो, मैं बेटा! उस विज्ञान में जाना नहीं चाहता हूँ, वाक उच्चारण करने का अभिप्राय क्या? मेरे प्यारे! यह देवताओं की मानो उनका सदुपयोग है, अपने में सदुपयोग करना है, सदुपयोग में मानो उस देवताओं की पूजा करनी है, इसको देवपूजा कहते है। बेटा! देखो, अग्न्याधान, देवपूजा तो कहलाती है, परन्तु यज्ञ के ऊपर अनुसन्धान करना विचार विनिमय करना नाना प्रकार की उनकी अनुशन्धानशालाएं हैं। मेरे प्यारे! देखो, इसे हम नाना साकल्य हों, तो हम याग करेंगे, देवपूजा करेंगे, तो देवता हमें लाभप्रद होंगे। लाभ की वृष्टि करा देंगे, विचार विनिमय क्या बेटा! इसको हम देव पूजा कहते है। इस याग को देवपूजा कहते हैं। जहाँ यज्ञमान मन्त्रार्थ के द्वारा याग करता है, देवताओं को आह्वान करता है, देवताओं की आभा में गति करने वाला मानो अपनी आभा में युक्त रहता है।

अतिथि याग

विचार विनिमय क्या मेरे प्यारे! आज मैं विशेष चर्चा प्रगट नहीं करूंगा, वाक उच्चारण क्या कर रहा था कि हमें देवपूजा करनी है। उसके पश्चात मुनिवरों! देखो, अतिथि पूजा है अतिथि की सेवा है बेटा! अतिथि कौन होते हैं? विचारना यह है कि अतिथि की व्रता व्रते

वेद का ऋषि कहता है अतिथि की सेवा करो। अतिथि वह होता है, जो मेरे प्यारे! तिथि प्रहा मानो जो दुर्गुणो से रहित हो, वेद का पण्डिता हो वेद का पण्डित देखो, वेद का ब्रह्मवेत्ता, ब्रह्मविचारक, देवपूजा करने वाला, जो ऐसा अतिथि होता है। उसको जब गृह आश्रम वासी अन्न का पान कराते हैं, मेरे प्यारे! देखो, अपने पुण्यों को अपनी तपस्या को मेरे प्यारे! उसके गृह में त्याग देता है। मेरे प्यारे! अतिथि कौन है? तुम्हें यह प्रतीत है जो अन्न जल से पीड़ित रहता है, वह मेरे प्यारे! देखो, अपने पापों को त्याग देता है, और गृहस्थी के पुण्यों को वह ले जाता है। तो इसीलिए वेद का ऋषि कहता है, कोई भी अतिथि आ जाए उसको सबसे प्रथम भोजन इत्यादियों से तृप्त करना है, और उससे कुछ उपदेश को पान करना है। अपनी मानव कल्याण के लिए बेटा! तुम्हें प्रतीत है, विश्वश्रवा ने जब सर्वत्र दान कर दिया था उनका पुत्र नाचिकेता मेरे प्यारे! जब यमाचार्य के गृह में जब प्रवेश किया, गृह में यमाचार्य की पत्नी कहती है प्रभु! हे ब्रह्मवेत्ता! हे ब्रह्मबालक! तुम मेरे आसन पर अन्न जल से पीड़ित न हो, मेरे गृह का सुकृत हनन हो जाएगा। ब्रह्मचारी कहता है नाचिकेता माता स्वस्तो वृधा हे माता! मैं जब तक आचार्य के दर्शन नहीं हो पायेंगे, उसके पश्चात मैं अन्न जल का पान नहीं करूंगा। तेरे गृह का मेरे प्यारे! बहुत कुछ कहा परन्तु तीन रात्रि तीन दिवस तक वह ब्रह्म की जिज्ञासा वाला आत्म जिज्ञासा वाला ब्रह्मचारी बेटा! स्थित रहा। परन्तु तीन दिवस के पश्चात जब यमाचार्य आए, तो पत्नी व्याकुल हो गई, पत्नी व्याकुल थी पत्नी से ऋषि बोले कि हे पत्नी! तुम व्याकुल क्यों हो? उन्होंने कहा हमारे गृह का सुकृत नष्ट हो रहा है, क्यों हो रहा है? हे प्रभु! बालक ब्रह्मवेत्ता देखो, उद्दालक गोत्र में उत्पन्न होने वाला अङ्गिरस ऋषि और मानो देखो, शासनवादी मानो देखो, हमारे आसन पर विद्यमान है।

अन्न जल से पीड़ित है, प्रभु! आप उनकी तृप्ति कीजिए अन्यथा हमारा जीवन नारकिक बन जाएगा। यह पत्नी कहती है, मेरे प्यारे! वह ऋषि उनके द्वार पर पंहुचे, ऋषि ने यह कहा हे बालक! हे ब्रह्मचारी! हे ब्रह्मवेत्ता! ब्रह्म की जिज्ञासा वाले! मैं तुम्हे तीन वर देता हूँ, तीन रात्रि और तीन दिवस के लिए जो इच्छा हो प्रगट करो। मेरे प्यारे! वाक क्या वह अतिथि कहलाते हैं, वह अतिथि कौन हैं? जो मेरे प्यारे! ब्रह्मवेत्ता हैं, महापुरूष हैं, सन्यासी हैं, जो सन्यास को धारण करते हुए मेरे प्यारे! वानप्रस्थ की आभा में गति करते सन्यास को प्राप्त होते हैं। मुनिवरों! देखो, उन्हें अन्न इत्यादियों का पान कराना, वह अतिथि याग कहलाया गया है। वह याग है बेटा! याग का अभिप्राय यह कि मुनिवरों! देखो, पुण्य को एकत्रित करना और पापों से अवऋण होने का नाम मेरे प्यारे! याग माना है। याग की मीमांसा करते हुए वेद का ऋषि कहता है विचारों का याग होना चाहिए। अतिथि के साथ में जब हम सेवा करते हैं, तो मुनिवरों! देखो, उसके साथ में मानव के विचार होते हैं, अतिथि का विचार होता है, पति वत्नी का विचार होता है, और उन विचारों से मेरे प्यारे! गृह र्स्वग बनते हैं। वह गर्हपथ्य नाम की अग्नि की पूजा है। और मेरे प्यारे! गृहपथ्य नाम की अग्नि की पूजा कहते हैं, जिससे गृह स्वर्ग बनते हैं, गृह में महानता आती है, पवित्रता आती है, तो बेटा! वह अतिथि याग कहलाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, अतिथि याग किसे कहते हैं?

बलि वैश्ध याग

विचारना यह है मेरे प्यारे! देखो, चतुर्थ याग का नाम हमारे यहाँ बलिवैश्व याग कहा गया है, याग माना है जहाँ मेरे प्यारे! देखो, यज्ञमान जहाँ देव याग करता है, अतिथि याग करता है अरे, वहाँ जो विषधर प्राणी हैं, जो मानो देखो, तुम्हारी रक्षार्थ प्राणी हैं, जो

मुनिवरों! देखो, वायुमण्डल में से देखो, शुद्धता को त्यागते हैं, अशुद्ध परमाणुओं को अपने में ग्रहण करते हैं। अपने में धारण करते हैं। मेरे प्यारे! देखो, उन प्राणियों को भी अन्नाद इत्यादि का पान कराना, जिसको की याग माना है। क्योंकि याग का अभिप्राय क्या? मुनिवरों! देखो, जैसे सर्प योनि हैं, वह नाना प्रकार के विषों को वायु में से अपने में शोषण करता है, और मुनिवरों! देखो, वह प्राण वायु को त्यागता है। जिससे प्राण की वृद्धि होती हैं, मुनिवरों! देखो, परमपिता परमात्मा ने यह जगत में जब रचा तो मेरे प्यारे! देखो, यह जगत ताण्डवत्ता में यह जगत साम्यता में परणित किया है, जिससे बेटा! देखो, प्रत्येक मानव को, मेरे प्यारे! उन यागों के अन्तर्गत मुनिवरों! देखो, राष्ट्र की भी आवश्यकता नहीं रहती, जब प्रत्येक मानव अपने अपने कर्तव्य का पालन करता है, पञ्च याग करता है, मेरे प्यारे! देखो, वहाँ जब पञ्च यागों का प्रचलन होता है। तो वहाँ बेटा! देखो, एक राजा की आवश्यकता संसार में नहीं रहती है। समाज राष्ट्र के, अपने मनों का राष्ट्रमय होता है, अपने मानवीय जीवन का, अपने गृह को राष्ट्र का प्रत्येक मानव मानो प्रविष्ट होता है, और राष्ट्रों की स्थापना करता है विचार विनिमय क्या? मेरे प्यारे! बलिवैश्व याग करना चाहिए। जो मुनिवरों! देखो, मानव को लाभप्रद हो, नाना प्राणी, परमात्मा की सृष्टि में हैं।

भूत याग

मेरे प्यारे! उसके पश्चात भूत याग माना है मुनिवरों! देखो, भूत याग मानो देखो, भूत याग उसे कहते हैं जिस प्राणी ब्रह्मे कृतो पितर प्रव्हे सुता मेरे प्यारे! देखो, पितरों की सेवा करना, पितर क्या हैं? मुनिवरों! देखो, पितर उसे कहते हैं मानो देखो, जो माता पिता है आचार्यजन हैं, माता पिता की सेवा के

लिए क्योंकि वह पितर कहलाते हैं। देखो, पितरों का, तर्पण करना है, वह देखो, तर्पण करने का अभिप्राय क्या तर्पण किसे कहते हैं?

मार्जन व तर्पण का स्वरूप

मेरे प्यारे! मार्जन और तर्पण दो शब्द हैं। मार्जन कहते हैं, मेरे प्यारे! इन्द्रियों को संयम में लाना, मेरे प्यारे! देखो, मार्जन और तर्पण उसे कहते हैं? इन्द्रियों को संयम में करके बेटा! तर्पण करना है, तर्पण किसे कहते हैं? बेटा! देखो, अचार्यो को मेरे प्यारे! देखो, एक मानव साम देता है। एक मानव आचार्यों की सेवा करना चाहता है। मेरे प्यारे! वह तर्पण करता है, और तर्पण कैसे मेरे प्यारे! वह मार्जन करता है, उसके पश्चात वह तर्पण करता है। मार्जन का अभिप्राय यह कि इन्द्रियों को संयम में लाना, तर्पण का अभिप्राय यह त्यागना, बेटा! वह द्रव्य इत्यादि को त्यागता है, भोजन इत्यादि को त्यागता है, क्यों त्यागता है बेटा! मार्जन के लिए, क्योंकि प्रथम वह देखो, प्रत्येक इन्द्रियों को संयम में करता हुआ मान अपमान से रहित होता हुआ मेरे प्यारे! जब वह विद्यालय में आचार्य को दान इत्यादि का प्रोक्षण करता है अथवा त्याग करता है, तो निरभिमान हो करके वह कहता हैं, मैं तर्पण कर रहा हूँ, मैं मानो तर्पण इसीलिए करता हूँ, मैं पितर याग करता हूँ। उसी से पितर याग करते हैं मानो देखो, आचार्य भी पितर कहलाते हैं, और मुनिवरों! देखो, माता पिता भी पितर कहलाते हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, वह मान अपमान से रहित हो करके पितर याग करता है, वह पितर याग करता है। वह मेरे प्यारे! देखो, प्रहूत याग करता है, तो उनको देता है, वह मेरे प्यारे! देखो, ऐसा मुनिवरों! देखो, प्रहूतों को संसार का राष्ट्र भी दे दिया जाए। वह भी सूक्ष्म है। क्योंकि मुनिवरों! देखो, जो बुद्धिमान आचार्य

है, वह उस याग को, और द्रव्य को ले करके, पृथ्वी के राष्ट्र को ले करके भी परोपकार ही करता रहता है। वह संसार को सुखद पंहुचाता रहेगा।

तो परिणाम क्या मेरे प्यारे! यह पञ्च महायागों का वर्णन आता रहा है, मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था, अरे, जो मानव इस प्रकार के पञ्च याग करता है, उस समाज में उस काल में मेरे प्यारे! न तो राजा की आवश्यकता है, न राष्ट्र की आवश्यकता है, जब प्रत्येक मानव, अपने अपने कर्तव्य का पालन करता है, पञ्च महायाग करता है। इस पञ्च महायाग में बेटा! विश्व का ज्ञान विश्व का विज्ञान मानो विश्व का कर्तव्यवाद बेटा! इसमें आ जाता है, तो राष्ट्र की आवश्यकता भी क्या होती है? साम्यवाद इसी को कहते हैं, जहाँ प्रत्येक मानव अपनी साम्य दृष्टि से अपने जीवन को व्यतीत कर रहा है, मेरे प्यारे! अपने मानवीय जीवन को अपने ऊर्ध्वा गति में ले जा रहा है। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, बेटा! जब पुरातन काल में इस प्रकार की नियमावली, इस प्रकार का समाज की पद्धतियों का निर्माण होता रहा, महाराज अश्वपति के यहाँ बेटा! इसी प्रकार का निर्माण होता रहा। मेरे प्यारे! आज मैं विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया, जो यज्ञमान यज्ञं ब्रह्मे यज्ञं ब्रह्मा मानो देखो, यज्ञमान का हृदय पवित्र हो, यज्ञमान का जीवन मेरे प्यारे! महानता में परणित होना चाहिए। मैंने बहुत पुरातन काल में मेरे प्यारे! महानन्द जी! ने मुझे आज यह प्रेरणा दी है कि याग के सम्बन्ध में अपना विचार प्रगट किया जाए, आज का विचार क्या मेरे प्यारे! प्रत्येक मानव का याज्ञिक बनना चाहिए। प्रत्येक मानव को याग में परणित होना चाहिए। मुनिवरों! यहाँ प्रत्येक पदार्थ, याज्ञिक बना हुआ है। परमपिता परमात्मा ने यह संसार रूपी याग का निर्माण किया है।

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं विशेष चर्चा प्रगट

करने नहीं आया हूँ विचार विनिमय क्या यज्ञमान का आयु दीर्घता में प्राप्त होना चाहिए। तो धर्म और मर्यादा को स्थापित करने वाले हों, ऐसा मुझे मेरे प्यारे! महानन्द जी! प्रेरणा दे रहे हैं। इसके साथ आज का यह विचार अब हमारा समाप्त अब वेदों का पाठ होगा। इसके पश्चात यह वार्ता समाप्त हो जाएगी, आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की प्रतिभा को जानते रहें, महानता में परणित होते रहें, अपने मानवीय जीवन को ऊर्ध्वा गति में ले जाएं यह है बेटा! आज का वाक्। अब वेदों का पाठ होगा अच्छा भगवन्! ओ३म् ब्रह्मा भू गायन्ता रथं ब्रह्म भू रेवाः ओ३म् तनु मां इदन्नः गा ता मणाः पृथ्वी मा चरिता रथं यम माः ओ३म् ब्रह्मणा देवं मया सर्वं भद्रा आज्ञा आनन्द भवति। आर्य समाज पंजाबी बाग।

12 ०६ ०३ १९७६ पुरातन काल का भौतिक विज्ञान

जीते रहो, देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे ये भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान का प्रायः वर्णन किया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा सदैव ज्ञान और विज्ञान में रमण करने वाला है जब हम उस महान देव की आभा का गुण गाना प्रारम्भ करते हैं। तो प्रायः हमें ऐसा दृष्टिपात आता रहता है जैसा हमारा हृदय उस महान विज्ञानता से भरण कर रहा है। मैंने बहुत पुरातन काल में विचार विमनय करते हुए कहा था कि संसार में प्रत्येक प्राणी

को याज्ञिक बनना चाहिए क्योंकि याग करना हमारा कर्तव्य है। वैदिक साहित्य में नाना प्रकार के यागों का वर्णन आता रहता है उन मानो देखो, वाजपेयी याग है गन्धर्व याग भी कहे जाते हैं यहाँ बेटा! उन कर्म काण्डों में तो नहीं जाना चाहता हूँ, कि आज हम उसके कर्म काण्ड में परणित हों, ये तो हमारा विषय नहीं है। परन्तु विचार विनिमय केवल यह कि हम नाना प्रकार के विज्ञान और परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को जानना चाहिए प्रत्येक मानव का जो इस संसार में जन्म होता है, वह केवल मानवीयता के लिए होता है मानवता की स्थापना करना यह मानव का मौलिक गुण कहलाया जाता है मेरे प्रत्येक मानव मानवता की घोषणा करता रहता है परन्तु यह विचार आता है कि मानवता किसे कहते हैं? मानवता क्या है? तो यहां जो वेद का ऋषि कहता है उसकी पांच ज्ञानेन्द्रियाँ और पांच कर्मेन्द्रियाँ जिनकी याग में परणित करते रहते हैं, देवपूजा में परणित होती हैं, वह मानव कहलाया जाता है। देवपूजा का अभिप्राय क्या है? मेरे प्यारे! प्रत्येक इन्द्रियों में प्रत्येक इन्द्रिय का देवता विराजमान है, और प्रत्येक इन्द्रिय का जो देवता है उस देवता को देवत्व को प्राप्त करते हुए हमें महान और देवता बनना है।

आओ, मेरे पुत्रों! आज मैं विशेष चर्चा प्रगट नहीं करूंगा, क्योंकि मेरे प्यारे! महानन्द जी! भी अपना कुछ विशेष चर्चा प्रगट करेंगे। परन्तु आज का हमारा विचार केवल यह है कि आज हम यागों के कर्म काण्ड को अच्छी प्रकार जानने वाले बनें। हे यज्ञमान! हमारे यहाँ यज्ञमान का बड़ा विशेष वर्णन आता है। वैदिक साहित्य में यज्ञमान और देखो, पुरोहितों का वर्णन आता रहता है नाना प्रकार की आभा वाला, जो याग करने वाला यज्ञमान है, उसकी उड़ान इस पृथ्वी से ले करके द्यौ लोको तक होनी चाहिए। सूर्य मण्डलों तक होनी चाहिए, क्योंकि वह जो सूर्य की मण्डलों वाला जो

अनुपम जगत है उस आभा में रमण करना, उसकी महानता को विचारना, यह बेटा! मानवता का एक कर्तव्य कहलाया जाता है। आज मैं विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ, आज का हमारा वेद का ऋषि क्या कह रहा है, मैं उन वाक्यों को प्रगट करने आया हूँ।

मेरे पुत्रों! हमारा वेद का ऋषि यह कहता है कि हम अपने याज्ञिक के कर्म को ऊँचा बनाएं हम देव पूजा और भी नाना प्रकार के यागों में परणित होते रहें, उन यागों में परणित होने के पश्चात, हमारे जीवन की आभा ऊँची बनी रहती है। तो मुनिवरों! आज मैं विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ, मेरे प्यारे! महानन्द जी! कुछ अपना विचार प्रगट करेंगे, इनका विचार बहुत प्रियतम होता है। हमारा तो विचार विनिमय यह है कि हम सदैव याज्ञिक कर्मों को करते रहें, हे ब्रह्मा! तू अपनी ओजस्वी महानता से, वेदवाणी से तू संसार को पवित्र बना। हे यज्ञमान! तू गृह को ऐश्वर्य से भरण कर। परन्तु बेटा! वेद का ऋषि कहता है। अब मैं मेरे प्यारे! महानन्द जी! कुछ वाक प्रगट करेंगे। जो इनका मन्तव्य है, जो इनका आश्रय है, परन्तु यह अपनी विचारधारा, उद्दारता से प्रगट करते रहते हैं

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् यज्ञनम् प्राची रथा मनो ब्रह्मणा ऋषि व्यापा मनोः। हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल! अभी अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव याग के सम्बन्ध में अपनी विचारधारा प्रगट कर रहे थे क्या प्रत्येक मानव को याज्ञिक बनना है, राष्ट्र को भी व्यापक बनना है ऐसा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव प्रगट करते चले जा रहे थे। परन्तु मैंने बहुत पुरातन काल में, अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह कहा था, क्या हे भगवन! यह जो याग कर्म है, यज्ञमयी जो पद्धति मानी जाती है, इन पद्धतियों के सम्बन्ध में, भिन्न भिन्न प्रकार के विचार विनिमय होते रहें हैं। परन्तु आज हम, उन भिन्न भिन्न प्रकार के विचारों को, तो ले कर नही जाना

चाहते हैं। आज मैं यह वाक प्रगट करने आया हूँ, प्राचीनता में याग की कितनी महिमा रही है। हमारे यहाँ, प्रत्येक मानव याज्ञिक रहा है, प्रत्येक मानव याग कर्म करने वाला रहा है, मेरी प्यारी माता क्या, पुत्री क्या, मानो देखो, यह संसार याग में रहा है। क्योंकि याग कर्म करना, हमारा वास्तव में कर्तव्य है। इस याग के द्वारा मानव के द्रव्य का सदुपयोग होता है। और संसार में जो कर्म हैं वह गौणिक माने जाते हैं, परन्तु यह याग कर्म एक ऐसा कर्म है, जिससे मानव का जितना द्रव्य है, उसका सदुपयोग होता है। क्योंकि हमारे, वैदिक साहित्य में, वैदिक साहित्य में यह कहा है कि द्रव्य का सदुपयोग करना चाहिए आज प्रत्येक मानव आधुनिक काल का जो प्राणी है, वह यह कहता है कि मैने इतना दान किया है, इतना मैं द्रव्यपति हूँ, परन्तु यह जो भावना है, यह मानव को नीचे गिराने वाली भावना होती है, यह ऊर्ध्वा में ले जानी वाली भावना नही होती, जिस भी मानव के हृदय से अभिमान की मात्रा की मानो देखो, तरंगे उत्पन्न होती रहती हैं, जहाँ मैं के साथ में प्रतिपादन होता है, जहाँ मैं का उज्ज्वल स्वरूप मानव के समीप आता है। तो वही देखो, अभिमान की मात्रा उत्पन्न हो जाती है। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह प्रगट कराते हुए कहा, क्या याग करना तो अपना कर्तव्य होता है, और मानो जब धन का द्रव्य का सदुपयोग करता है, वह जो लक्ष्मी का सदुपयोग करता है मानो देखो, लक्ष्मी का सदुपयोग करने वाला, स्वर्ग और महानता के स्वामीतव को प्राप्त होता है। और जो द्रव्य का दुरूपयोग करता रहता है वह नारकिक क्षेत्रों में गमन करता रहता है।

मानव उत्थान के कर्म

परन्तु विचार विनिमय यह क्या देखो, सदुपयोग, नारकिकता और दुश्चिचार न आएं जब यह विचार आता

है मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के समीप पंहुचाता हूँ। पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे निर्णय कराया, क्या जो अपनी अन्तरात्मा की अनुकूल कार्य नहीं होता, जो उसके विरूद्ध होता है, वही देखो, इस संसार में मानव के लिए पापाकृत कहलाया गया है। परन्तु जो कर्म मानव की अन्तरात्मा में, उल्लास, शङ्का, लज्जा उत्पन्न नहीं होती, वह जो कर्म होता है, वह कर्म मानव के उत्थान का कर्म होता है, इसी में सदुपयोग होता है, वह कर्म द्रव्य के द्वारा किया जाता है। वह कर्म मानवता के द्वारा किया जाता है। नाना प्रकार की आभा में रमण करने वाला, वह कर्म है। परन्तु मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को कई काल में वर्णन कराते हुए कहा था, आधुनिक काल का जगत, याग जैसे कर्मों को पाखण्डता में परणित करता है, वह यह कहता है, आधुनिक काल का प्राणी यह कहता है, यह तो पाखण्ड है, मानो उतने द्रव्य को ले करके अग्नि में अपने में प्रवाहित किया जाता है। परन्तु मैं जब, मैं भोले प्राणियों से यह कहता हूँ, हे भोले प्राणियों! याग तो चलो, हमने भी स्वीकार किया चलो पाखण्ड हो सकता है परन्तु जो तुम नाना प्रकार के इस वायुमण्डल को दूषित कर रहे हो, मानो इसमें अपने मिथ्या विचार दे रहे हो, मिथ्या मानो इस अग्नि से धूम्र दे रहे हो आह अपने क्रोध, क्रोधाग्नि से तुम इसको अमृत को विष बना रहे हो, क्या इसको कोई मानव पाखण्ड नहीं कहता, क्या यह पाखण्ड नहीं है? परन्तु देखो, यह पाखण्ड है, इस पाखण्ड की मीमांसा करते हुए मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह निर्णय कराया कि कोई भी मानव पाखण्ड की मीमांसा जानना चाहता है जो पाखण्ड में परणित होता है, जो वेद के अनुकूल अपने विचारों को अपना आचरण नहीं बनाता, जो मानव देखो, अपनी महानता से दूरी रहता है, वह मानव देखो, सदैव पाखण्ड की आभा में रमण करता रहता है। हे

मेरे भोले प्राणियों! मैं इस क्षेत्र में भी विशेष जाना नहीं चाहता हूँ, विचार केवल यह देना चाहता हूँ कि प्रत्येक मानव जब याग जैसे कर्म को जिसमें महानता है, इसमें उज्ज्वलता है, मानो याग कर्म ही मानव को सत के द्वार पर ले जाता है, स्वर्ग का गामी बना देता है। स्वर्ग का गामी कैसे बनता है इस याग के द्वारा नाना प्रकार का जो अशुद्ध है, विनाशदायक मानो देखो, परमाणु विराजमान रहते हैं, उन सबको नष्ट करने वाला है। परन्तु जो हम विषधर वायु का हम त्याग देते हैं, नाना पदार्थों के द्वारा, उनके द्वारा यह मानो देखो, अशुद्ध होता रहता है। तो वह अयाग कहलाया गया है, याग वह कहलाया जाता है, जिसमें विचारों की सुगन्धि हो, जिसमें साकल्य की सुगन्धि हो, याग में जो देवता बना करके, पदार्थों को रूपान्तर कराया जा रहा हो, उससे वायु मण्डल में, सुगन्धि और तरंगो का जन्म हो रहा है। आज जब मानव यह विचारता है, आधुनिक काल का वैज्ञानिक, आज यह विचारता है, आधुनिक काल का वैज्ञानिक जब एकान्त विराजमान होता है, वह आधुनिक काल का वैज्ञानिक यह कहता है, अपनी विचारधारा वालें प्राणियों में, क्या इस संसार का क्या बनेगा? यदि जैसे आज देखो, यह गति चल रही है, परमाणु गति करते रहें, मानो देखो, नाना खनिजों के द्वारा देखो, अग्नि के द्वारा वह देखो, घर्षण से अशुद्ध वातावरण हो रहा है ऐसा प्रतीत होता है क्या अब से बीस वर्ष के पश्चात मानव का जीवन दुश्कर हो जाएगा। जब आज का वैज्ञानिक यह विचारता है, तो यह विचारता है क्या इसमें कौन सी भूमिका ऐसी है, कौन सा विचार ऐसा है, जिसको लाने से मानव के द्वारा सान्त्वना की स्थापना हो जाए, यह समाज ऊँचे स्तर का बन जाए, तो इसके द्वारा देखो, जब वैज्ञानिक यह प्रश्न लाता है परन्तु हम यह कहा करते हैं कि ऐसा कर्म यदि है, तो याग है, गो घृत के द्वारा, जब अग्नि में तपा

करके देखो, याग कर्म करते हैं स्वाहा कहते हैं, मानो देखो, वही तरंगे अन्तरिक्ष में ओत प्रोत हो रही हैं। वह निष्काम कर्म होती है। यज्ञमान यज्ञशाला में याग कर रहा है, आहुति दे रहा है, स्थापना कर रहा है। परन्तु वह अपनी श्रद्धा दे रहा है उसे यह प्रतीत नहीं है, कि यह जो तेरा उच्चारण किया हुआ जो शब्द है, तेरी दी हुई आहुति है, वह कहां जा रही है। परन्तु देखो, वह कितना महान, त्याग है, एक मानव त्याग में हैं मानो देखो, नाना यानों का निर्माण करता है, और यान का निर्माण करके, वह चन्द्रमा में गमन कर रहा है। कोई मङ्गल का गमन कर रहा है, मानो कोई बृहस्पति में जा रहा है। वाह रे मानव! तेरी उड़ान कितनी विचित्र है, क्या वह कैसी महानतम् उड़ान है, परन्तु वह जानता है कि चन्द्रमा में जाने से, मैं इस पृथ्वी मण्डल में आ सकूंगा और नहीं आ सकूंगा, परन्तु ऐसा देखो, ऐसा विचार देखो, जब बृहस्पति वाला प्राणी, उड़ान उड़ता है तो सिद्ध होता है कि वह कितना महान है। उसके विचारों में कितनी महानता है, जब मृत्यु का भी भय नहीं हो रहा है। परन्तु वह उड़ान उड़ता है, पृथ्वी से, और वह द्यौ लोक को प्राप्त होता है। वह महान मण्डलों को प्राप्त हो जाता है।

आओ, मेरे भोले! मेरे प्यारे! ऋषि मण्डल! आज जब हम यह विचार विनिमय करते हैं कि परमात्मा का कितना महान यह विचित्र जगत है, जब हम यह विचारते हैं मेरे पूज्यपाद गुरुदेव क्या यह परमात्मा की कैसी महान अलौकिता है? आज मैं यज्ञमानो को यही तो उच्चारण करने आया हूँ, हे यज्ञमानों! तुम्हारा जीवन सदैव आभा में रमण करता रहे, तुम्हारे जीवन में सदैव सदुपयोगिता आती रहे, तुम्हारे जीवन में, किसी प्रकार की अशुद्धियां न हो, हे यज्ञमान! तू सपत्नी मानो देखौ, तेरा अखण्ड जीवन बना रहे, तू याग और देवताओं के समीप जाता रहे, देवताओं के द्वार पर जाने से मानव

का जीवन महान और पवित्रता में रमण करने लगता है। परन्तु आज मैं विशेष चर्चा नहीं, परन्तु आज जब मैं यागों का वर्णन करता हूँ, यज्ञमान की आभा का वर्णन करता हूँ, मुझे नाना प्रकार के याग स्मरण आने लगते हैं, जब वह स्मरण आने लगते हैं तो इसी प्रकार मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से, नाना प्रकार के प्रश्न किया करता हूँ, नाना प्रकार की वार्त्ताएं प्रगट करता रहता हूँ। मैंने आज से पूर्व काल में, इससे पूर्व शब्दों में भी, यह उच्चारण कर रहा था, कि आज का मानव यह कहता है, कि आज का जो मानव समाज है, वैदिक जो प्राणी हैं, वेद का जो ढ़ोंग करते रहते हैं परन्तु देखो, वेद क्या है? आज का वैज्ञानिक यह कहता है, परन्तु जब मैं यह विचारने लगता हूँ, तो मेरा हृदय मानो देखो, तन्मय होता हुआ अतन्मय बन जाता है, और मैं यह घोषणा कर सकता हूँ, क्या वेद के ऋषियों ने ही सब कुछ जाना है, इस प्राणी ने क्या जाना है? जब मैं जाता हूँ उनकी विज्ञानशाला में, तो वह महान वेदों के विचारों को ले करके ही याग का निर्माण करते हैं। परन्तु देखो, जितनी भी संसार में रूढ़ियाँ हैं, वह मोहम्मद के मानने वालों की हो, अथवा चाहे वह ईसा के मानने वाली रूढ़ि हों, चाहे महावीर के मानने वाली रूढ़ि हो, मानो सम्प्रदाय रूढ़ियाँ हो, नाना प्रकार की रूढ़ियों में मानव परणित हो रहा है। परन्तु उन रूढ़ियों से पृथक होना, यह मानव का कर्तव्य कहलाया जाता है। जब रूढ़ियों से पृथक होने का प्रयास करते हैं, यह रूढ़ियाँ क्या हैं, ये रूढ़ियाँ वह है, जो देखो, इस मानव को अन्धकार में ला देती हैं। वैदिक साहित्य को ले करके, वह नाना प्रकार की आभा में रमण करते रहते हैं। परन्तु देखो, जब वह विचारते हैं, क्या यह क्या है? हमारे यहाँ प्रथम यह विचार आता है कोई भी मानव, राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है समाज को उन्नत बनाना चाहता है तो राजा के राष्ट्र में यह नाना प्रकार के विचारों

की रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए। क्योंकि विचारों की जो रूढ़ियाँ होती हैं, वह राष्ट्र और समाज को निचले स्थल पर ले जाती हैं, परन्तु जब राष्ट्रवाद के सम्बन्ध में उड़ान उड़ी जाती है, और उनकी घोषणा की जाती है, तो उससे हमें यह सिद्ध होता है, उससे हमें यह प्रतीत होता है, क्या मानव समाज अपनी आभा में कितना सुतवत को प्राप्त हो रहा है। आज जब मैं वेद के ऋषि की चर्चा करता हूँ, अपने पूज्यपाद गुरुदेव की चर्चा करता हूँ तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह मानव समाज कहाँ जा रहा है, मैं वैज्ञानिको के क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ परन्तु विचार यह देने आया हूँ, हमारे यहाँ महात्मा देवर्षि मुनि विज्ञानशाला में, एक ध्रुव यान का निर्माण किया गया था। महात्मा ध्रुव काल को मानो लगभग देखो, छत्तीस लाख वर्ष हो गएं हैं, छत्तीस लाख वर्षो का जो मानो देखो, देवर्षि नारद, उनके शिष्य जब वह प्रहा कृतं अपनी विज्ञानशाला में उड़ान उड़ते थे, वह ध्रुव यान का निर्माण कर रहें हैं, महात्मा ध्रुव ने, एक यान का निर्माण किया था, जिसका आयु मानो देखो, इक्कतीस लाख वर्षो का आयु। था वह आज भी वह यन्त्र मानो देखो, ध्रुव मण्डल की परिक्रमा कर रहा है। आज कोई मानव यदि वह जानना चाहता है, आज का मानव वैज्ञानिक विज्ञान के क्षेत्र में जाना चाहता है तो जब वह ध्रुव की मानो यात्रा के अन्तर्गत पंहुचेगा, उसकी परिक्रमा का वर्णन जहाँ आता है, तो वहाँ कौन विराजामन है? मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह वर्णन कराते हुए कहा था, क्या वह उसकी जब उस पर यह मानव पंहुचेगा, तो उस यान पर मानो देखो, नामोकरण में, देवर्षि नारद और देखो, महात्मा कक्रेति, असतो मुनिवरों! देखो, महात्मा ध्रुव इन मानो चतुर्थो का उसमें नामोकरण मानो तुम्हे प्रतीत होगा तुम उस यान को दृष्टिपात करो, आज मैं तुम्हे उदाहरण दे रहा हूँ, हे आज के मानव! हे मानव! हे वैज्ञानिकों! आज

तुम यह उच्चारण करते हो क्या यह विज्ञान अभी जाना है, पूर्व काल में यह विज्ञान नहीं था, यदि यह विज्ञान नहीं था, तो तुम्हारा जीवन भी कोई रहस्य में नहीं था परन्तु मानव का जीवन क्या रहस्य में था, और मानव का जीवन रहस्य में, हमें प्रतीत होता है। परन्तु जब राम के काल को, त्रेता के काल को विचारते हैं, और भी नाना कालों में जाते हैं, तो उन कालों में नाना वैज्ञानिक वार्त्ताएं, नाना यत्र हमें दृष्टिपात आते हैं। परन्तु आज हम वह चर्चा करने नही जा रहे हैं, आज का मानव, तो इसमें लगा हुआ है, क्या राम और रावण भी, कोई मानव संसार में हुए हैं अथवा नहीं। परन्तु जब आज का मानव यह विचारता है कि राम और रावण के काल काल्पनिक सुनने से मानो एक उपनिवेश है, यह उपनाद कहलाया जाता है। परन्तु मेरा हृदय गद् गद् हो जाता है मैं अपने पूज्यपाद गुरुदवे से यह निर्णय करता हुआ कहा करता हूँ, कि भगवन! यह समाज कैसा विचित्र बन गया है, यह समाज कैसा महान वृत्तियों में बन गया है। हे देव! तू कैसा विचित्र है। परन्तु देखो, पूज्यपाद गुरुदेव से मैं यह कहता हूँ तो वह दूर हो जाते है। परन्तु जब में यह विचारता हूँ, कि आज का मानव इस पर लगा हुआ है तो मैं एक वाक तुम्हें प्रमाण देना चाहता हूँ, कि महारानी वेण वृत्ति अब्रहो वृन्तकेतु महाराज, कोत्री महाराज देखो, महाराज शिवरी जो मानो देखो, वह केवल वह शिवरी देखो, यहाँ देखो, वह कार्य करती थी। उसके जो महापिता थे सुकेता, सुकेतकेतु मानो देखो, सुकीधनका यह जो इनके महावंशलज के ऋषि हुए हैं, उन्होंने यान का निर्माण किया और यान का निर्माण करके वह मानो देखो, वह बृहस्पति मण्डल की कल्पना कर रहा है। मानो उसकी परिक्रमा कर रहा है। परिक्रमा करता हुआ, उसका आयु, उस यान का आयु, जो परिक्रमा कर रहा है, अन्तरिक्ष का यत्र था, वह लगभग मानो

उसका आयु एक करोड़, एक सो अठाईस लाख वर्षो का आयु और उस यन्त्र पर मानो उनका नामोकरण है। अरे, मानव, आज जब तुम देखो, बृहस्पति के निकट पंहुचोगे, तो उस समय तुम्हे यह प्रतीत होगा क्या वह यन्त्र उस लोक की परिक्रमा कर रहा है। परन्तु आज मैं इस सम्बन्ध में उनका नामोकरण प्रतीत होगा, आज का मानव स्वार्थवाद में इतना परणित हो गया है, क्या मैं राम और रावण के संग्राम को मिथ्या उच्चारण करूंगा, तो मुझे कोई उपाधि प्रदान हो जाएगी। परन्तु मानव उपाधियों में परणित हो रहा है, उपाधियों को चाहता है, यह नहीं विचारता कि इससे मानवीय समाज का ह्रास होता है। उससे वैदिक साहित्य का ह्रास होता है। परन्तु देखो, जब मैं यह विचारता हूँ, प्रत्येक मानव यह कहता है क्या वेद में इतिहास है, वेद में साहित्य कहते हैं, इसमें ऋषि मुनियों के जीवन आते हैं, परन्तु जगदग्नि इत्यादियों का वर्णन भी वेद में आता रहता है।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने हमे यह निर्णय कराया क्या यह जो विचार है, यह मृत्यं में नहीं है परन्तु यह रूढ़ि में भी नही है। आज जब यह विचार मुझे पूज्यपाद गुरुदेव का स्मरण आता है, तो यौगिकता में जाना होगा। क्योंकि जब जमदग्नि का वाक आता है, तो जमदग्नश्चं प्रव्हे वह मानो देखो, जमदग्नि नाम उसे कहा जाता है, जो जमदग्नं ब्रहे जो मनों को जानने वाला होता है। अग्नि को जानने वाला वैज्ञानिक है, वह महान है। मानो देखो, जमदग्नश्चं ब्रह्मे लोकाः जमदग्नि देखो, अपने में है, जमदग्नि नाम आत्मा का भी जो मानो देखो, आवागमन जन्म मरण से मुक्त हो जाता है। और भी ऊँचे क्षेत्रों में जाते हैं तो जमदग्नि नाम प्राणो का भी कहा जाता है, और सूर्य को भी कहा गया है। नाना प्रकार के वेदमन्त्र हमें कहाँ कहाँ ले जा रहा है, तो रूढ़ि में साहित्य स्वीकार कर कर सकते है परन्तु जब हम वैदिक साहित्य में जाते हैं, वेद के विचार को ले करके

चलते हैं, तो वहाँ हमें साहित्य प्रतीत नहीं होता, इतिहास प्रतीत नहीं देता। उसमें तो केवल हमें ज्ञान और विज्ञान, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह वर्णन कराया था। कि मानव का मानव के शरीर का निर्माण होना, जब एक बिन्दु आता है और बिन्दु से और नाना प्रकार की धाराओं का जन्म होता है, आकार बनता है, चित्र बनता है, परन्तु देखो, वह जो वेदमन्त्र है, वह यह वर्णन कर रहा है, क्या जब तक मानो चित्रं ब्रह्म व्यापकं देवाः हिरण्यं रुद्रो भागा परन्तु देखो, इस साहित्य में अब्रहा आता है। क्या जब यह विचारते हैं, क्या वैदिक साहित्य में, वेदां ब्रह्मे मानो देखो, वेद में ज्ञान है, बिन्दु से ले करके, एक एक कण कण का ज्ञान है, एक एक यन्त्रों का ज्ञान है, वह पृथ्वी की उड़ान चाहे बृहस्पति में उडों, चाहे मङ्गल में उड़ने वाला क्यो न हो, चाहे वह देखो, बृहस्पति लोकों में जाने वाला हो, चाहे सूर्य मण्डलों में जाने वाला हो, नाना निहारिकाओं में जाने वाला क्या न हो, परन्तु वह जो जाना है, आना है वही ब्रह्मे व्रतं वेदाः सब वेद का ज्ञान है। वेद का विज्ञान है। ऋतम्भरा और प्रज्ञा का ज्ञान है। परन्तु जब उससे भी ऊँचा ऊँची गति में जाते हैं, जितना भी योगेश्वर है, मानो नाना योगियों की उसे सहायता उसे प्राप्त होती है। परन्तु अपने पूज्यपाद गुरुदेव से मैं यह कह रहा था, मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा था एक सुधन्वा नामक वैज्ञानिक हुआ, महाराजा अश्वपति के काल में वह वैज्ञानिक था, परन्तु जब वह वैज्ञानिक गुरुदेव के समीप विराजमान होता तो वह उस वैज्ञानिक की इतनी उड़ान थी, इतनी सूक्ष्म उड़ान थी क्या वह देखो, अपने यन्त्रों से अन्तरिक्ष में जो शब्द जाता था, उसका चित्र यन्त्र ले लेता था, परन्तु जब वह वैज्ञानिक जब चित्र लेता था, परन्तु उन प्राणियों का भी लेता रहता, जो माँस इत्यादि का भक्षण करते हैं। जो अशुद्ध वाक्यों को पान करते हैं, जो असुर परम्परा से हैं, असुर सदैव से हैं, जितना

भी पान करते उनके चित्रों में वह अपने यन्त्रों में नाना प्रकार की भूमिका को स्वीकार करते थे। जब उनकी तरंगे आती उनकी तरंगों में सतोगुण होता था, वैदिकता में जिसका आहार शुद्ध और पवित्र होता है, और जिनके आहारों में अशुद्धवाद है। उसमें मानो देखो, रक्तभरी विचारधारा वह तरंगे उनको दृष्टिपात आती रहती थी। परन्तु जब यह विचार आते हैं तो नाना वैज्ञानिक उनके द्वार पर आते और वह सुधन्वा अपने विचारों से यह कहता रहता था कि महान बनो, विचित्र बनो, यह सम्पदा अन्यथा मानव को समाप्त कर जाएगी। हे मानव! तू अपने विचारों को वेद को ले करके मार्ग पर ले जा, परन्तु वेद यही तो कहता है, वेदा अमृता ब्रह्म लोकाः परन्तु जब यह विचार आता है जितने भी संसार के महापुरूष होते हैं उन महापुरूषों का जो आहार होता है, वह पवित्र होता है। वह मोहम्मद से ले करके और भी परन्तु उसका आहार तमोगुणी तो रहा है, रजोगुणी तो रहा है, परन्तु वह तमोगुण में परणित नही हुए। आज मैं इस साहित्य में विशेष चर्चा नहीं .. अथवा धर्म और मानवता रहनी चाहिए। परन्तु मानवता की घोषणा करने वाला प्राणी, यह विचारता है, कि मैं मानवता की घोषणा करूं। अरे, मानवता है क्या? जो मननशील मानव वही है जो दूसरे के ऊपर दया करने वाला हो, मानव वही कहलाता है। जो मानो देखो, अपने मानवीयतव को ऊँचा, अपने कर्तव्य का पालन करता चला जाएं, कर्तव्यवाद का नाम मानो धर्म है, वही धर्म जो मानवीय इन्द्रियों में समाहित रहता है, उस धर्म की पद्धति को धारण करना चाहिए। परन्तु आज मैं जब इन वाक्यों को ले करके, और भी गम्भीरता में जाता हूँ। समाज के गर्भ में परणित होता हूँ, तो वह समाज, वह काल दूरी नहीं है। जब इसको मानो देखो, समाज में मानो अग्नि का प्रवेश हो जाएगा। और यह समाज अग्नि के मुख में परणित होता चला जाएगा।

आज जब मैं धर्म और मानवता के ऊपर, विचारने लगता हूँ, नाना रूढ़ियों में प्रवेश करता हूँ, तो मैं यह कहा करता हूँ, हे सर्वे धर्म के जानने वालों! आज तुम धर्म को विचारों, धर्म क्या है? परन्तु देखो, जब मैं धर्म को विचारता हूँ, जिसमें यौगिकता हो, मानवतव हो, महानता हो, पवित्रता हो, ओजस्विता हो, परन्तु देखो, जो अग्नि के काण्डों को मानव को दूरी कर सके।

आज मैं यह उच्चारण करने आया हूँ हे मेरे पूज्यपाद! मैं यह आज क्या दृष्टिपात कर रहा हूँ, मैं यज्ञों को आयोजनों को दृष्टिपात कर रहा था। परन्तु कर्मकाण्ड से युक्त होते हुए कर्म काण्डों में प्रायः परन्तु देखो, पूज्यपाद गुरुदेव यह कहा करते हैं क्या कुछ करने से करना बहुत प्रियतम है। परन्तु यागों की पद्धतियाँ विचित्र हैं, महान हैं मानो देखो, याग सुगन्धित हो रहा है वायु मण्डल में तरंगे ओत प्रोत हो रही हैं, स्वाहा उच्चारण करने की तरंगे, द्यौ लोक को जा रही हैं, अरे, इससे द्यौ लोक ऊँचा बनता है देवताओं के लोक में प्रवेश करता है, यज्ञमान आज मानो देखो, मैं यज्ञमानो के आना चाहता हूँ। हे यज्ञमान! आज तेरी मनोप्रवृत्ति महान रहनी चाहिए, मैं नाना वैज्ञानिको की चर्चा करता रहता हूँ, नाना वैज्ञानिको के क्षेत्र में आता रहता हूँ। यज्ञमानो के क्षेत्र में यज्ञमान कौन होता है? जो यज्ञमान सबसे ऊँचा यज्ञमान तो मेरा देव प्रभु ही है। जो संसार को, इस सृष्टि रूपी यज्ञ का निर्माण अथवा इसको संचालन कर रहा है। इसमें भिन्न भिन्न आहुतियाँ दी जा रही हैं, अरे, सबसे ऊँचा तो यज्ञमान, तो चैतन्य देव है। परन्तु देखो, जो यज्ञमान होता है, मानव, याग करता है, देवपूजा करता है, अग्नि की स्थापना करता है, परन्तु देखो, अग्नि की स्थापना करने से अपने अन्तःकरण को आहार, और व्यवहार से, इस प्रकार का शुद्ध और पवित्र बनाना चाहिए। जैसे अग्नि को स्वरूप इसको तुम अग्नयाधान करना चाहते हो।

ऐसे ही तुम श्रद्धा की अग्नि को, श्रद्धा की अग्नि को जागरूक करो, और वह क्रिया में करने वाले बनो, तो वह याग और तुम्हारा मानवीय याग और जो तुम्हारी इच्छाओं का याग है वह पूर्ण होगा अन्यथा नहीं होगा। इसी प्रकार परन्तु जब मैं यह विचारने लगता हूँ, **क्या यज्ञमान यज्ञमान बनने के पश्चात यदि उसके चरित्र में चरित्रता में, मानवीयता नहीं आती है, तो उन देखो, यज्ञमानो को देखो, सदैव अनिष्ट होता रहता है, अरे, उन यज्ञमानो को यज्ञों पर विराजमान होने का कोई लाभ नहीं। अरे, देवता तो ग्रहण करते रहते हैं वह तो शोधन अवश्य करेंगे।** परन्तु तुम वेद के यज्ञमान बनने वाले! हे यज्ञमानों! तुम अपने जीवन को ऊँचा बनाओ, ऊँचा बनाओ कैसे? क्या जिस समय तुम यज्ञ पर विराजमान हो जाओ, उस समय मानो देखो, परा देवी, पत्नी ब्रह्मे व्रता परा देवी और अपने विचारों आहारों को शोधन करने का प्रयास परन्तु देखो, शोधन होने ही चाहिएं।

अशुद्धता में अनिष्ट

मुझे वह काल स्मरण है एक समय मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने, सुधन्वा नामक वैज्ञानिक से एक याग कराया था और जब वह याग हुआ था। सुधन्वा नामक वैज्ञानिक से, यह कहा अन्तःकरण में प्रवेश करके, पूज्यपाद ने क्या हे यज्ञमान! तेरे अन्तःकरण में तो पवित्रता है, परन्तु देखो, तेरा आहार ब्रहे उस समय देखो, उन्होंने कहा कि भगवन! हे ब्रह्मणे मैं यह निश्चय कर चुका हूँ, अपने वैज्ञानिक यन्त्रों से, मैं विज्ञान से यह सिद्ध कर सकता हूँ, क्या मेरा आहार और देखो, आहार में व्यवहार में पवित्रता है। परन्तु विज्ञान से मेरी प्रतिज्ञा है, क्या अशुद्धता से क्या क्या अनिष्ट होते हैं। परन्तु देखो, जब याग हुआ, तो याग से और ऊर्ध्वा गति को प्राप्त हो गएं, मानो यौगिक अर्थो में चले गएं

इसी प्रकार जब मैं यह वाक्यों को ले करके चलता हूँ, और भी नाना वैज्ञानिकों की चर्चा ले करके चलता हूँ।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने एक समय महाराजा त्रीतकेतु राजा से जब वृष्टि याग का आयोजन किया गया, वृष्टि याग हुआ तो याग के पश्चात देखो, वृष्टि प्रारम्भ होने लगी महानता आ गई पवित्रता आ गई परन्तु अन्न का शोधन किया देखो, शोधन करने के पश्चात वह याग होते हैं। उन यागों में पवित्रता आती है। यागों मे अश्रद्धा नहीं होती, राष्ट्र के राष्ट्र ऊँचे और समाज के समाज ऊँचे बनते हैं। अहा! देखो, यह परमात्मा का याग हो रहा है, तुम भी याज्ञिक बनो, प्रत्येक मानव को याग करना चाहिए, जब प्रत्येक प्राणी यहाँ याग करता था न संग्राम होते थे, न मानो रक्त भरी क्रान्तियाँ आती हैं। रक्त भरी क्रान्ति उस काल में आती है, जब कर्तव्यों को नष्ट कर देता है, प्राणी, आज मैं विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव के यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ, मैं प्रार्थना करने के लिए आया हूँ, क्या आज देखो, यज्ञमान को ऊँचा बनना है। वैज्ञानिकों को ऊँचा बनना है, आज का वैज्ञानिक यह कहता है, क्या कि पूर्व विज्ञान नहीं था, मैंने पुरातन काल में यह कहा है, आज का वैज्ञानिक तो केवल चन्द्रमा की यात्रा कर सका है, परन्तु देखो, जब पूर्व वैज्ञानिक के द्वार पर जाते हैं, तो वह ध्रुव की यात्रा करता है मानो देखो, जब यहाँ ब्रह्मचारी सुकेता की चर्चा आती है, भारद्वाज की चर्चाएं आती हैं। मानो वह विराजमान हो करके यन्त्र में एक ही यन्त्र से वह चन्द्रमा में जा रहा है, उसी यन्त्र से वह बुद्ध में जा रहा है, उसी यन्त्र से मङ्गल में जा रहा है। उसी से मानो वह शुक्र में जा रहा है, उसी सुधन्वा में जा रहा है। नाना देखो, बहतर लोको का एक यन्त्र से वह भ्रमण करता है। इस प्रकार का विज्ञान रहा है, यह यह मानवीय मस्तिष्कों का विज्ञान हैं, परम्परागतों से

इसको जानने का अधिकार प्राणियों का रहा है। परन्तु आज का प्राणी यह कहता है कि मानव का विकास होते होते यहाँ आ गया, अरे, मानव का विकास तो सृष्टि के प्रारम्भ से ही है, और वह क्यों है क्योंकि देखो, वही तो आत्मा थी, जो पूर्व कल्प में थी, जो पूर्व कल्प में आत्मा थी, अरे, वही विकास वाली आत्मा जैसा जिसका कर्म फल था, उसी के अनुसार उसे योनि प्राप्त हो गई, और उसी योनि के प्राप्त होने से देखो, वह नाना प्रकार का विकासवाद परम्परागतों से प्रारम्भ हुआ। आज कोई मानव यह कहता है कि मानव का विकास यह है, मानव विचारक नहीं हैं। उसे विचारना चाहिए, क्या मानव का यदि विकास यहाँ तक आ गया, और कहाँ से आया, उन्होंने पशुओं से विकास माना है। मानव का परन्तु यह अशुद्ध है, विज्ञान के क्षेत्र में जब पंहुचोगे और गम्भीर विज्ञान में जाओगे तो यह सब वस्तु तुम्हे प्राप्त होगी। परन्तु आज मैं पूज्यपाद गुरुदेव को यह उच्चारण करने आया हूँ। क्या हे प्रभु! आज का यह समाज यह स्वीकार करता है। परन्तु मैं यह उच्चारण करने आया हूँ, यह विचार आज का मानव समाज याग जैसे ऊँचे कर्मों को पाखण्ड कहता है। अरे, तुम्हारा आहार इतना अशुद्ध हो गया, उसको पाखण्ड नहीं कहता, प्राणी यह कितना दुर्भाग्य है, इस समाज का, आज का राष्ट्रवाद आज के राष्ट्रवाद में मानवता की स्थापना है, और मानवता उस काल में आयेगी जब राष्ट्र की पद्धति ऊँची बनेगी, इसी प्रकार आज का हमारा यह जो मन्तव्य है आज का जो विचार है आज का जो हमारा अन्तिम परिणाम हमारे वाक्यों का परिणाम यह कि हे यज्ञमान! तेरा जीवन ऊँचा बनें। जीवन का सौभाग्य अखण्ड रहे मानवीयता ऊँची आए, और ऐसे ऐसे याग होते रहें, महान से महान कर्म होते रहें। जिससे समाज का विकास हो जाएं। आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से अब आज्ञा पाऊँगा, क्या आज

मेरा यह वाक समाप्त हो गया है। मैने कुछ अपना संक्षिप्त विचार दिया है, इतना दार्शनिक विचार तो हम नहीं दे रहे हैं, जितना मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कल उड़ान उड़ रहे थे। वह उदान प्राण की उड़ान उड़ रहे थे, व्यान की उड़ान उड़ रहे थे, जब यह उड़ान उड़ते थे और हम इनके चरणों में ओत प्रोत होते थे, तो हम समाधिष्ट हो जाते थे, सम्प्रज्ञात में चले जाते थे। वेद के मन्त्र के गर्भ में चले जाते थे, अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊँगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे! महानन्द जी! ने अपने कुछ संक्षिप्त विचार प्रगट किए, इन संक्षिप्त विचारो में इनके महान से महान उद्गार रहे। इनके विचार एक महानता में परणित रहते हैं। मानो आम वृत्तियों में इनके विचार रहते हैं, उन विचारों में मानो यौगिकता न रह करके सामान्यता रहती है। इसी प्रकार जैसा मेरे पुत्र ने कहा है, वेद का ऋषि भी यही कहता है, वेद का ऋषि यही घोषणा करता है, कि मानव समाज को याज्ञिक बनना चाहिए। परमात्मा के क्षेत्र में जाना चाहिए, कल भी मेरे प्यारे! महानन्द जी! अपने कुछ विचार प्रगट करेंगे। आज का विचार उनका प्रिय लग रहा था, समय मिलेगा तो शेष चर्चाए प्रगट करेंगे। अब वेदों का पाठ होगा। ओ३म् ....

13 २३ ०८ १९७८ मानव को शुद्ध चिन्तन करना चाहिए।

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव, परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है क्योंकि वे परमपिता

परमात्मा प्रतिभाशाली है उसी की प्रतिभा, इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड में ओत प्रोत है। जब हम उसके ज्ञान और विज्ञान के ऊपर मनन करना प्रारम्भ करते है, तो प्रायः हमें ऐसा दृष्टिपात आने लगता है, जैसे हम, उस परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान के सम्बन्ध में एक अङ्कुर भी नहीं जान पाते। क्योंकि उसका ज्ञान इतना नितान्तर माना गया है उसके विज्ञान को कोई भी मानव, सीमाबद्ध नहीं कर सका है क्योंकि उसका ज्ञान और विज्ञान सीमाबद्ध नहीं हो पाता। वह इतना विशाल और इतना महान माना गया है क्या उसी की प्रतिभा इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड में ओत प्रोत रहती है।

मेखला

बेटा! हमारे ऋषि मुनियों ने, एकान्त स्थली में विद्यमान हो करके, और गम्भीरता से बेटा! चिन्तन किया, और मनन करना प्रारम्भ किया, क्या इसमें जो सर्वज्ञ व्रत्यां देवाः यज्ञूँषि गातां तन्तनं वृत्ति देवाः मानो यह जो संसार रूपी यज्ञशाला है, इस यज्ञशाला की एक मेखला बनी रहती है, परन्तु वह मेखला इतनी उज्ज्वल और इतनी महान बनी रहती है कि इस पृथ्वी के गर्भ में, जो नाना प्रकार का भण्डार अग्नि का है, उस अग्नि की आभा को सन्तुलित बनाने के लिए, मानो प्रभु ने एक सुन्दर मेखला का निर्माण किया। परन्तु वह ऐसा प्रवाह से गति करता है कहीं अग्नि के रूप में है, मानो वह जलों के रूप में शीतल बन करके गति कर रहा है, मेरे पुत्रों! यह कितना वैज्ञानिक तथ्य है। यह विज्ञान से मानो परिपूर्ण है। विज्ञान क्या कहता है जैसे इस मानव का शरीर है, मानव के शरीर में भी मेखला का निर्माण मेरे प्यारे! प्रभु ने किया। बेटा! माता के गर्भस्थल में, जब शिशु होता है। तो उस बालक का, जो आसन होता है, वह भी जल ही होता है और जो इसका मानो ऊर्ध्वा में मानो ऊपरी भाग में जिसके आंगन में रहता

है। वह भी जल रहता है तो कैसी विचित्र उस मेरे प्यारे! प्रभु की अनुपमता है। माता के गर्भस्थल में जल में ही, यह जल के आंगन में जल ही इसका मानो आसन बना हुआ है, जल ही इसका ओढ़न बना हुआ है, परन्तु देखो, जल के आश्रित हो करके यह बालक पनपता रहता है। यह माता के गर्भस्थल में बेटा! किसने मेखला बनाई है, किस प्यारे! प्रभु ने किस विश्वकर्मा ने इस मेखला का निर्माण किया, कि बालक जल के आंगन में ही रहता है। वह जल कितना ऊर्ध्वा में बन गया है पुत्रों! आज मैं इस सम्बन्ध में एक विचार विशेष नहीं दूंगा। विचार विनिमय यह है मेरे प्यारे! प्रभु का विज्ञान कितना विशाल है, माता के गर्भस्थल से ले करके, एक बिन्दु से ले करके एक परमाणु से ले करके बेटा! उसका विज्ञान ही विज्ञान दृष्टिपात आता है। मेरे प्यारे! ऋषि मुनियों ने इसी विज्ञान को ले करके, यज्ञशाला का निर्माण किया जिससे मानव समाज में, एक मानवता आ जाए, जिससे हम वेद की प्रतिभा को विचार विनिमय कर सके। जिससे मानव अपना क्रियात्मक कर्म करता हुआ, अपने द्रव्य का सदुपयोग करता रहे, उसको धर्म में धर्मत्तम मानो धर्माणि धर्म प्रव्हा सुतानि वह धर्म में उसको परिवर्तित करता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, यज्ञशाला में सृष्टि के आदि में, जब ऋषियों ने यह विचारा कि यज्ञशाला के एक आसन पर तो विद्यमान आत्मा यज्ञमान रूप में है, दूसरी स्थली में आदित्य विद्यमान है, प्रकाश ले करके आ रहा है। और देखो, ऊर्ध्वा में वायु का भण्डार है, दक्षिण में और मुनिवरों! देखो, उत्तर में ज्ञान का भण्डार है अग्नि प्रभा से विद्युत गति करती है। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषियों ने कितना चिन्तन किया, क्या उत्तरायण से ले करके विद्युत की जो धारा है वह दक्षिणायन को गति करती है। तो दक्षिणायन में अग्नि का मानो वह मानो देखो, उस विद्युत का, ओस भण्डार रहता है, वह वायु

के रूप में। मेरे पुत्रों! ज्ञान की जो तरंगे उत्पन्न होती है वह भी मानव के उत्तर दिशा में होती है, उत्तरायण में होती है। इसीलिए हमारे यहाँ उत्तरायण में ही ऐसा कहते है जब आत्मा उत्तरायण में शरीर को त्यागना है। तो वह स्वर्ग में जाता है और दक्षिणायन में त्यागता है तो वह अन्धकार में जाता है। ऐसा कहते है। परन्तु इसका जो वैदिक सूत्र क्या कहता है वैदिक सूत्र यह कहता है कि उत्तरायण से जो विद्युत की धारा है वह दक्षिणायन को गति करती है मानो दक्षिण में वह भण्डार बन जाता है ऐसे ही मानव की जो गतियां है वह उत्तरायण में रहनी चाहिए, ज्ञानयुक्त रहनी चाहिए। ज्ञानयुक्त जो धाराएं, तरंगे होती है वही तरंगे मानव को महान बनाती रहती है।

यज्ञ की दिशाएं

तो विचार विनिमय क्या मुनिवरों! मैं उच्चारण कर रहा था ऋषि मुनियों ने यह चार स्थलियों का निर्माण किया। यज्ञशाला में बेटा! देखो, पूर्वामुख यज्ञमान विद्यमान हो जाता है और उत्तरायण मुख ब्रह्मा विद्यमान होता है और दक्षियाण मुख उद्गाता विद्यमान होता है और पश्चिम मुख बेटा! अध्वर्यु कहलाता है, होता जन उनके सहायक बने रहते है। मेरे प्यारे! यज्ञमान पश्चिम दिशा में क्यों विद्यमान रहता है यज्ञशाला में इसलिए रहता है क्योंकि उसका मुख प्रकाश में रहे, प्रकाश मानो पूर्व से आता है। पूर्व दिशा से प्रकाश आता है आदित्य उदय होता है। बेटा! अपनी कान्तियों को ले करके आता है और वह कान्तियां मुनिवरों! देखो, यज्ञमान के मुखारबिन्द पर परणित होती है। उत्तराणाति आदि गच्छनं ब्रहे व्रत देवाः इसलिए कि पश्चिम दिशा बेटा! अन्न का भण्डार है। मैंने इससे पूर्व काल में भी तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था जब पश्चिम वायु गति करती है, तो यह पृथ्वी ललाहित

हो जाती है। इस पृथ्वी में एक तप की तरंगे उत्पन्न हो जाती है। वनस्पतियों के जीवाणु उत्पन्न हो जाते है। मानो देखो, पृथ्वी से जो जल, पृथ्वी का जो जल है उसे अन्तरिक्ष में भरण कर देती है। बेटा! वह तपती रहती है, अन्न का भण्डार है उतनी आवश्यकता के अनुसार बेटा! ले करके और वह उस प्रवाह से मानो देखो, अन्न को उपजाऊ बना देती है तो अन्न का भण्डार, यह पश्चिम दिशा मानी जाती है। उसके पश्चात दक्षिण दिशा आती है दक्षिणाय में मुनिवरों! देखो, ब्रह्मा विद्यमान रहता है जो मनन करता है, चिन्तन करता है। बेटा! देखो, उसका उत्तरी मुख होता है। उत्तरी मुख इसलिए होता है क्योंकि वाणी का जो प्रवाह जाता है, चिन्तन करने की जो एक प्रवाह गति है, वह उत्तरायण को जाती है और जब वह उत्तरायण को जाती है वो मानो देखो, वह ब्रह्मा चिन्तन कर रहा है, मनन कर रहा है, यज्ञमान के कल्याण की कामना कर रहा है, परन्तु देखो, वह उसकी जो धाराएं है, तरंगे है, देवताओं का जो आह्वान कर रहा है अग्नि को जो मित्र बना रहता है, वरुण को जो मित्र बना रहा है, वायु को जो मित्र बना रहा है, पृथ्वी को धरणी बना करके बेटा! देखो, उसके उद्गात उद्गम ब्रह्मा को देखो, वह उत्तर को गति करा देता है और गति करके मानो दक्षिण को उसकी पूर्वक स्थिति बन जाती है।

उदगाता मुख

तो मेरे प्यारे! वह जो उद्गाता है दक्षिणाय को उसका मुख है क्योंकि जितना भी उद्गान गाता है, उद्गान की तरंगे, उत्तर में हो करके दक्षिण को गति करती है और दक्षिण में भी उस उद्गाता के जो शब्द है, वह ओत प्रोत हो जाते है और देखो, वह जो ब्रह्मा का स्थान है उसका चिन्तन करने का वह मानो कर्म है, उसकी वाणी से उसका समन्वय होता है और वाणी का जब

समन्वय होता है, जब मिलान होता है तो उद्गाता बेटा! गान गा रहा है, चिन्तन कर रहा है, ब्रह्म के सम्मुख विद्यमान हो करके और वह तरंगे बेटा! देखो, मानो देखो, आह्वान बनाती हुई भगवान के उस ब्रह्माण्ड में अथवा चित्त के मण्डल में विद्यमान है। मेरे प्यारे! द्यौ लोक को प्राप्त हो जाती है और द्यौ लोक में जो तरंगे गति कर रही है, मेरे प्यारे! वह चित्त के मण्डल की आभा में, गति करने वाली है।

अध्वर्यु

विचार विनिमय क्या, मेरे प्यारे! देखो, पूर्व मुख कौन रहता है? उसे अध्वर्यु कहते है। अध्वर्यु उसे कहते है जो द्रव्य को प्रदान कर रहा है। मेरे प्यारे! देखो, प्रकाश आता है और प्रकाश के साथ में जो जब द्रव्य आता है, उसका साकल्य बनता है और साकल्य बना करके वह होताजन उच्चारण करते है। मेरे प्यारे! देखो, अध्वर्यु सर्वत्र जितना भी साकल्य अथवा सामग्री होता है उस सबका स्वामीतव करता है उसका निधित्व करने वाला है। मानो देखो, वह यह विचारता है कि देवताओं की होत में, हम हूत कर रहे है, अग्नि को देवताओं का मुख बना रहे है। परन्तु उसमें सूक्ष्मता से नहीं है उसमें मानो कृपणता तो नहीं हो रही है, यह सब अध्वर्यु दृष्टिपात करता है। बेटा! अध्वर्यु यज्ञं देवत्वं देवाः वह उसमें ओत प्रोत हो करके क्योंकि वह उसमें अन्न का प्रकाश, वह अन्न का मानो साकल्य का भण्डार है और उस साकल्य को मेरे प्यारे! देखो, भण्डार के साथ गति करता है। विचार विनिमय यह बेटा! मैं यह बहुत तत्व की चर्चा कर रहा हूँ। मानो यह अध्वर्यु की चर्चा क्या, मैं इस ब्रह्माण्ड की गाथा, वेदमन्त्र की गाथा गा रहा हूँ। विचार विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, यज्ञशाला में विद्यमान हो करके, जब बुद्धिमान यज्ञशाला में यज्ञमान होते परन्तु उनकी श्रद्धा, उनकी निष्ठा उनका जो हृदय

का जो उद्दार होता है वही उसके मुनिवरों! देखो, साथ में जाता है। एक मानव बेटा! ।

अशुद्ध चिन्तन से पतन

मुझे स्मरण आ गया, एक वार्ता मैं इसको उच्चारण तो करने नहीं जा रहा था, परन्तु आ गया, एक समय बेटा! देखो, तुम्हें प्रतीत होगा, महर्षि उद्दालक गोत्र में एक महर्षि पणपेतु हुए है, महर्षि पणपेतु उनकी पत्नी श्वेलता वह दोनों अपने गृह में बाल्यकाल से याग करते और अपने महापुरुषों के दर्शन करते, विज्ञान की तरंगों को जानते, एक समय श्वेलता बोली महर्षि से, महाराज चलो, भयंकर वन में याग करें, पणपेतु ऋषि उनके वाक को शान्त नहीं कर सके, क्योंकि जिस पति की पत्नी, प्रेरणा युक्त प्रश्न करती है तो उसकी प्रेरणा, इतनी बलवती होती है जो शुभ प्रेरणा होती है क्या वह स्वामी को उस प्रेरणा को स्वीकार करना ही होता है। क्योंकि उसकी शुभ प्रेरणा होती है। मेरे प्यारे! जब वह शुभ प्रेरणा उन्होंने दी, तो महर्षि पणपेतु बोले चलो देवी! मेरे प्यारे! भयंकर वन में पहुँचे। वन में दोनों ने बेटा! साकल्य एकत्रित करना प्रारम्भ किया, वनस्पतियां थी सर्वशः साकल्य को एकत्रित किया और जब एकत्रित किया तो उन्होंने बेटा! अग्निहोत्र किया। जब अग्न्याधान करने लगे, मेरे प्यारे! जब देवी ने अग्न्याधान प्रारम्भ किया, ऋषि ने जब अग्न्याधान प्रारम्भ किया तो मेरे पुत्रों! देखो, इसमें आकृति याग कर्म करने के पश्चात्, उन्हें तो याग ही याग दृष्टिपात आने लगा। मेरे प्यारे! महात्मा भुञ्जु गोत्र में एक सन्ततिक नाम के ऋषि हुए, वह सन्ततिक ऋषि महाराज व्याकुल हो रहे थे। मानो शरीर जीर्ण हो रहा है। वे दोनों पति पत्नी उसके द्वारा पर पहुंचे, भ्रमण करते हुए, वह व्याकुल हो रहा है, वाणी भी अशुद्ध हो गई है, शरीर भी जीर्ण हो गया। ऋषि ने कहा हे

भगवान! तुम्हारा तो गोत्र ब्रह्मवेत्ताओं का है, और तुम्हारी यह गति, तुम्हारा शरीर भी जीर्ण हो गया और इतनी मानो वेदना है, तुम्हारे हृदय में, उन्होंने कहा कि महाराज! मेरे अन्तर्हृदय में, मेरे अन्तर्चित्त में, वह संस्कार आ रहे, वह शब्द आ रहे है, जो शब्द मैंने किसी युवा अवस्था में उच्चारण किए थे। जो मेरे जन्म जन्मान्तरों की निधि, चित्त में विद्यमान थी, वही चित्र आ रहे। उन्होंने कहा कि क्या चित्रण आ रहे है? उन्होंने कहा मुझे भयंकर, भयंकर प्रकृति के दृश्य आ रहे है। भयंकर दृश्य आते है, मेरा हृदय, मेरा शरीर अजीर्ण हो रहा है, मैं उसी व्याकुलता में मानो व्याकुल हो रहा हूँ। ऋषि ने कहा यह कैसे आ रहा है? उन्होंने कहा प्रभु! मैंने अपनी बाल्य से युवा अवस्था में, मैंने सदैव मिथ्या ही वाक्यों का प्रतिपादन किया और मैं सदैव घृष्टता करता रहा संसार से, मैंने प्रभु का चिन्तन नहीं किया, मैंने याग कर्म नहीं किया, जबकि मेरे वंशलज में परम्परागतों से यागों की प्रथा है। मैं सदैव अग्नि भी मेरे समीप आती थी, अग्नि में भी मैंने जीवों का भक्षण किया, परन्तु देखो, वही चित्र बन बन करके मेरे अन्तःकरण में प्रवेश कर गए। मैं अजीर्ण बन रहा हूँ, मुझे कोई मार्ग प्राप्त नहीं हो रहा।

मेरे प्यारे! ऋषि आश्चर्य चकित हो गये। पति पत्नी दोनों ने कहा प्रभु! यह तो बड़ी विचित्रता दृष्टिपात कर रही है। उन्होंने कहा कि मेरे हृदय में कोई शुद्धता नहीं आ रही, वह क्यों नहीं आ रही? क्योंकि मैंने शुभ कर्म, शुद्ध अध्ययन नहीं किया। मेरे अध्ययन करने की शैली भी रही, तो अशुद्ध रही। मेरे अध्ययन करने की शैली रही तो भोगवाद की रही, मेरे अध्ययन करने की शैली रही तो मिथ्या वातावरण था यदि मैं ऋषिकृत अध्ययन करता, मैं ऋषि मुनियों के चरित्रों को, उनकी आभा को अध्ययन करता तो मानो मेरे अन्तःकरण में, मेरे हृदय में, वही आत्मवाद आता। वह जो बाह्य मेरा

चित्त है, वह जो बाह्य जगत का जो चित्त है, उसमें अशुद्ध ही अशुद्धता भरी हुई है मेरे जीवन में, मुझे साक्षात्कार दृष्टिपात आती है।

मेरे प्यारे! ऋषि ने कहा तो अब हम क्या कर सकते है? उन्होंने कहा प्रभु! मेरा यदि उद्धार हो जाए, तो कोई कीजिए। मेरे प्यारे! देखो, उन दोनों पति पत्नीयों में अपने आश्रम में ले गएं और उन्होंने साकल्य एकत्रित करना प्रारम्भ किया, और वह साकल्य भी वह एकत्रित करने लगे जो देवताओं के सुयोग्य नहीं है। ऋषि पणपेतु ने कहा हे ब्रह्मवेत्ता! गोत्राणि यह तो तुम साकल्य याग के लिए नहीं लाए हो? यह कैसा साकल्य है, इसको तो देवता भी स्वीकार नहीं करेंगे। अग्नि भी मानो इसे भस्म करके सुगन्धि नही देगी। यह तुमने क्या किया? उन्होंने कहा प्रभु! मेरा अन्तःकरण तो इतना ही अशुद्ध है, मैं क्या करूं, मुझे अपने सात जन्म स्मरण है, मैंने सात जन्मों से कोई शुभ कर्म नहीं किया, मेरा तो अन्तःकरण दूषित हो गया है।

अब मेरे प्यारे! देखो, उन दोनों ने अपने ही साथ में, यज्ञशाला में विद्यमान हो करके, उससे आहुति प्रदान कराने लगे। मुनिवरों! देखो, जब आहुति प्रदान करने लगे तो कुछ आहुतियों का शोधन हुआ मानो देखो, यज्ञशाला में आहुति देने लगे तो मुनिवरों! देखो, बारह वर्ष तक मौन रह करके तीनों प्राणियों ने, उन दोनों ने विशेषकर मानो उसे मौन रहने के लिए कहा, और सांकल्य स्वतः ला करके, उसके द्वारा याग करते थे, अग्निहोत्र तो अग्नि देवता ने उसकी प्रेरणा, जो शुभ प्रेरणा, जो शुभ तरंगे आती थी, वह देवताओं तक पहुँचाई, चित्त में अच्छाईयां भरण होने लगी, और बाह्य चित्त आन्तरिक चित्त दोनों का जब समन्वय होने लगा, तो मानो देखो, वह जो उसका हृदय था, वह पवित्र बन गया। परिणाम यह हुआ कि उसका पुनरुत्थान हो गया। मेरे प्यारे! वह ऋषि कैसे थे? बारह वर्ष तक जब

बेटा! उन्होंने याग करते रहे तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने याग के द्वारा एक अनुसन्धानशाला बनाई, अनुसन्धान शाला का निर्माण किया, जब निर्माण किया तो उन्होंने एक चित्रावली थी, उस चित्रावली का भी निर्माण किया। तो वह पणपेतु ऋषि, उनकी पत्नी और वह मानो देखो, उस यन्त्र में मेरे प्यारे! जो श्वांस में गति होती है, श्वांस के द्वारा जो चित्र जाते थे, अन्तरिक्ष में बेटा! उनको, उस यन्त्र के द्वारा, वह दृष्टिपात करने लगे। अब बेटा! देखो, यह याज्ञिक विज्ञान आता है, यह याज्ञिक विज्ञान है जिसके ऊपर ऋषि मुनि अध्ययन करते थे। मेरे प्यारे! जब उनके चित्र आने लगे तो शब्द उच्चारण किए जाने लगे, तो शब्दों के साथ में, उतने ही आकार का शब्द बना रहता जितना मानव का शरीर होता और उस शरीर शब्दवाद के साथ में मानो देखो, वह चित्र जाता हुआ, पुनः यन्त्रों में, अपना दृष्टिपात आने लगा। अब उन्होंने यह विचारा कि श्वांस की गति भी विचित्र है, और चित्त भी, चित्रण भी हमारा शुद्ध हो रहा है। और हमें दूसरों के चित्रों को दृष्टिपात करना चाहिए। अब मेरे प्यारे! देखो, जिसको हमारे यहाँ पितरलोक यह कहते है कि पितरयाग होना चाहिए। मानो पितरों का याग क्या है? यह एक विचित्र वाक है, मानो कुछ तर्पण करते है परम्परागतों से, कुछ तर्पण की शैली आई, परन्तु तर्पण के साथ में मानो देखो, पितर यागों का वर्णन आया। तो पितर यागों में वास्तव में तो यह कि पितरों की आज्ञा का पान करना ही याग है। परन्तु यह भी है जिस आहार, व्यवहार से हमारे पितर जन गति करते थे, गृह में उस गति से हमें भी ऐसा ही गतिवान होना चाहिए, ऐसा ही आहार और व्यवहार होना चाहिए, तो वह पितर याग कहलाता है। परन्तु एक यह है कि हमें पितरों के दर्शन करने है, वह पितर सूक्ष्म रूप में रहते है और वह रहते कहां है? बेटा! देखो, अपनी परिणिधी में रहते है। इससे उनके

संस्कारों का जो चित्रण था उसमें तो जन्म जन्मान्तरों की आभा गति कर रही है, और जो अपने पितर थे परन्तु जो पितर बन करके आये, क्योंकि आत्मा पितर नहीं होता, शरीर भी पितर नहीं होता, पितर होता है जो उसका सङ्कल्प होता है। जैसे माता के गर्भस्थल में एक पुत्र का निर्माण होता है, परन्तु वह पुत्र, यदि मैं माता से यह प्रश्न करता हूँ कि आत्मा तेरा पुत्र है या शरीर तेरा पुत्र है, न आत्मा पुत्र है न शरीर पुत्र है। पुत्र क्या वस्तु है? पुत्र माता पिता का जो मानो देखो, जल और अग्नि का जो दोनों का समन्वय किया था, जो याग किया था माता पिता ने, वह याग में जो सङ्कल्प बना था। मानो देखो, उस सङ्कल्प का पुत्र बना, वह सङ्कल्प का नाम ही पुत्र कहलाता है। न शरीर का प्रतीत है और न आत्मा को ही मानव जानता है, न माता जानती है न पितर जानता है। परन्तु वह जो सङ्कल्प मात्र, वह सङ्कल्प मानव का, एक कटिबद्ध हो रहा है। एक श्वांस के साथ में गतियां जा रही है, पुत्र के प्रति स्नेह जा रहा है, पुत्री के प्रति स्नेह जा रहा है। पुत्र माता पिता के प्रति स्नेह और मोह, ममता में परणित हो रहा है, उसका जो आकार बन करके जाता है, वह विमान बन करके बेटा! वह अन्तरिक्ष में विद्यमान होता है। वह शब्द के रूप में हो, श्वांस के रूप में हो, चाहे वह नेत्रों के स्नेह के रूप में हो।

तीन प्रकार के शरीर

बेटा! तीन प्रकार की आभा होती है। एक शब्द के द्वारा स्थूल, एक मानव के नेत्रों के द्वारा स्नेह होता है, उस स्नेह की तरंगें विद्युत बनकर के अन्तरिक्ष में जाती है, सूक्ष्म और जो अन्तर्हृदय में एक प्रेम की प्रीति होती है वह मेरे पुत्रों! कारण लिंग में लय रहती है। मेरे प्यारे! देखो, आत्मा के तीन प्रकार के शरीर, तीन प्रकार की परिणिधियां होती है। स्थूल, सूक्ष्म और

कारण। मेरे प्यारे! यह तुमने जाना, यह बहुत सूक्ष्म रहस्य है। मैं इस सूक्ष्म रहस्य में जाना नहीं चाहता, परन्तु वेद की तरंगें इस प्रकार की आ गई, याग का प्रकरण इतना सूक्ष्म है, कि इसको मैं बहुत सूक्ष्मता से ऋषि मुनियों ने अध्ययन किया। अब मुनिवरों! देखो, जब वह ऋषि मानो विद्यमान हो करके, अपनी यज्ञशाला में, उस सङ्कल्प का दिग्दर्शन करते है, उस सङ्कल्प से जो अणु परमाणु मानो सम्बन्धित हो रहा है उसी में मानो देखो, तीनों आभा विद्यमान होती है। स्थूल, सूक्ष्म और कारण। मेरे प्यारे! देखो, वह जो तरंगें बन करके, तरंगें बन करके मुनिवरों! देखो, भौतिक यन्त्र में और अब ऋषिवर मुनिवरों! देखो, जो अपने महापुरुष थे, उनके जो श्वांस में गति थी, स्नेह की, वह भी उन्हें चित्रों के रूप में दृष्टिपात आती और जो मुनिवरों! वाणी के रूप में थी वह भी दृष्टिपात आने लगी। जो नेत्रों के सम्मुख जो स्नेह मानो बिखरा हुआ था वह भी दृष्टिपात आने लगा। अब एक ही शब्द में, एक ही आभा में, एक ही मानव की असुतियों में मेरे प्यारे! देखो, तीन प्रकार के, तीन प्रकार के मानो देखो, चित्र उन्हें दृष्टिपात आने लगे।

मेरे पुत्रों! मुझे तो बहुत पुरातन काल की वार्ता स्मरण आती रहती है। मैं विशेषता में नहीं जाना नहीं चाहता हूँ, मैं उस गम्भीर क्षेत्र में भी नहीं जा रहा हूँ, तुम्हें यह निर्णय कराने के लिए आया हूँ। मुनिवरों! देखो, अभ्यं वृत्ति देवा नमोस्ति देवो मेरे प्यारे! देखो, एक समय वे पति पत्नी दोनों विद्यमान हो करके, जो उनके सौंवे महापिता थे, जो निधन को चले गये, वह तो जन्म जन्मान्तरों की आभा में, आत्मा चली गई। परन्तु वह जो उनको सम्बन्धित तरंगे चित्रण रमण कर रहे थे अन्तरिक्ष में बेटा! अपने महापिताओं के उनको बेटा! यन्त्रों में वह मानो दृष्टिपात करने लगे, उनके चित्र आने लगे। अब वह जो चित्र आने लगे, उनको ऋषि

और अहा उनकी पत्नी दृष्टिपात कर रहे है। मेरे प्यारे! उनका जो क्रियाकलाप था, वह भी दृष्टिपात आ रहा था। उनका जो उपदेश मञ्जरियाँ चलती रहती थी, वह भी दृष्टिपात आने लगी। जो पुत्र और पुत्री के सम्बन्ध में जो मानो उनके उपदेश मञ्जरियाँ होती वह भी दृष्टिपात आने लगी। तो परिणाम क्या मुनिवरों! देखो, मानव के लिए विज्ञान, जो परमात्मा का विज्ञान है वह एक एक कण कण में विद्यमान है उसको कोई मानव, सीमा बद्ध नहीं कर सका है। इतना विशाल विज्ञान है प्रभु का, मैं उच्चारण कर रहा था पुत्रों! क्या प्रत्येक मानव को अपनी आभा में रमण करना ही चाहिए। अपनी आभा में, अपनी मानवता में और मानवता की तरंगों में ओत प्रोत रहना चाहिए। तो मेरे पुत्रों! देखो, वह याग से ही प्रारम्भ होता है ऋषि मुनियों ने कहा है कि हम, याग से ही मानव का कल्याण और राष्ट्र का कल्याण करें। एक याग कर्म एक ऐसा है जो मानव के अन्तर्हृदय से उत्पन्न होता है और जितनी रूढ़ियाँ है, जैसा मेरे पुत्र महानन्द जी कहा करते हैं जो रूढ़ियाँ हैं, वह रूढ़ियाँ कण्ठ तक रहती, वह सत्यता को निर्णय करता, उनका अन्तरात्मा परन्तु रूढ़ि में आ करके प्रेरणाओं को वह दमन करता रहता है, वह एक याग कर्म ऐसा है जो स्वतन्त्र प्रेरणा उत्पन्न होती है और वह जो स्वतन्त्र प्रेरणा है, वह धर्म और मानवता की रक्षा करने के लिए होती है। तो इसीलिए देखो, विद्या की रक्षा करना, मानव को ऊँचा कर्म करना और देखो, इस अन्तरिक्ष में घृत को मरण कर देना, मानो शुद्ध वायु मण्डल को बनाना, यह प्रत्येक मानव का कर्तव्य है।

तो यह बेटा! आज मैं उच्चारण कर रहा था, मैं तुम्हें गम्भीरता में नहीं ले जा रहा हूँ, विचार विनिमय यह प्रारम्भ कर रहा था कि प्रभु का जो विज्ञान है, वह इतना अनन्त है पुत्रों! इतना महान है। मेरे प्यारे! सौवें महापिता के एक एक श्वांस की गति, यन्त्रों में आती है

उनके चित्र आते है। एक भी पुत्रों! मैं विज्ञान के बहुत से तथ्यों को वर्णन करता रहता हूँ। बहुत से बेटा! अनुभव में भी आए है। परन्तु में विज्ञान के युग में तुम्हें नहीं ले जा रहा हूँ।

विचार विनिमय केवल यह उच्चारण कर रहा हूँ कि हे यज्ञमान! तू मानो देखो, पश्चिम दिशा में मानो तुम विद्यमान हो करके अपनी पत्नी से कहते देवी। आओ, याग करें। यागां ब्रह्म लोकां दिव्य व्रताम् तो मेरे उच्चारण करने का अभिप्राय कि हे मानव! हे यज्ञमान! तू संसार में आया तेरा अध्ययन पवित्र होना चाहिए। तेरे अध्ययन की शैली ऋषिकृत होनी चाहिए, यदि तुम मिथ्या वाक्यों को ही श्रवण करता रहेगा, मनन करता रहेगा, भोगवाद के लिए, तो यह भोगवाद ही चित्त में विद्यमान ही करके यह भोगवाद ही तेरे जीवन में आते रहेंगे। जब जीर्ण अवस्था हो जाएगी उस समय मानो चित्र बन बन करके, तू रूदन करता रहेगा, परन्तु व्याकुल होता रहेगा। परन्तु कोई, उद्धारक प्राणी नहीं मिलेगा।

परिणाम क्या मुनिवरों! देखो, अध्ययन करने की शैली, पवित्र होनी चाहिए। हे मां! तू गृह में जब ऋषियों की पोथियों को, जब तू अध्ययन करती है तो तू गृह में स्वर्ग को बिखेर देती है, तू स्वर्ग को बिखेर रही है और जब तू हे मां! अशुद्धता को, मिथ्या स्वार्थिकता को अध्ययनशील बना रही है, तो जानो तू गृह में नारकिकता को बिखेर रही है। अशुद्ध तरंगों को बिखरे रही है उससे तेरा गृह अशुद्ध बन जाएगा। परिणाम क्या मुनिवरों! आगे आने वाला जो समाज है, तेरा जो पुत्र पुत्रीवाद है, तेरा जो सङ्कल्पवाद है, वह तेरा अशुद्ध बन करके मानो देखो, वह तेरे ही चित्त में विद्यमान होता है। वह मानो देखो, तेरे सङ्कल्प में ही मानो अशुद्धता आ जाएगी, जीवन में जीर्णता ही आती रहेगी। अजीर्णता का नाम बेटा! मृत्यु है और देखो,

उदारता और गम्भीरता का नाम ही बेटा! जीवन है। मेरे प्यारे! प्रत्येक मानव की जीवन लाने का प्रयास करना चाहिए, मृत्यु के आंगन में न जाओ कि मृत्यु तो एक मानव को निराश्रित बना देती है। आज का वाक क्या है पुत्रो! आज के विचार मैं यह देने के लिए आया हूँ कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते, आज इस संसार सागर से पार हो जाए, यह ऋषि मुनियों ने बेटा! सृष्टि के प्रारम्भ में ही विज्ञान के तथ्यों से ले करके बेटा! यज्ञशाला का निर्माण किया, उसमें स्थलियों का निर्वाचन किया, वरण किया गया, क्योंकि उसमें प्रभु साक्षी होता है, हृदय की प्रेरणा साक्षी होती है। यह है बेटा! आज का वाक अब मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा अब वेदों का पाठ।

14 २४ ०८ १९७८ रुढ़ि से उपराम हो

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा आनन्दमयी है वह आनन्द का श्रोत है उसकी महानता सदैव, इस प्रकृति के कण कण में ओत प्रोत रहती है। आज का हमारा वेदमन्त्र, जहाँ परमपिता परमात्मा की आराधना कर रहे थे वहाँ हमारा वेदमन्त्र, उस महान देव की महिमा के गुणगान गाने में अथवा उसके विज्ञान की प्रतिभा और मानव का उस परमपिता परमात्मा से कितना तन्मय रहता है मानो कितनी

घनिष्ठता रहती है।

अध्यात्म से रूढ़ि से उपराम

आज का हमारा वेदमन्त्र और भी नाना प्रकार की वार्त्ताओं का वर्णन कर रहा था। परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र यह क्या कह रहा था, ब्रह्मणं व्रत्यं देवाः बेटा! एक समय, नाना ऋषि विद्यमान थे, और उन ऋषियों में, कुछ विचार विनिमय प्रारम्भ होने लगा। उन ऋषियों में नाना गोत्रीय ऋषि थे, कुछ शाण्डिल्य गोत्रीय थे कुछ कौशल गोत्रीय ऋषि थे, कुछ कौसत गोत्रीय ऋषि, कुछ शाण्डिल्य परन्तु उन ऋषि मुनियों में, यह विचार होने लगा कि आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक विज्ञान में कितना अन्तर्द्वन्द्व है। मेरे प्यारे! इसमें महर्षि कौशल ने एक वाक कहा कि परस्पर दोनों एक ही तुलना में आते है, परन्तु प्रकृति और चैतन्यता के बिना न तो भौतिक विज्ञानवेत्ता ही उड़ान उड़ता है और न दोनों के बिना आध्यात्मिकवेत्ता उड़ान उड़ता है। दोनों में एक ही द्वन्द है एक ही विचारधारा है। आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता तो यह कहता है कि मैं मृत्यु को पार होना चाहता हूँ और भौतिक विज्ञान यह कहता है कि मैं प्रकृति के एक एक परमाणु को जानना चाहता हूँ। परन्तु देखो, यह जो भौतिकवाद है, यह अन्तिम चरम सीमा पर जा करके यह मौन हो जाता है। परन्तु आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता मौन नहीं होता, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता रूढ़ि से ऊर्ध्वा में चला जाता और एक प्रकाश की आभा में रमण करने लगता है। उसके जीवन में अन्धकार नहीं आता, उसके जीवन में प्रकाश रहता है। तो इसीलिए भौतिक विज्ञानवेत्ता और आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता में इतना द्वन्द है। क्योंकि प्रकृति की आभा में आध्यात्मिकवेत्ता भी उसी में रमण करता है और भौतिक विज्ञानवेत्ता भी तरंगों में चला जाता है। परन्तु दोनों का जो प्रारम्भ है, वह एक ही

सन्तुलना है। उन दोनों को एक ही तुलना रहती है। जैसे मानो देखो, एक मानव वाणी के ऊपर अनुसन्धान करना चाहता है, शब्द के ऊपर, ध्वनि के ऊपर, परन्तु वह ध्वनि को विचारता रहता है वह विज्ञान की दृष्टि से विज्ञानवेत्ता, भौतिक विज्ञान से विचारता है और विचार विनिमय करता हुआ, वह एक महान आभा में रमण करने लगता है। तरंगों के ऐसे क्षेत्र में चला जाता है, जहाँ उसे मार्ग ही प्राप्त नहीं होता। परन्तु आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता जब योग के क्षेत्रों में प्रवेश करता है अथवा मानवीय क्षेत्र में रमण करता है, मृत्यु को विजय करना उसका लक्ष्य, मृत्यु का विजय होना, उसका लक्ष्य है तो यह तरंगवाद, जितना भी आत्मीय सम्बन्धी विचार है, उस विचार में वह इतना गहन, इतना गम्भीर, इतना महानता में प्रवेश कर जाता है कि अपनी इन्द्रियों में ही सर्वत्र ब्रह्माण्ड की कल्पना करता है। क्योंकि भौतिक विज्ञानवेत्ता बाह्य जगत में सर्वत्र दृष्टिपात करता है। आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता आन्तरिक जगत में दृष्टिपात करता है। परन्तु आन्तरिक जगत में जो दृष्टिपात करता है अन्तिम जो चरम सीमा है उसका ब्रह्म चेतना है। ज्ञान और प्रकाश है। परन्तु जो अपने से बाह्य जगत में संसार और विज्ञान को दृष्टिपात करता है वह मानव, अन्तिम जो चरमसीमा, कहाँ तक रहती है क्या वह तरंगों में तरंगित होता हुआ, अपने मानव दर्शन से वह वंचित्त रहता है। परन्तु जो मानव दर्शन से ही अपने से वंचित्त है और वह अन्तिम चरम सीमा सुखद की कहाँ हो सकती है। परन्तु और जिसका अन्तिम लक्ष्य, केवल मानव दर्शन है, अपना ही अपने में दर्शन करना है, ब्रह्म चेतना को अपने में ही दृष्टिपात करना है अपनी इन्द्रियों के ज्ञान और विज्ञान में रमण करना है तो जानो कि उसकी आभा, एक महान बनी रहती है और वह उसकी जो अन्तिम सीमा है, वह ब्रह्म चेतना में रत्त रह करके, वह मृत्युञ्जय बन जाता है, उसको आत्म प्रकाश

होता है। क्योंकि प्रत्येक मानव यह कहता है कि संसार का जो यन्त्र है, वह बाह्य जगत के परमाणुओं से ही जाना जाता है। परन्तु मैं यह कहता हूँ कि नहीं, ऐसा नहीं, आन्तरिक जगत से ही मानो देखो, यन्त्रों का निर्माण होता है। जैसे एक बिन्दु है और बिन्दु में परमाणु है और उस परमाणु में मानो देखो, परमाणुओं को सुगठित हुआ, जैसे माता का गर्भाशय है, एक ही बिन्दु से ही तो रचना हो गई। परन्तु वह बाह्य जगत से तो हुई परन्तु वह आन्तरिक जगत का विशेष कर भाग होता है। माता का आन्तरिक जो चिन्तन है, उसकी प्रतिभा और महान बना देती है। माता का, पिता का जो चिन्तन विशेषण होता है वह उसको सङ्कल्प से ऊँचा बना देता है।

तो परिणाम मानो देखो, इतना भी यह विशेषण व्रतानि देवाः आन्तरिक जगत से विचार आता है परन्तु उन विचारों में आस्था रहना मानव दर्शन है और निर आस्था आन्तरिक से विचारा, बाह्य जगत से विचारते हुए और बाह्य जगत से ले करके उन्होंने यन्त्रों का निर्माण कर दिया, उसमें आस्था निर आस्था रहती है। उस निराशा में वह मानव परिवर्तित हो जाता है। परिणाम यह होता है कि दोनों विज्ञान का लक्ष्य एक ही है दोनों का लक्ष्य एक है कि मैं प्रकृतिवाद को जानूँ, आध्यात्मिकवेत्ता भी यही चाहता है कि मैं भौतिकवाद को जान करके और जो भौतिक विज्ञान जो प्रकृति विज्ञान है उस विज्ञान से मुझे पार होना है और पार हो करके बिना प्रकृति के पार हुए मानो उस आंगन से दूरी हुए बिना मानव मृत्यु से विमुक्त नहीं हो सकता। वह मृत्युञ्जय नहीं बन सकता।

तो इसीलिए देखो, वह बाह्य जगत से जानना चाहता है, वह आन्तरिक जगत से जानना चाहता है। आन्तरिक जगत एक विशेष कहलाता है। तो इसीलिए हमारे आचार्यों ने यह कहा कि तुम मानव दर्शन करना

चाहते हो, प्रकृतिवाद को जानना चाहते हो तो तुम्हें भौतिक विज्ञान को आभा में मानो अपने में ही दृष्टिपात करना होगा। तो यह उन्होंने बेटा! एक विशेष चर्चाएं की और परमाणुओं का मिलान कराना यह दोनों करते है। भौतिक विज्ञानवेत्ता भी करता है आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता भी, वह भी योग में, उसको वह योग में परणित हो जाता है। वह योग में दो वस्तुओं का मिलान करता है, वह भौतिकवाद में उन परमाणुओं को भिन्न भिन्न, आभा को योग में लाता है। दोनों का योग भी एक सा ही सूक्ष्म माना गया है। परन्तु जब उसको तुम अन्तिमता में विचारोंगे तो दोनों का लक्ष्य ऊपर जा करके भिन्न बन जाता है। भौतिक विज्ञानवेत्ता शान्त हो गया, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता अन्त में मौन हो करके, मौन हो करके अपने में संसार को दृष्टिपात करता है। दोनों ही, परन्तु एक ही आभा में रमण करते रहते है।

आध्यात्मिक और भौतिक विज्ञान के लक्ष्य

तो विज्ञान विनिमय यह कि हमारा भौतिक विज्ञान, आध्यात्मिक विज्ञान ऊँचा बने। परन्तु दोनों विज्ञानवेत्ता अनुसन्धान, अन्वेषण करते रहे जिससे राष्ट्र उसका राष्ट्र तक लक्ष्य रहता है आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता का सर्वत्र प्रकृति पर, वह शासन करना चाहता है दोनों में इतना भी अन्तर्द्वन्द्व रहता है वह राष्ट्र को ही उन्नत बनाना चाहता है कि राष्ट्र में यन्त्र हो, उससे राष्ट्र सम्पन्न बनेगा, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता यह चाहता है कि मेरा लक्ष्य तो पवित्र है, परन्तु मैं सर्वत्र जो प्रकृतिवाद गति कर रहा है, उसके ऊपर मैं अनुशासन करूँ मैं पृथ्वी पर अनुशासन नहीं करना चाहता हूँ, वह लोक लोकान्तरों पर भी अनुशासन करना चाहता है। मानो देखो, ज्ञानी ही ऋषियों ने श्रेष्ठ कहा है। ज्ञानी ही प्रभु

को प्राप्त होता है। इसीलिए मेरे प्यारे! वह संसार में, वह प्रकृति क्या, वह प्रत्येक लोक लोकान्तरों के विज्ञान को जानना चाहता है और वह उसी में रत्त रहना चाहता है। तो दोनों का एक ही लक्ष्य रहता है, दोनों की एक ही प्रकार की आभा है। अब मैं विशेष चर्चा तो प्रगट करने नहीं आया हूँ, विचार यह देने के लिए आया हूँ कि इसलिए अहा! आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता होने चाहिए, आत्म चिन्तन करने वाले पुरुष विशेष होने चाहिए, आत्म चिन्तन करने वाला पुरुष, इस संसार से पार होता है।

तो आओ, मेरे प्यारे! आज का हम विचार क्या देना चाहते है, आज का हमारा विचार विनिमय यह बेटा! कल हमारा कुछ सूक्ष्म वाक रह गया यज्ञो वृत्यं देवत्यां लोकाः देखो, एक आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता, आध्यात्मिकवादी मानो अग्नि को अग्नीय बनाता है वह अग्नि को अपना अग्नीय प्रकाश का, प्रतीक बनाता है और बनाता हुआ अपनी यज्ञशाला में याग करता है और याग करके, उन परमाणुओं के ऊपर अनुसन्धान करता रहता है। मानो देखो, उसी आभा में रमण करना, यह उस मानव का कर्तव्य है। अब मैं विशेष चर्चा नहीं, अब मेरे प्यारे! महानन्द जी! अपने कुछ विचार व्यक्त करेंगे क्योंकि हमने अपने विचारों में दो प्रकार की धाराओं को तुम्हें वर्णन किया है। पूर्ण रूपेण तो नहीं, परिचय देना है। परिचय देना ही हमारा कर्तव्य है। अब मेरे प्यारे! महानन्द जी! अपने कुछ सूक्ष्म से विचार प्रगट करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् तनु मा तनु गच्छं देवाः विश्वं गतं मन्वन्थना स्वश्चतं देवं यज्ञो गताः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ज्ञान और विज्ञान की चर्चाएं प्रायः करते रहते है, इससे पूर्व शब्दों में, वह कुछ यागों की चर्चाएं करते जा रहे थे, क्योंकि याग में, सूक्ष्मतम एक कर्म है, जिस

कर्म के द्वारा, मानव अपने जीवन को, आभा में युक्त करता है और अपने द्रव्य का, प्रायः शोधन करता रहता है। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, यागों का चलन, प्रायः इस संसार में रहा है और एक आभा में नहीं, भिन्न भिन्न प्रकार की आभाओं में रहा है। जिस भी राष्ट्र में तुम गति करोगे, उसी राष्ट्र में तुम यज्ञ को पाओगे। क्योंकि वह याग, किन्हीं न किन्हीं रूपों में है, प्रायः रूढ़ियों से वह आभा लुप्त हुई, नाना रूढ़ियाँ जब आई, उन रूढ़ियों में, याग का जो सूक्ष्मतम रहस्य था, उसको नहीं विचारा गया। क्योंकि प्रत्येक रूढ़ि का जो लक्ष्य रहा है, वह राष्ट्र को अपनाना रहा है और क्योंकि प्रत्येक जितनी भी रूढ़ि आई है, उन रूढ़ि के सन्दर्भ में मानो राष्ट्र का विशेषण रहा। और राष्ट्र का जो विशेषण है वह रूढ़ि बना देता है। इसीलिए वे रूढ़ियाँ बन गई और उन रूढ़ियों के बनने से गम्भीर चिन्तनता लुप्त हो गयी, जब गम्भीर चिन्तन लुप्त हो गया, तो मानव में स्वार्थवाद आ गया। उस स्वार्थवाद का परिणाम यह हुआ, कि धर्म, मानवता और देवतापन का भी साथ साथ लुप्त होने लगा। क्योंकि राष्ट्रवाद अग्रणीय, वह सीमा बना देता है।

रूढ़ि का धर्म पर आक्रमण

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने, कई काल में वर्णन करते हुए कहा था, नाना ऋषि भिन्न भिन्न राष्ट्रों में हुए, इनका चिन्तन करने का जो माध्यम, चिन्तन करने की जो उनकी शैली रही है, वह प्रायः बहुत विचित्र रही है। परन्तु देखो, वह रूढ़ियाँ राष्ट्रवादी बन करके, उन रूढ़ियों ने धर्म के ऊपर आक्रमण प्रारम्भ किया। कोई भी रूढ़ि आई, उन्होंने सबसे प्रथम धर्म के ऊपर आक्रमण किया और वह धर्म मानो देखो, उनके शब्दों में रह गया। क्रिया में नष्ट हो गया। क्रिया में उसकी आभा नहीं रही। जब मैं यह विचारता रहता हूँ पातञ्जलि

योग दर्शन को विचारता हूँ, यहाँ मैं वैशेषिक दर्शन, कणाद के ऊपर अपना विचार ले जाता हूँ, तो और भी न्याय पर जब जाते है तो प्रायः हमें ऐसा दृष्टिपात होता है, वेदमन्त्र की आभा को विचार विनिमय करने लगते है, तो वेद में प्रकाश प्रतीत होता है। परन्तु वेद भी राष्ट्रीय वादियों ने, राष्ट्र के, अपने यहाँ राष्ट्र को मानो यह उच्चारण करके कि हम तो अग्रणा कृति है, व्रेतञ्च है मानो देखो, उन्होंने यह शब्द कहा कि हम सर्वोधर्म परि है, हम सब धर्मो को एक सा स्वीकार करते है। परन्तु यह नहीं विचारा राष्ट्र के कर्णधारों ने कि धर्म सब नहीं होते, धर्म तो एक होता है। धर्म की मीमांसा को नहीं विचारा, परन्तु देखो, उसमें नाना रूढ़ियों को भी देखो, धर्म स्वीकार कर लिया। जब नाना रूढ़ियों को धर्म में अपना लिया तो धर्म कहाँ रहा, वहाँ तो रूढ़ि की रूढ़ि रह गई।

कर्तव्यवाद में राष्ट्र

तो इसीलिए मैं यह उच्चारण करना चाहता हूँ, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को, यह निर्णय कराने के लिए आया हूँ, महाभारत काल के पश्चात यह जो रूढ़ियाँ आई। भिन्न भिन्न प्रकार की रूढ़ियाँ आई, इन रूढ़ियों ने सबसे प्रथम देखो, राष्ट्र तक सीमित रह करके, राष्ट्र को स्वार्थवादी बना करके मानो देखो, धर्म की रूढ़ि बन गई। धर्म न रह करके, रूढ़ि बन गई। धर्म तो मानव की इन्द्रियों में समा गया। इन्द्रियों में समाहित रहता है और भी समाहित हो गया। परन्तु देखो, वह इन्द्रियों के अपने मानो चिन्तन के भाव को भी मानो रूढि में आ करके उसको भी प्रगट नहीं कर सकता। यह कैसी हीनता आ गई? यह राष्ट्रवाद ने कैसी हीनता, मानव के हृदय में परणित कर दी। एक काव्य

रचनाकार है और वह काव्य रचना कर रहा है परन्तु वह भी यह चाहता है कि मैं राष्ट्र की त्रुटियों को काव्य के रूप में उच्चारण, प्रगट न करूं। परन्तु यह कितनी आत्महीनता प्राणी में आ गई है, यह आत्महीनता है। परन्तु देखो, आत्मा यह कहती है कि कर्तव्यवाद का नाम राष्ट्र है। विवाद का नाम राष्ट्र नहीं है। साधारण प्रजा को प्रीति में लाना ही राष्ट्र का कर्तव्य है। परन्तु देखो, जहाँ राष्ट्र यह कहता है राष्ट्रीय धर्म, वहाँ हो क्या रहा है? वहाँ यह विचार है कि साधारण प्रजा को, प्रजा में रक्त की क्रान्ति आए तो मानो देखो, तुम द्रव्य को एकत्रित करने वाले बनो, तुम उनके शृङ्गार को, अपने में उनके वैभव को, चाटन में, अपने में मानो देखो, उसको अपने में परणित करते रहो। तो क्या यह राष्ट्रीय धर्म है? क्या यह रूढ़ि नहीं है, क्या मैं इसको क्या उच्चारण कर सकता हूँ।

आहार में चरित्र स्थापना

जहाँ भगवान मनु ने यह नियम बनाया, वेद का धर्म यह कहता है, राष्ट्रीय धर्म, क्या राजा के राष्ट्र में मछली से ले करके प्राणी तक की रक्षा होनी चाहिए। परन्तु जहाँ रक्षा के लिए कहता है, भगवान मनु बारह वर्ष तक एक मछली की पूजा करता है। उसने राष्ट्र का निर्माण किया। परन्तु देखो, उसी ने राष्ट्र का निर्माण किया है और देखो, उसके विधान के अनुसार न चल करके मानो देखो, प्राणियों के मांस को एक खाद्य पदार्थ प्राणी ने स्वीकार कर लिया। क्या यह कितनी आत्महीनता है, क्या यह कितना उनका अनुवृत्ति विचार है और वह प्राणी यह कहे, उच्चारण करने वाला कि मैं मानो देखो, चरित्र का निर्माण करके रहूँगा। तो यह उसकी हीनता है। चरित्र का निर्माण कैसे होता है? यह

विचारने का वाक है। चरित्र का निर्माण उस काल में होता है जब तक मानव का आहार पवित्र नहीं बनेगा। तब तक कोई भी राजा मानो अपने राष्ट्र में मानो चरित्र की स्थापना नहीं कर सकता। क्योंकि जब तक मानव के हृदय में, मानव के हृदय में, एक दूसरे प्राणी के रक्त के पान करने की प्रेरणा मानो देखो, वह अपना एक लक्ष्य बना लेता है, और वह अपने उदर की पूर्ति में लगा रहता है, दुश्चरित्रता का साहस उसके हृदय में पनपता रहता है। परन्तु देखो, यह मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को निर्णय करा रहा हूँ, आज के राष्ट्रवाद में, आज के मानव में, धर्म को खिलवाड़ जाना है। यागों को जैसे कर्म को यह कहता है, आज का प्राणी, क्या यह पाखण्ड है परन्तु देखो, जो वह प्रातःकाल से उदय हो करके और सायंकाल तक शैय्या पर विश्राम करने तक, वह मिथ्या उच्चारण ही उच्चारण करता रहता है और वह कहता है कि भई! हम तो महान बनना चाहते है।

पाखण्ड

क्या वह पाखण्ड नहीं है, क्या पाखण्ड की मीमांसा कौन सी, पाखण्ड हम किसे कह सकते है? पाखण्ड हम उसे कह सकते है जो अपनी वाणी से शुद्ध वातावरण नहीं बना सका, पाखण्ड हम उसे कहते है जो वायु मण्डल को विचित्र नहीं बना सकता। आज मैं जब यह दृष्टिपात करता हूँ कि दैविक प्रकोपों से त्राहि त्राहि हो ही है, दैविक प्रकोपों से त्राहि त्राहि हो रही है, क्यों हो रही है? उसका मूल कारण क्या है? महाराजा अश्वपति का राष्ट्र था, महाराजा सुखस्ति का राष्ट्र था, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव उन राष्ट्रों में प्रायः अपना गमन करते रहते थे, जहाँ रेवक मुनि और ज्ञानश्रुति महाराजा मनु वंश की चर्चाएं आती है, वहाँ जब प्रजा चाहती थी, समय पर वृष्टि होती थी, प्रजा का विनाश

नहीं होता था, यह ऐसा क्यों क्योंकि राजा के राष्ट्र में चरित्र होता था। और जहाँ राजा ही प्रातः से ले करके सायं काल तक मिथ्या का उसने लक्ष्य ही बना लिया हो, तो यह कैसे राष्ट्र पवित्र बनेगा। मैं आज इस सन्दर्भ में विशेष चर्चा, पूज्यपाद गुरुदेव को मैं वर्णन कराना नहीं चाहता हूँ मेरी तो केवल एक ही कामना रहती है। हे राजा! तेरे राष्ट्र में रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए, यदि रूढ़ि रहेगी तो तू अपने राष्ट्र की कदापि भी ऊँचा नहीं बना सकता। अब तो मेरे प्रभु से एक ही याचना रहती है, पूज्यपाद गुरुदेव से भी प्रार्थना करता रहता हूँ, हे भगवन! यहाँ पर महापुरुष, भगवान राम जैसी पुनीत आत्मा का अवतरण होना चाहिए, जिससे यह समाज में महानता और शान्ति की स्थापना हो, जिस राजा के राष्ट्र में प्रत्येक प्राणी देखो, चिन्तित हो, प्रत्येक प्राणी दूसरों को हनन करने में लगा रहने वाला हो, तो ऐसा राष्ट्र पवित्र नहीं कहलाता।

दैविक प्रकोपों में राष्ट्र

मानो देखो, यहाँ प्रत्येक वाणी चिन्तित है। मानो एक मानव द्रव्यपति है, वह भी चिन्तित है। द्रव्य से हीन भी चिन्तित, मध्यम प्राणी भी चिन्तित है। और राष्ट्र, जो अपने को नायक कहते है वह भी चिन्तित है। परन्तु यह तो चिन्ता का क्षेत्र, एक नरक राष्ट्र बन रहा है। इसको हम स्वर्गमयी राष्ट्र नहीं कह सकते, क्योंकि देखो, जहाँ प्रत्येक प्राणी चिन्तित है जहाँ प्रत्येक प्राणी देखो, अपनी पद लोलुपता से चिन्तित हो रहा है, आभा उसकी वायुमण्डल में जा रही है, आभा उसकी दैविक प्रकोपों पर जा रही है परिणाम यह होता है, कि दैविक प्रकोपों में, आज का राष्ट्र त्राहि त्राहि हो रहा है। समाज में त्राहि त्राहि हो ही है, इसका मूल कारण क्या है? हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मैंने तो इतना ही जाना है, क्या

यह प्रत्येक प्राणी जो चिन्तित हो रहा है इसका एक ही मूल कारण है।

मैं आज विशेष चर्चा देने नहीं आया, मैं यह उच्चारण करने आया हूँ, हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! जहाँ हमारी यह आकाशवाणी मानो प्रदीप्त हो रही है, हे प्रभु! यागां ब्रह्म लोकां देवत्वाम मैं आज यज्ञमान को एक अपनी वाणी से, एक अपनी वाणी से अब्रीही मानो अपना एक सन्देश अपनी एक वार्ता प्रगट करने आया, हे यज्ञमान! तू अपनी, याग को अपने आत्मिक जैसे बाह्य याग को करता है, द्रव्य का शोधन कर रहा है इसी प्रकार तू अपने आन्तरिक याग को भी पवित्र बना। अपने आन्तरिक याग में भी पवित्रता होनी चाहिए, क्योंकि वह अस्सुतां ब्रीही व्रता वह मानो तेरे द्वारा, तेरा आहार पवित्रता की दशा में जाना चाहिए, क्योंकि मैं प्रायः और विशेष तो चर्चा प्रगट नहीं करूंगा, केवल यही कि मेरा जो अन्तर्हृदय है, आज मैं यज्ञमान को यह उच्चारण करने आया हूँ, कि ऐसे यज्ञमान द्रव्य का शोधन करने वाले हो, उनका आयु दीर्घ होना चाहिए, दीर्घता में रहे, क्योंकि उनकी आयु में, किसी प्रकार की हीनता न हो, उनकी आयु में विशेषता होनी चाहिए, जिससे उनके आगे आने वाला जो सन्तति है अथवा सम्पदा है, वह विचित्र बने। गृह का वायुमण्डल, गृह का वातावरण विशेषकर पवित्र बन जाए। हे ब्राह्मण! हे उद्गान गाने वाले! तेरी आयु में दीर्घता हो, क्योंकि संसार में ब्राह्मण होने चाहिए, यज्ञमान हो तो ब्राह्मण भी हो, ब्राह्मण भी ऊर्ध्वा होने चाहिए, जो अपनी वाणी से वेद का पठन पाठन करने वाले हो, वेद की पाठयक्रम की जो प्रति ध्वनि है, वह पवित्रता में रमण करती रहे, आज मैं इतना ही वाक उच्चारण करने आया हूँ। आज मैं यह कि यज्ञमान तू अपने जीवन को ऊँचा बनाता हुआ, अपनी मानवता को अपनी आयु को दीर्घ बनाता हुआ, मानो देखो, अपने में हर्ष ध्वनि करता रह

यह मेरे हृदय की एक कामना है, मैं सदैव यही चाहता हूँ, कि उनका आयु दीर्घ बने, अब मैं अपने विचारों को, अब मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से जो आधुनिक काल का जो जगत है, उसकी मैंने एक परिस्थिति पूज्य गुरुदेव को वर्णन की है परन्तु देखो, आज का जो वायु मण्डल, आज का जो राष्ट्रवाद है मैंने उसकी संक्षिप्त चर्चाएं दी, मैं आज आधुनिक काल तो बड़ा विचित्र है, मैंने पूज्यपाद गुरुदेव को तो वर्णन कटुता में नहीं किया है, परन्तु यदि मैं उसको एक आभा में उच्चारण करने लगूँ तो पूज्यपाद गुरुदेव मौन हो जाएंगे, मैं विशेष नहीं, परन्तु केवल यही कि राजा के राष्ट्र में रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए, क्योंकि परन्तु वेद का प्रकाश होना चाहिए। और जो धर्म कहता है धर्म मानव का एक है वह धर्म पर चरित्र रहना चाहिए, यह आज का हमारा वाक है मैं अपने विचारों को अब विराम दे रहा हूँ पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा।

पूज्यपाद गुरुदेव मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज मेरे प्यारे! महानन्द जी! ने, अपनी एक दुखदमयी वेदना प्रगट की, यह परम्परागतों से एक वाक उच्चारण करते चले आ रहे है कि राजा के राष्ट्र में रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए, प्रायः वाक बहुत प्रिय है परन्तु समय जैसा भी आता है, क्योंकि धर्म राष्ट्र तक सीमित जब रहता है तो इनका विचार यह बहुत प्रिय लगा, क्योंकि धर्म तो प्रत्येक मानव के हृदय में समाहित रहता है और धर्म को कोई मानव नष्ट नहीं कर सकता, परन्तु दर्शन को कोई नष्ट नहीं कर सकता, दर्शन भी किन्हीं न किन्ही रूपों में रहता है। दर्शन रूढ़ियों से समाप्त नहीं होता है पुत्र! यह भी तुमने जाना होगा। मानो एक धर्म को रूढ़ि बना लिया जाता है, परन्तु मानव जो दर्शन है, वह उस रूढ़ि से पार हो जाता है। रूढ़ि पिछले भाग में रह जाती है और धर्म उससे ऊर्ध्वा में मानो दर्शन उससे

ऊर्ध्वा में चला जाता है। जैसे विज्ञान है, विज्ञान धर्म से लुप्त नहीं होता, कोई रूढ़ि से लुप्त करना चाहे, परन्तु विज्ञान मानव का जन्म सिद्ध अधिकार होता है। एक बिन्दु से मानव के मस्तिष्क का विकास होता है। मानो देखो, उसकी रचना होती है, एक वट वृक्ष है, उस वट वृक्ष का एक अङ्कुर है मानो देखो, उसका एक बीज रूप है और जब पुत्रों! देखो, उसके आंगन से विश्लेषण करने वाला उसका वृक्ष बनाता है तो उसका वह दर्शन है, वह रूढ़ि से बीज तक सीमित नहीं रहता, वह ऊपरी भाग चला जाता है, वृक्ष बन जाता है। उस वृक्ष की आभा को कोई नष्ट नहीं कर सकता। तो इसीलिए पुत्र! यह कोई वाक नहीं, समय आता रहेगा वह समय दूरी नहीं है, जब प्रत्येक मानव अपने मानव दर्शन के ऊपर विचार विनिमय करेगा और जहाँ तक राष्ट्रवाद का सम्बन्ध है, राष्ट्र में वह दूरी नहीं है जब कोई महापुरुषों का जन्म होता रहता है, वह राष्ट्र को उत्थान करने के लिए आते है, परन्तु देखो, यह तो समय समय पर होता रहता है यह कोई चिन्ता का विषय नहीं, महान महान रहता है, पवित्र पवित्र रहता है रूढ़ि रूढ़ि मानो देखो, रूढ़ि रूढ़ि से सम्बन्धित हो करके वह नष्ट हो जाती है। यह आज का वाक समाप्त, आज के वाक जैसा मेरे पुत्र ने कहा है यज्ञमान के सम्बन्ध में मैं भी सदैव यही चाहता हूँ कि वास्तव में जीवन याग हो और मस्तिष्क में सुन्दरवाद हो और अपने जीवन को याग में ले जाए और देखो, आयु में दीर्घता और महानता हो इसके साथ वाक अब समाप्त होने जा रहा है। ओ३म्

15 २७ १० १९७९

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस

मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव की परमपिता परमात्मा का प्रतिभा का वर्णन किया जाता है अथवा उस मेरे प्यारे! प्रभु की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि जो सर्वत्र ओत प्रोत है हमने बहुत पुरातन काल में तुम्हे यह निर्णय देते हुए कहा था कि वह जो परमपिता परमात्मा है वह इस सर्वत्र जगत का नियन्ता है क्योंकि उसी की आभा है जो सर्वत्रता में ओत प्रोत है हमारे यहाँ भिन्न भिन्न प्रकार के विचारक हुए हैं, और उनमें कुछ ब्रह्मवेत्ता भी हुए हैं, जिन ब्रह्मवेत्तओं ने ब्रह्म के सम्बन्ध में नाना प्रकार की उड़ान उड़ी हैं क्योंकि मन का स्वभाव है, जब वह मानवीय दर्शन पर चिन्तन करने लगता है और ब्रह्म के सम्बन्ध में उड़ान उड़ने लगता है तो मानो जहाँ तक प्रकृति का तन्तु रहता है अथवा तन्तु रहता है वहीं तक वह उड़ान उड़ता रहता है।

परन्तु जहाँ प्रकृतिवाद क्योंकि हमारे यहाँ मन को प्रकृति का एक तन्तु माना गया है प्रकृति का सूक्ष्म स्वरूप माना गया है, इसीलिए इसमें विभक्त क्रिया विशेष कहलाई जाती है। परन्तु जब ब्रह्म के ऊपर विवेचना करने लगता है, तो मुनिवरों! देखो, यह अन्तिम चरण में जा करके मौन हो जाता है, क्यों मौन हो जाता है? क्योंकि जहाँ तक इस विभक्त और वह समूह कृति वन्धनं मानो वहीं तब यह अपनी उड़ान उड़ता रहता है तो आज मैं पुत्रों! मैं तुम्हें मन के सम्बन्ध में कोई अपना गम्भीर विचार विनिमय अथवा विचार देने के लिए नहीं आया आज का हमारा वेदमन्त्र वेद की तरंगे क्योंकि उसके ऊपर उड़ान उड़ना हमारा कर्तव्य है प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही, उस ब्रह्म के सम्बन्ध में उड़ान उड़ता रहा है और इस विज्ञान के सम्बन्ध में क्योंकि विज्ञान मानव का मौलिक गुण माना

गया है प्रत्येक मानव विज्ञान में पंहुचना चाहता है आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता भी इस विज्ञान के मार्ग से ही मानो देखो, आत्मा के स्वरूप को जानने का प्रयास करते हैं। अपने में ही संसार को दृष्टिपात करना चाहते हैं और उन्होंने अपनी उड़ान भी उड़ी हैं इस प्रकार की, परन्तु उस परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में भी वह विज्ञानमयी स्वरूप माना गया है क्योंकि विज्ञान उसका आयतन है अथवा वह उसका गृह है जैसे मानव कहता है कि मेरी जो घ्राण है, वह किससे सुगन्धित पदार्थों को अपने में धारण कर रहा है परन्तु वह जो घ्राण है वह उसका आयतन माना गया है अथवा उसका सदन माना गया है वह उसी में रमण करता रहता है, क्योंकि वह उसका गृह है और जो गृह नहीं होता मानो उसका सदन गृह नहीं बन पाता तो मेरे प्यारे! मानव वाणी के क्षेत्र में प्रवेश करता है प्रत्येक इन्द्रियों के विषयों में प्रवेश करता है तो मानो दार्शनिकों ने मानो दर्शन करने वालों ने अपना स्वतः जिसने दर्शन किया है वह मेरे प्यारे! देखो, उस प्रभु के आयवर्तम् एक बिन्दु पर चला जाता है और बिन्दु पर जा करके वह अपने को केन्द्रित करता हुआ अन्त में मुनिवरों! देखो, मौन अवस्था को प्राप्त हो जाता है क्योंकि वहाँ वाणी का विषय नहीं रह पाता जहाँ तक हम इस चेतना प्रकृतिवाद में उड़ान उड़ते रहते हैं वहाँ तक तो हमारी उड़ान उड़ी ही जाती है उसमें हमें कोई संदेह नहीं होता जब संदेह नहीं होता तो उसमें विचार विनिमय और उसकी आभा में हमारे में कोई अन्तर्द्वन्द्व भी नहीं रहता।

तो इसीलिए मेरे पुत्रों! मैं आज तुम्हे उन विचारों में भी नहीं ले जाना चाहता हूँ, मैंने तुम्हे बहुत पुरातन काल में ऋषि मुनियों की चर्चाएं की हैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव की भी चर्चाएं की हैं मेरे प्यारे! महानन्द जी! मुझे नाना प्रकार की प्रेरणा भी देते रहते हैं परन्तु उन प्रेरणाओं के आधार पर भी अपना हम विचार विनिमय

करते रहते हैं परन्तु आज का हमारा विचार क्या कह रहा है आज मैं पुत्रों! तुम्हें एक ऋषि के द्वार पर ले जाना चाहता हूँ मैं महर्षि उद्दालक गोत्र के ऋषियों की चर्चा करता रहता हूँ शाण्डिल्य गोत्रीय हरितत गोत्रीय नाना ऋषि हुए हैं हमारे यहाँ उद्दालक गोत्रीय जो ऋषि हुए हैं उद्दालक गोत्र का जो निकास हुआ है वह हरितत गोत्रों से हुआ और हरितत गोत्रों का निकास दद्दड़ीय गोत्रों से हुआ है, द्दडीय गोत्रों का जो निकास है वह श्वेतकृतिभा गोत्रों से उसका निकास हुआ और श्वेतकृतिभा जो गोत्र है उसका निकास है ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से माना गया है परन्तु मैं गोत्रों में तुम्हे ले जाने नहीं आया हूँ केवल विचार यह प्रगट करने के लिए आया हूँ परिचय देने के लिए आया हूँ व्याख्याता नहीं हूँ व्याख्या नहीं देने आया हूँ केवल परिचय देने के लिए आया हूँ।

यज्ञ तरङ्गों में सूक्ष्म विचारों की गति

मेरे प्यारे! मैंने बहुत पुरातन काल में महर्षि श्वेतकेतु मुनि की चर्चाएं की थी श्वेतकेतु मुनि महाराज एक समय अपने आसन पर विद्यमान थे और आसन पर विद्यमान हो करके वह कुछ विचार विनिमय कर रहे थे उसके पश्चात वह याग करने लगे जब याग करने लगे और याग में जो नाना प्रकार के पदार्थ वह देवताओ को प्रदान करने लगे अथवा हूत करने लगे तो मेरे प्यारे! उसमें से सप्तजिह्वा वाली जो अग्नि थी उस सप्तजिह्वा वाली अग्नि में वह नाना प्रकार की तरंगे उत्पन्न होने लगी अब मुनिवरों! देखो, ऋषि अपने मनस्तव और प्राणतव दोनों को एक सूत्र के मनके बना करके मुनिवरों! देखो, वह ध्यानावस्थित हो गएं और ध्यानवस्थित हो गए तो जो अग्नि की तरंगो में जो सूक्ष्म

तरंगे उत्पन्न हो रही थी उन तरंगो को वह प्राण और मन की उन धाराओं से अनुभव करने लगे मेरे प्यारे! देखो, उन तरंगो में शब्द गति कर रहा है उन तरंगों में जो सूक्ष्म विचार हैं, वह द्यौ लोक को गति कर रहे हैं अब मुनिवरों! देखो, ऋषि यह विचारने लगा क्या मुझे तो कुछ करना चाहिए। मेरे प्यारे! हमारे यहाँ प्रत्येक मानव कहता है कि विवेक होना चाहिए प्रत्येक मानव कहता है कि वैराग्य होना चाहिए।

वैराग्य

मैने बहुत पुरातन काल में वैराग्य की एक विवेचना तुम्हें प्रगट की थी, वैराग्य कहते हैं, हम जिस सूक्ष्म स्वरूप को अपनाना चाहते हैं, जिसमें व्यापकवाद है, जिसमें बुद्धि के सूक्ष्म तन्तु, ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होने लगते हैं। जिसमें मानव, मस्तिष्क में जो ग्रन्थियाँ होती हैं, वह मस्तिष्क की ग्रन्थियाँ स्पष्ट हो जाती हैं। मानो जो ज्ञान की कुञ्जी है, जो ज्ञान की एक धारा है, तो मुनिवरों! देखो, उन धाराओं को वह व्यापकवाद विशाल ज्ञान से सूक्ष्म जो ज्ञान है, जो विज्ञान है, प्रभु का दिया हुआ इस आभा में ओत प्रोत हो रहा है। उससे मानव के मस्तिष्क की ग्रन्थियाँ स्पष्ट हो जाती हैं, और मानव के मस्तिष्क की जो ग्रन्थियाँ हैं, उनका समन्वय मेरे पुत्रों! देखो, इस वायु में क्या, अग्नि की धाराओं में क्या, जल की तरंगों में क्या, मेरे पुत्रों! देखो, अन्तरिक्ष में वह तरंगे तरंगित करने लगता है। आज मैं तुम्हे एक ऐसे विशाल वाक प्रगट कराने आया हूँ, तो मैंने तुम्हे बहुत पुरातन काल में वह वाक प्रगट किए आज पुनः से मुझे वह स्मरण आ रहे हैं। क्योंकि प्रकरण यह कह रहा है, आज मैं निर्गुण और सगुण के सम्बन्ध में तो विवचेना आगे कुछ वेद के मन्त्र में आयेंगें, आगे कुछ विवेचना उस वेदमन्त्रों को आधार पर किसी काल

मे करूंगा।

मन प्राण की एकाग्रता से स्वयं का बोध

आज तो केवल तुम्हे यह उच्चारण करने आया हूँ क्या आज हम मानो हमारे हृदय की, हमारे मस्तिष्क की ग्रन्थियाँ कैसे स्पष्ट होती हैं और कैसे मानो वह द्यौ में, आभा में गति करने वाली हो जाती हैं मुनिवरों! देखो, आज मैं तुम्हे एक आश्चर्यजनक चर्चा प्रगट करूंगा मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हे निर्णय भी दिया था आज भी मैं वह श्वेतकेतु मुनि महाराज ने जो अपना अनुभव किया है उस अनुभव की चर्चा प्रगट कर रहा हूँ मेरे प्यारे! देखो, जब वह इस याग के द्वारा अपने को मुनिवरों! देखो, उसमे संलग्न कराने लगे और मुनिवरों! देखो, प्राण और मन की दोनों की दोनों को एक सूत्र में लाते हुए अनुभव करने लगे मानो देखो, वह उस मन और प्राण की दोनों की धुकधुकी से ही मुनिवरों! देखो, ब्रह्मरन्ध्र में गति आने लगती है, वह जो ब्रह्मरन्ध्र में गति आ जाती है। वह जो मस्तिष्क में सूक्ष्म तन्तु हैं, अथवा सूक्ष्म जो धाराएं है, वे ग्रन्थियाँ स्पष्ट हो करके, उनका ऊर्ध्वा मुख हो जाता है, और ऊर्ध्वा मुख हो करके, मेरे प्यारे! देखो, जितना भी मण्डल है, क्योंकि जो बाह्य, जैसे हमारे अन्तर्हृदय में मुनिवरों! देखो, चित्त नामक एक स्थान है, ऐसे एक बाह्य जगत में भी चित्त है। मानो वह जो चित्त में, और मुनिवरों! देखो, इन ग्रन्थियों के स्पष्ट ऊर्ध्वा मुख होने से, बाह्य चित्त उस योगेश्वर के, उस योगी के सम्मुख आ जाता है। मुनिवरों! और वह जो जन्म जन्मान्तरों के जो चित्त में संस्कार होते हैं, उनका, चित्रण देखो, उस वहाँ महर्षि को होने लगता है कौन से ऋषि को होता है? जो मेरे प्यारे! मन और प्राण दोनों को एक सूत्र में ला करके और मुनिवरों! देखो, मनो ब्रह्मणा व्रताम् देखो, वह ब्रह्मरन्ध्र के जब धुकधुकी लगती है और देखो,

उसकी कृति में हो जाती है। मस्तिष्क की ग्रन्थियाँ ऊर्ध्वा मुख मानो ऊर्ध्वा मुख को प्राप्त हो करके और यह जो मण्डल हैं यह जो आकाश गंगाए हैं जो मैंने इससे पूर्व काल में तुम्हे वर्णन की हैं इनसे उनका मुनिवरों! देखो, अरबों खरबों तरंगे उत्पन्न हो करके उनका उपप्रीत बन करके, मुनिवरों! देखो, उनकी धाराएं, एक आभा में परणित होते हुए, मेरे प्यारे! आन्तरिक चित्त और बाह्य चित्त का दोनों का समन्वय हो करके दोनों का मिलान हो करके करोड़ों करोड़ों जन्मों के संस्कार मुनिवरों! देखो, उनका योगी बन करके, अपना मिलान करके बेटा! मन और प्राण को, क्योंकि मन का ही वह मण्डल कहलाया जाता है। वह चित्त भी मन का ही मण्डल है, परन्तु देखो, उसी चित्त के मण्डल में, जो जन्म जन्मान्तरों को करोड़ों करोड़ों जन्मों के संस्कार हैं मेरे पुत्रों! उनका स्पष्टीकरण क्या, उनका चित्र उनके चित्र आने प्रारम्भ हो जाते हैं। उनके सूक्ष्म चित्र बन जाते हैं।

मेरे प्यारे! देखो, चित्र और वह क्योंकि सूक्ष्मतम माने गएं हैं, जैसे मुझे स्मरण है, एक समय बेटा! देखो, श्वेतकेतु मुनि के द्वार पर महर्षि सामभूक ऋषि महाराज, शाण्डिल्य आ पंहुचे, शाण्डिल्य मुनि और वह दोनों एक स्थली पर विद्यमान हो करके अब मुनिवरों! देखो, जो मानव का चित्रांग ग्रहा एक परमाणु होता है परमाणु को मुनिवरों! देखो, उनका विभाजन किया जैसे यह सृष्टि का मण्डल बना हुआ है, जैसे आकार वाला, यह सृष्टि का मण्डल है, उस सर्वत्र एक ही बेटा! परमाणु मे उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड का चित्र उन्हें दृष्टिपात हो रहा है। तो पुत्रों! मैं तुम्हे आज एक सूक्ष्मतम रहस्य में ले जाने के लिए, मानो कुछ आभाएं प्रगट कराने के लिए आया हूँ, तो मुनिवरों! देखो, वह जो परमाणुवाद का विभक्त करना, यह सब योगी जानता है और योगी यह जानता है, कि हमारे चित्त में जो संस्कार हैं, जन्म

जन्मान्तरो के उनको कैसे हम मानो देखो, अग्नि में दग्ध कर सकते हैं। वह कैसे वह अग्नि में दग्ध हो सकते हैं। और वह कौन सी अग्नि है।

मेरे प्यारे! वह मन और प्राण के संधर्ष से एक मानो एक अग्नि उत्पन्न होती है, एक धारा उत्पन्न होती है उन धाराओं में मेरे पुत्रों! देखो, बाह्य चित्त में साक्षात होने पर मानव की आभा अक्रित बन जाती है। मानो एक किरण्ड अस्तुत बन जाती हैं। तो मेरे पुत्रों! वह जो स्रोत है वह वास्तव में एक चिन्तन और मनन का विषय बन जाता है।

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हे एक भी और वाक प्रगट कराऊंगा मेरे प्यारे! जब महर्षि श्वेतकेतु मुनि मानो देखो, उद्दालक गोत्रीय ऋषि थे, मुनिवरों! देखो, एक समय वह, अपने यहाँ विद्यमान हो करके, अब मुनिवरों! देखो, परमाणु, वह जो चित्र बन करके अन्तरिक्ष में और आभा में गति कर रहे थे, द्यौ लोक में जो, चित्र बन करके जा रहे थे मानो उनका दिग्दर्शन करने लगे जब वह दिग्दर्शन करने लगे, तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने एक यन्त्र का स्थूल निर्माण किया। उन्हीं परमाणुओं को जान करके, एक यन्त्र का निर्माण किया। उस यन्त्र का निर्माण करके, मेरे पुत्रों! यन्त्र में वे सर्वत्र मानो देखो, अपने नाना जन्म जन्मान्तरों के तो संस्कार वायु में, बाह्य जगत में, चित्त में विद्यमान थे, उन चित्रों का मानो देखो, यन्त्र में दिग्दर्शन होने लगा। तो मुनिवरों! हमारे यहाँ नाना प्रकार की चित्रावलियाँ होती रही है क्योंकि उसी को हमारे यहाँ वैराग्य कहते हैं। वैराग्य की मीमांसा करते हुए, महर्षि की शाण्डिल्य ने और महर्षि प्रवाहण का दोनों का मन्तव्य एक है मानो देखो, यहाँ रेवक मुनि महाराज ने यह कहा है वैराग्य के सम्बन्ध में, कि मानो इस संसार से, इस सूक्ष्म सूक्ष्म स्थूलता में जो विशेषता में विशेष प्रमाद हैं, आलस्य है मानो जिसमें अन्धकार है इस अन्धकार को अन्धकार से

उदासीन होने का नाम हमारे यहाँ वेद और वैराग्य माना गया है। क्योंकि इससे हमें उदासीन होना है, उदासीन कैसे हुआ जाता है? वैराग्य कैसे प्राप्त होता है? वैराग्य प्राप्त होता है जब मेरे प्यारे! ऊर्ध्वा में विचारों को मानव बना लेता है अथवा विज्ञान में ले जाता है और मृत्यु उसके सम्मुख रहती हैं और अन्त में मृत्यु को भी वह अपने में समावेश कर लेता है। तो मुनिवरों! देखो, उससे वैराग्य की स्थिति प्राप्त हो जाती है। उसे हमारे यहाँ वैराग्य कहते हैं। वैराग्य की मीमांसा करते हुए और भी नाना ऋषियों ने अपना मन्तव्य दिया है।

मुझे स्मरण है महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज से जब एक समय बेटा! पणपेतु मुनि महाराज की कन्या, मुनिवरों! देखो, शमम् ब्रव्हे लोकाम् महर्षि पणपेतु मुनि महाराज की कन्या शबरी जब उनके द्वार पर पंहुची, क्योंकि शबरी वैज्ञानिक थी, शबरी योगेश्वर थी। मानो योग की आभा में सदैव रमण करती रहती थी। तो मुझे स्मरण आता रहता है मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था, जब मुनिवरों! देखो, त्रेता के काल में, राम के हृदय में यह जिज्ञासा उत्पन्न हुई, क्या मैं रावण को विजय करना चाहता हूँ। तो भारद्वाज मुनि ने यह कहा था शबरी से हे शबरी! यह जो मेरा विज्ञान का सर्वशः कोष है यह राम को प्रदान कर देना चाहिए। क्योंकि राम के द्वारा अयोध्या की कोई सेना नहीं हैं, न मानो कोई भी उनकी सेना शक्ति है, क्योंकि विज्ञान की कोई शक्ति नहीं और रावण के द्वारा विज्ञान की नाना रूपों में, शक्ति भासती रहती हैं।

तो मुनिवरों! देखो, उस समय पणपेतु मुनि महाराज की कन्या ने यह कहा कि प्रभु! यह विज्ञान का कोष, न अर्पण कीजिए। उन्होने कहा राम को प्रदान करना नहीं चाहिए क्योंकि रावण का सर्वत्र जो कुटुम्ब है वह आपसे शिक्षा पाता रहा है। क्योंकि आप से वह विज्ञान में रत्त रहा है। उन्होंने कहा नहीं विज्ञानां

ब्रह्म लोकां विज्ञान का यह अर्थ नहीं हैं क्या विज्ञान एक राष्ट्रवादी बन जाए, विज्ञान एक मानो देखो, मर्यादा को समाप्त करने लगे, विज्ञान में आ करके मानो मृत्यु के आङ्गन में चला जाए, उसको अज्ञान आ जाए, यह विज्ञान नहीं कहता। विज्ञान यह कहता है कि भौतिक विज्ञान है आध्यात्मिक विज्ञान दोनों के समन्वय करने का नाम मानो देखो, पराकाष्ठा के विज्ञान को जानना है। मेरे प्यारे! देखो, भारद्वाज मुनि महाराज ने यह उच्चारण करके देखो, शबरी को बाध्य कर दिया। महर्षि पणपेतु मुनि महाराज की कन्या सर्वत्र कोष को ले करके उन्होंने उड़ान को भंयकर वनों मे जा करके, अर्पित कर दिया।

तो बेटा! मैं इस साहित्यिक चर्चाओं में जाना नहीं चाहता हूँ, विचार यह दे रहा था मुनिवरों! देखो, भारद्वाज मुनि महाराज ने आध्यात्मिकवाद के सम्बन्ध में, विवेक के सम्बन्ध में यह कहा है क्या विज्ञान और परमाणुवाद आध्यात्मिकवाद मे देखो, इसका विशेष समन्वय होता है यदि इसका समन्वय हम नहीं कर पाते, तो हमारा विज्ञान एक सूक्ष्मतम माना गया है। तो मुनिवरों! आओ, मैं तुम्हे आज श्वेतकेतु मैं देखो, शाण्डल्यं ब्रह्मे कृतं देवाः मुनिवरों! देखो, ऋषियों के द्वार पर ले जा रहा था। कौन ऋषि है? मानं कृति मानो श्वेतकेतु मानो देखो, उद्दालक गोत्रीय कहलाते थे उद्दालक गोत्र का ऋषि उड़ान उड़ रहा है, क्या उड़ान उड़ रहा है वह परमाणुओं का विभाजन करने में लगा हुआ है परमाणुओं को मानो देखो, ऊँची आभा में सृष्टि का दिग्दर्शन कर रहा है तो मुनिवरों! देखो, उसके पश्चात वह उन यन्त्रों के द्वारा उस चित्रावली के द्वारा अपने चित्रों को बाह्य जो चित्र बना हुआ है। मानव उनका दिग्दर्शन कर रहा है, दिग्दर्शन करता हुआ मेरे प्यारे! देखो, उसी में विचारता है क्या मैं पितर लोक में भी जाना चाहता हूँ, अब मेरे पुत्रों! देखो, वह पितर

लोकों में जाता है, अपने जो महापिता, पड़पिता मुनिवरों! देखो, उनका यन्त्रों में चित्र आ रहा है। उनका यन्त्रों में चित्र आ रहा है, मानो देखो, उस चित्रावली में चित्र आ रहा है। वही ऋषि अपने में चित्रण कर रहा है, अपने पिता महापिताओं के दर्शन कर रहा है। मेरे प्यारे! उन्हें एक समय अपने मानो देखो, सत्रहवें महापिता का एक वस्त्र प्राप्त हो गया, और उस वस्त्र पर मुनिवरों! देखो, एक रक्त का बिन्दु था उस रक्त के बिन्दु को ले करके वह जानना चाहता था कि रक्त का बिन्दु हैं, परन्तु यह वृद्ध हो गया है मैं इसी आभओं में जाना चाहता हूँ तो मेरे प्यारे! उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया और यन्त्र का निर्माण करके उस यन्त्र में मुनिवरों! देखो, रक्त के बिन्दु को दृष्टिपात करने लगा तो मुनिवरों! देखो, उस रक्त के बिन्दु से जो सत्रहवें महापिता थे उस एक ही रक्त के बिन्दु से बेटा! देखो, जिसका वह रक्त का बिन्दु था उस प्राणी का उस सत्रहवें महापिता का उस यन्त्र में साक्षात्कार उसे यन्त्र में उसे दिग्दर्शन हो रहा था। तो बेटा! मैं तुम्हे विज्ञान के युग में आज ले जोने के लिए आया। विज्ञान कितना आभामयी कहलाता है।

परन्तु ऋषि उसी को कहते है जो मेरे प्यारे! भौतिक विज्ञान को आध्यात्मिकवाद से समन्वय करता है। यदि वह इसमें ही रत्त हो गया है। परमाणुवाद, अणुवाद नाना प्रकार के अणुओं में संलग्न हो गया है। तो मुनिवरों! देखो, वह आध्यात्मिकवाद से उसका समन्वय नहीं कर सकता। तो विचार क्या मेरे पुत्रों! देखो, कोई भी मानव, कोई भी मानो देखो, उस महान आनन्द को प्राप्त करना चाहता है, तो मुनिवरों! देखो, इस परमाणुवाद को जानना, इसमें वैराग्य उत्पन्न करना, मेरे प्यारे! देखो, उसको वैराग्य कहते हैं। जो मानो इस बाह्य जगत को इस विलासिता के जगत को दृष्टिपात नही कर रहा है, वह केवल उसके मस्तिष्क की जो

ग्रन्थियाँ हैं वह इतनी स्पष्ट हो गई हैं, क्या वह मुनिवरों! देखो, वह ध्रुवा को दृष्टिपात ही नहीं कर रहा है। वह ऊर्ध्वा में अपनी आभा में, अपने को ले जाना चाहता है। मेरे प्यारे! देखो, वही योगी जब यह विचारता है कि एक रक्त के बिन्दु से ही मानो देखो, यह आभा मुझे उत्पन्न हो रही है अब मेरे प्यारे! देखो, शब्द में जो तरंगे ओत प्रोत हो रही हैं उन तरंगों में चित्र विद्यमान हैं, मानो अपने पिता, महापिता, पड़पिता पचासवें महापिता का दर्शन बेटा! अपनी चित्रावलियों में कर रहा है जब कर रहा है करता हुआ वैसे ही अपने जन्म जन्मान्तरों को जो चित्र मानो बाह्य चित्त में जो संस्कार विद्यमान हैं। उन्हीं को संस्कारित कहते हैं बेटा! उनको संग्रह करके वह उन यन्त्रों में दृष्टिपात कर रहा है मेरे प्यारे! उनको देखो, ध्यानावस्थित हो करके वह मन और प्राण को दोनों को मुनिवरों! देखो, दोनो का समन्वय करके और त्रिवेणी स्थली पर जा करके और मुनिवरों! देखो, ज बवह ब्रह्मरन्ध्र मे धुकधुकी लगाता है। तो मेरे प्यारे! यह सर्वत्र जो आभामयी जगत हैं, वह नाना प्रकार के परमाणुवाद को जगत है बेटा! वह स्पष्ट हो जाता है और स्पष्ट हो करके मुनिवरों! देखो, वह मौन हो जाता है। वह ही संसार में, जितना भी भौतिकवाद हो, स्थूलवाद है, वह इसको दृष्टिपात नही कर रहा है। वह मानो उड़ान उड़ रहा है, कर्मण ब्रीव्ही कृता वह कर्म यह नहीं है क्या अश्वान वृत्ति कृति लोका मेरे प्यारे! वह योगी दूसरो को चित्र, दृष्टिपात करके, यह अनुभव करता है, क्या यह प्राणी यह संस्कार इस प्रकार के हैं और इस प्रकार का कार्य वह कर सकता है।

मेरे पुत्रों! मुझे स्मरण है यह विद्या हमारे यहाँ, परम्परागतों से, ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में नृत्त करती रही है। एक समय, मेरे प्यारे! देखो, पिप्लाद मुनि के आश्रम में, जब पिप्लाद मुनि को बाल्यकाल में,

मुनिवरों! पिता ने यह कहा हे पुत्र! तुम ब्रह्मवेत्ता बनो। मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मवेत्ता बनने के लिए, पिप्लाद मुनि के हृदय मे यह पिपासा जागरूक हुई, जब चिन्तन किया, तो यह विचार आया कि मैं पिता की आज्ञा का पालन ही क्यों करूं? मेरा तो कर्तव्य है मुझे तो ब्रह्मवेत्ता मुझे बनना है क्योंकि ब्रह्मचारी प्रवाहण गृति लोकाः मैं तो मानो ब्रह्मवेत्ता बनना चाहता हूँ, यह सर्वत्र जगत तो ब्रह्म का ही है, और मैं उसकी सृष्टि में हूँ, मैं उसके दिवस और रात्रि में हूँ। मानो देखो, मुझे उसमें में जाना है यह तो मेरा मौलिक कर्तव्य है, यह तो मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है।

प्रभु के राष्ट्र में

जब पिप्लाद मुनि के हृदय में यह पिपासा पितरों के कथनानुसार हृदय में समाहित हो गई। समाहित हो जाने के पश्चात, मेरे पुत्रों! देखो, वह त्रेतकेतु ऋषि के द्वार पर पंहुचे। त्रेतकेतु ऋषि महाराज मेरे प्यारे! मुद्गल गोत्रीय कहलाते थे। त्रेतकेतु ऋषि के द्वार पर, जब पिप्लाद जा पंहुचे, तो पिप्लाद मुनि उनके चरणों में ओत प्रोत हो गएं। तो त्रेतकेतु ऋषि महाराज मेरे प्यारे! नेत्रों से प्रत्येक इन्द्रियों के विज्ञान को जानते थे। परमाणुवाद को जानते थे, मस्तिष्क में किस प्रकार की आभा थी, उसको जानते थे। विचारों में, जो सुगन्धि उत्पन्न हो रही थी उसको जानते थे। मेरे प्यारे! उन्होंने जब पिप्लाद मुनि ने कहा कि महाराज! मैं ब्रह्म जिज्ञासु हूँ, मैं आपकी शरण में आया हूँ, तो त्रेतकेतु मुनि ने मुनिवरों! देखो, उसके मस्तिष्क का अध्ययन किया। देखो, रात्रिवत समाधि में तल्लीन हो गएं, समाधि में मेरे प्यारे! देखो, जब उन्होंने मन और प्राण को दोनों को, एक सूत्र में ला करके और ब्रह्मचारी के मस्तिष्क को अध्ययन किया। ब्रह्मचारी के अन्तःकरण को दृष्टिपात किया, और उन्होंने यह विचार लिया कि इसे

विवेक उत्पन्न हो गया है। इस एक विशेष धाराएं एक मानो आभा उत्पन्न हो गई है ब्रह्म की जिज्ञासा में, क्या अपने को ब्रह्म में दृष्टिपात कराना चाहता है, और ब्रह्म को अपने में दिग्दर्शन करना चाहता है, उसी समय, मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने, त्रेतकेतु ने, ब्रह्मवेत्ता उच्चारण करके मुनिवरों! देखो, उस ब्रह्मचारी को सम्बोधित किया। और सम्बोधित, जब ब्रह्मवेत्ता कहा तो वह ब्रह्मचारी प्रसन्नयुक्त हो गया और महर्षि पिप्लाद मुनि महाराज, को बेटा! कौन नहीं जानता? महर्षि पिप्लाद मुनि महाराज को, कौन नहीं जानता, वह कितने मानो ब्रह्मवेत्ताओं में मानो देखो, ब्रह्मनिष्ठ कहलाते थे। मेरे प्यारे! देखो, वह ज्ञान में आध्यात्मिकवाद को और भौतिकवाद का दोनो का समन्वय करना जानते थे। वह जो समन्वय होता है वही एक जीवन है। मेरे प्यारे! वही प्रभु के राष्ट्र में पंहुच जाना है।

ब्रह्मचारी की सुयोग्यता का बोध

तो परिणाम एक समय त्रेतकेतु के यहाँ देखो, महर्षि सामभूक ऋषि महाराज का पुत्र श्वेधानित मेरे प्यारे! जब उनके द्वार पर पंहुचा, तो त्रेतकेतु ने देखो, समाधिष्ट हो करके, उस ब्रह्मचारी के अन्तःकरण को दृष्टिपात किया। उन्होंने कहा हे ब्रह्मचारी! तुम ब्रह्मवेत्ता के सुयोग्य नहीं हो, मानो तुम सुयोग्य नहीं हो, जाओ तुम अध्ययन करके आओ, मेरे प्यारे! देखो, वह ब्रह्मचारी चरणों को स्पर्श करके देखो, अध्ययन करने कि लिए देखो, अध्ययनशाला में चला गया। परिणाम मेरे प्यारे! देखो, योगी यह जानता है, योगेश्वर को यह विद्या होनी चाहिए। यह विद्या उसके मस्तिष्क मे आ जाती है, क्या यह ब्रह्मचारी इसके योग्य है, अथवा नहीं हैं हम यह नहीं जानते क्या एक ब्रह्मचारी हमारे से

बनता है एक ही को बनाना है एक ही को हमे दोनो विज्ञान का समन्वय कर देना है। उसी नामोकरण होता चला जाएगा। परन्तु देखो, जहाँ नाना आभाओं में रमण करना है।

मानव का लक्ष्य

मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हे विशेष चर्चा प्रगट करना नहीं चाहता हूँ, मुझे स्मरण आता रहता है, मानो देखो, ऋषि मुनियों का जीवन, मैं बहुत समय से बेटा! इसकी प्रतीक्षा कर रहा था क्या मैं इन विषयों के ऊपर अपनी विवेचना प्रगट करूं। आज मैं कोई विशेष चर्चा तुम्हे देना नहीं चाहता हूँ, विचार यह देने के लिए आया हूँ विचार क्या परिचय देने के लिए आया हूँ क्या प्रत्येक मानव प्रत्येक देव कन्याएं प्रत्येक मेरा प्यारा ऋषि मण्डल प्रत्येक ब्रह्मचारी अपने को मानो देखो, ब्रह्म में और ब्रह्म को अपने में दृष्टिपात करने के लिए आया है और यही मानव के इस संसार में आने का एक लक्ष्य है क्योंकि वह द्रव्यपति बन जाए परन्तु द्रव्य में भी अपने में मानो देखो, आभा में ही रहने दे क्योंकि द्रव्य का लोकां वह लोकों में पंहुचाने वाला नहीं होता वह केवल निकृष्ट ऐश्वर्य में ले जाने वाला होता है। परन्तु जहाँ जब आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करता है। मेरे प्यारे! वहाँ उसे सर्वश सम्पदा प्राप्त हो जाती है। वह वास्तव में सम्पदा है, उस सम्पदा को अपनाना है, जिस सम्पदा को मेरे प्यारे! ऋषि मुनि अपनाते चले आए।

आज मैं तुम्हें वहीं ले जा रहा हूँ अपने विषय से दूरी न चला जाऊं मेरे प्यारे! कौन मेरे प्यारे! उद्दालक गोत्र में जन्म लेने वाले श्वेतकेतु मुनि महाराज जब अपने आश्रम में अध्ययन कर रहे थे, विज्ञान का अध्ययन कर रहे थे, तो मेरे प्यारे! देखो, वह इस परमाणुवाद में गति करते हुए अपने मस्तिष्क को प्राण और मन की आभा

को धुकधुकी लगा करके बेटा! जब ब्रह्मरन्ध्र की पंखुड़ियां गति करने लगती है। तो मेरे प्यारे! देखो, इस ब्रह्मरन्ध्र के ऊर्ध्वा भाग में, एक पिपाद स्थान होता है, और उस पिपाद स्थान में अमृतमयी होता है मेरे प्यारे! जब प्राण और मन की धुकधुकी इस ब्रह्मरन्ध्र में लगती है इसकी पंखुड़ियां गति करने लगती हैं जब गति करती है, तो मुनिवरों! देखो, उनमें से परमाणु झरने प्रारम्भ होते हैं उस पिपाद स्थान में से परमाणु जब झरते हैं, तो बेटा! योगी उस सोमरस को पान करता है उसको सोमरस कहते हैं वह सोमरस को पान करता है और सोमरस को पान करके बेटा! वह मग्न हो जाता है, आनन्दित होता है, वह आभा में गति करने लगता है। मानो वह लोक लोकान्तरों को अपने मे दर्शन करता है क्योंकि पिण्ड और बह्माण्ड दोनो को एक सूत्र में ला देता है।

मेरे पुत्रों! जब पिण्ड और ब्रह्माण्ड में कोई अन्तर्द्वन्द्व उसके लिए नहीं रहता, तो मेरे प्यारे! वह इस संसार को अपने में दृष्टिपात करता है वह अपने में ही क्योंकि वाणी अग्नि का स्वरूप बन जाता है। मेरे प्यारे! घ्राण, वायु का स्वरूप बन गया, श्रोत्र दिशाएं बन गई, शब्द बन गया, मेरे प्यारे! यह जो त्वचा है यह भी वायु में आभायित हो गया, तो मेरे प्यारे! देखो, वायु का स्वरूप बन गया और मुनिवरों! देखो, चक्षु अदिति बन गएं अग्नि रूपांतर मानो देखो, सूर्य बन गया, तो बाह्य ब्रह्माण्ड में और आन्तरिक ब्रह्माण्ड में पिण्ड और ब्रह्माण्ड को दोनो को एक सूत्र में मानो एक आभा में हो गए तो मुनिवरों! देखो, वहाँ अज्ञान क्यों रहने लगा है। वहाँ तो केवल देखो, प्रभु का दिग्दर्शन होता है, वहाँ तो चेतना ही चेतना में रमण करता है। मानो देखो, जो सृष्टि के प्रारम्भ में, मानो देवता अपनी अपनी स्थली पर विद्यमान हो गएं। मेरे प्यारे! देखो, वाणी अग्नि का रूप बन गया और नेत्र, अपना अदिति

अधिपथ्य उसको स्वीकार कर लिया, और मुनिवरों! देखो, श्रोत्र वाक अन्तरिक्ष में अन्तिग्रित हो गएं मानो देखो, दिशाओं में इसकी आभा परणित हो गई, और वायु त्वचा में प्रवेश कर गया मानो देखो, यह सब देवता अपनी अपनी आभा में, ज्ञानेन्द्रियों में प्रवेश कर गया। अब मुनिवरों! देखो, जब यह सङ्कीर्ण बन गया, यह स्वार्थवादी बन करके प्राण को न जान करके, मन का ही उसे समन्वय हो गया, तो मन चित्रण करने लगा। जानाति उनका विभाजन करने लगा, अब यह विभक्त तो हो गएं अब वह प्राण जो इनमें गति कर रहा था, उसको उन्होंने नहीं जाना, वह निःस्वार्थ विचरण कर रहा है, इन्द्रियों में स्वार्थ आ गया, स्वार्थ आते ही सङ्कीर्णता आ गई, सङ्कीर्णता के आ जाने से, मेरे प्यारे! उनमें नाना प्रकार के दोषारोपण आ गएं, अब मुनिवरों! देखो, जब दोषारोपण हो गएं, अब मेरे प्यारे! देखो, योगियों ने यह विचारा, यह पिण्ड और ब्रह्माण्ड तो दोनो एक ही वस्तु हैं। मानो इस पिण्ड को हम ब्रह्माण्ड में, और ब्रह्माण्ड को पिण्ड में इन दोनों का समन्वय करना चाहते हैं, यह कैसे हो सकता है? अब मेरे प्यारे! देखो, ऋषियों ने विचारा चिन्तन और मनन किया। तो मेरे पुत्रों! मनन किया कि यह जो वाणी है यह तो अग्नि का स्वरूप है। इससे तो राष्ट्र के राष्ट्र भी भस्म हो जाते हैं, इससे तो मानव मानव में अग्नि प्रदीप्त हो जाती है। मेरे प्यारे! यह अग्नि का स्वरूप दृष्टिपात कर लिया और मुनिवरों! देखो, स्रोत शब्द का देवता, शब्द उसी में विद्यमान होता है। यह शब्द बन गया। मेरे प्यारे! शब्द की स्थिति अन्तरिक्ष में रहती है। अब मुनिवरों! देखो, अब यह त्वचा यह वायु का रूप बन गया। अब मेरे पुत्रों! ब्रह्मणा प्रवाह वृत्तं देवाः मुनिवरों! देखो, रसना चन्द्रमा बन गई, क्योंकि रस लेने वाली अब मेरे प्यारे! देखो, सर्वत्र प्रत्येक इन्द्रियों का देवता, जब देव रूप बन गया, जब देवता बन गया अब

मुनिवरों! देखो, प्राणं ब्रह्मे लोकं ब्रव्हा मुनिवरों! देखो, प्राण और मन मानो गति करने लगा, प्राण निस्वार्थ हो गया, निस्वार्थ हो करके उनको सबको मानो मुक्ति मानो देखो, मृत्यु से इन्द्रियों को उल्लांघ दिया मृत्यु से दूरी कर दिया तो मेरे प्यारे! देखो, यह इन्द्रियाँ सब मुक्त हो गई, मृत्यु से दूर हो गई। अब मुनिवरों! देखो, यह प्राणं बह्मा यह पिण्ड और ब्रह्माण्ड दोनो का समन्वय हो गया। यह ब्रह्माण्ड की रचना उसी प्रकार की है, और यह पिण्ड भी रचना उसी प्रकार की है पिण्ड और ब्रह्माण्ड में, मुनिवरों! कोई अन्तर्द्वन्द्व नहीं रहा, अब मेरे प्यारे! देखो, वह जो परमाणु थे वह अपनी अपनी आभा में गति करने लगे जब गतिवान हो गएं मानो उसी से इनका स्वभाव मानो देखो, अपनी अपनी आभा में गति करने लगा, अब मुनिवरों! देखो, जैसा भी इनका समं कृति होता रहा, परन्तु ऋषियों ने जबकि यह हमारा भौतिक परमाणु को, हम विभक्त करना जान जाएंगे और उसको आध्यात्मिकवाद से मिलान करने की हममें अक्षमता हो जाती है और पिण्ड और ब्रह्माण्ड को दोनों को हम अन्तर्द्वन्द्व दोनों में स्वीकार नहीं करेंगे, तो निर्गुण और सगुण हमारे समीप आ जाएगा निर्गुण और सगुण का दोनो का आपस में समन्वय अथवा उसकी आभा को उसके पश्चात, हमें उच्चारण करने के लिए तत्पर बाध्यता होनी पडती है, परन्तु देखो, जब तक हमारा मानव जीवन, हम अपने जन्म जन्मान्तरों के, बाह्य चित्त आन्तरिक चित्त दोनो का हम समन्वय नहीं कर पाते, दोनो को एक सूत्र में नही ला पाते, दोनो को हम यन्त्रों के द्वारा, अपने चाहे तो विचारों का यन्त्र बनायें चाहे भौतिक परमाणुओं का यन्त्र बनायें उनका जब तक हम चित्र नहीं ले लेते, उनका जब तक हम चित्रण नहीं करते प्रत्येक इन्द्रियों के विषयों का जो उनका विषय है उनको हम एक सूत्र में नहीं पिरो देते, तब तक हम निर्गुण और सगुण के सम्बन्ध में बेटा! वहाँ हमारे से

प्रसंग मौन होने की परिस्थिति बन जाती है। आज मैं इस सम्बन्ध में विशेषता में जाना नही चाहता हूँ।

विचार विनिमय क्या मेरे पुत्रों! हम अपने में उससे पूर्व अपने जीवन को बहुत व्यापक बनाना है, बहुत महान बनाना है, परमाणुवाद में सृष्टि को दृष्टिपात करना है मेरे प्यारे! इस दिशा में हमें वैराग्य को उत्पन्न करना है निर्मोही बनना है इसके पश्चात हम परमात्मा की सृष्टि को हम जानने के लिए उसको जानने की हमे इच्छा भी नहीं बन पाती क्योंकि वह स्वतः ही हमारे समीप क्योंकि जो संशय में रहता है तो प्रश्न भी उत्पन्न हो जाते हैं तो यह है बेटा! आज का वाक अब मुझे समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएं पुत्रों! कल प्रगट करूंगा आज का विचार विनिमय क्या कह रहा है आज का यह वाक हमें क्या कह रहा है आज मैं बेटा! उड़ान उड़ता हुआ बहुत दूरी चला गया परमाणुवाद में चला गया मुनिवरों! देखो, इसमें मुझे विशेषता में नहीं जाना केवल परिचय देने के लिए आया था मैंने सूक्ष्म सा परिचय दिया विशेष परिचय देने के लिए नहीं आया हूँ विचार क्या आज का वाक अब हमारा समाप्त कल मुझे समय मिलेगा मैं शेष चर्चाएं मैं कल प्रगट करूंगा आजा का वाक समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा।

16 २२ ०२ १९८० सांय प्रभु का साक्षातकार कैसे हो

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव जो इस संसार का नियन्ता है अथवा निर्माण करने वाला है उस महान देव की हम सदैव उपासना करते चले जाएं क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र

उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है जिस प्रकार माता का पुत्र माता की गाथा गा रहा है, जिस प्रकार यह पृथ्वी इस ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है, इसी प्रकार प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है, मानो उद्गान चल रहा है, वाणी से उच्चारण कर रहा है। उद्गार चल रहे हैं, गतिमान हैं, वह गतियां हो रही हैं, जिस गति पर रमण करने के पश्चात मानव के जीवन में एक महानता का एक दिग्दर्शन होता है।

ब्रह्माण्ड में सहायकता

आओ, मेरे पुत्रों! आज मैं तुम्हें विशेषता में नही ले जाऊंगा, केवल यह कि आज का हमारा वेदमन्त्र हमें क्या उच्चारण कर रहा था, यहां नाना ऋषियों की वार्त्ताएं स्मरण आती रहती हैं। परन्तु प्रत्येक वेदमन्त्र की आभाओं के ऊपर विचार विनिमय जब करने लगते हैं, तो प्रायः ऐसा दृष्टिपात होने लगता है, जैसे हम परमपिता परमात्मा की महान राष्ट्र में विद्यमान हों, जिस राष्ट्र में से हमें कोई द्वितीय रूप नही हमारे जीवन का परिवर्तन कर सकता, इसी प्रकार हमें कुछ ऐसा भान होता रहता है, हमारा अन्तर्हृदय पुकार करता रहता है क्या हमे अपने जीवन में उस अपने प्यारे प्रभु की गाथा का गान गाना ही चाहिए। क्योंकि उसकी गाथाएं गाने से मानव के हृदय में निस्वार्थता, महानता, ओजस्ता, प्रबलता, आत्मीयता का हमें भान होने लगता है और जिस मानव में यह सर्वत्र वस्तुएं होती हैं, वह मानव बेटा! पवित्र बन जाता है। मैं आज तुम्हें ऋषि मुनियों के द्वार पर नही ले जाने चाहता हूँ, केवल विचार यह चल रहा है कि हमारा एक प्रसंग चल रहा है, और वह प्रसंग है याग के ऊपर बेटा! बेटा! हमारे कल के इस वैदिक साहित्य में वेद की आभाओं में वर्णन किया जा रहा था, क्या सृष्टि के पिता ने परमपिता परमात्मा ने बेटा! यह मानव शरीर का निर्माण किया और इस

मानव शरीर में बेटा! सप्तऋषि है, पांच प्रकार की गतियां हैं, मानो यह मानव शरीर दस प्राणों वाला है और मुनिवरों! देखो, दस होताओं वाला है, होता आहुति दे रहे हैं, याग चल रहा है, सृष्टि के प्रारम्भ में जब मेरे प्यारे! प्रभु ने यह संसार रचा तो यह संसार रूपी यज्ञशाला का निर्माण हुआ कैसा भव्य यह याग है? मेरे पुत्र एक प्राणी प्राणी का सहायक बन रहा है। लोक लोक का सहायक बना हुआ है आज यदि पुत्रों! मैं ब्रह्माण्ड की चर्चा करने लगूं तो ऐसा आश्चर्य आता है कि यह ब्रह्माण्ड उस मेरे प्यारे! प्रभु ने कितना भव्य रूपों में इसको रचा है आओ, मेरे पुत्रों! मैं कहा चला गया हूँ विचार यह चल रहा है क्या एक प्राणी प्राणी का सहायक बना हुआ है गतियां चल रही हैं, प्रणव रमण कर रहा है परन्तु लोक अपनी आभा में रमण कर रहे हैं कैसा आश्चर्य एक दूसरा लोक, लोक से मिलान नही कर पा रहा है, गतियां चल रही हैं नाना आकाश गंगाएं रमण कर रही हैं। इस पृथ्वी पर एक प्राणी, प्राणी को सहकारिता में बेटा! वह कटिबद्ध हो रहा है मानो सर्प से ले करके शरीर क्या मृगराज क्या नाना प्राणी एक दूसरे के सहायक बने हुए हैं।

तो मेरे प्यारे! प्रभु ने कैसी भव्य यज्ञशाला का निर्माण किया है, इस यज्ञशाला को जो जानता है, इसमें जो रत्त हो जाता है वह प्रभु का दिग्दर्शन करता है वही तो प्रभु! का दिग्दर्शन करता है और यदि इसमें वह रत्त नही होता तो मेरे प्यारे! वह मानव देखो, वंचित्त रहता है। प्रभु से, विचार क्या चल रहा था आओ, मेरे पुत्रों! तुम्हें मैं वहीं ले जाना चाहता हूँ। जहां रेवक मुनि आश्रम में नाना ऋषि विद्यमान हैं, रेवक मुनि आश्रम में, बेटा! कौन महर्षि वैशम्पायन, महर्षि प्रवाहण, महर्षि शिलक और दालभ्य, महर्षि सोमकेतु इत्यादि ऋषि मुनि मेरे पुत्रों! विद्यमान हैं परन्तु विचार यह चल रहा है क्या परमपिता परमात्मा का साक्षात्कार किया

जाएं मेरे पुत्रों! विचार यह चल रहा है वैशम्पायन ने यह प्रश्न किया, ऋषि मुनियों से क्या महाराज! क्या मैंने भौतिकवाद को दृष्टिपात किया है मानो वेद का मन्त्र कहता है रथं दिव्यां देव प्रमाणां रथं यज्ञमाना यज्ञमान का रथ बन करके द्यौ लोक को जा रहा है परन्तु उसका मैंने साक्षात्कार उद्दालक गोत्र के ऋषि के द्वार पर मैंने किया है उद्दालक गोत्रीय ऋषि मेरे प्यारे! श्वेतकेतु ने यह दृष्टिपात कराया अपने पितरों के दर्शन कराएं। परन्तु उसके पश्चात भी मुझे शान्ति प्राप्त नही हुई क्योंकि जितना यह भौतिकवाद है जो परमाणुओं की गति पर अपना नृत्त कर रहा है और उसके राष्ट्रीयता अभिमान उसमें पिरोया हुआ है, तो मुनिवरों! देखो, उससे मानव को सन्तुष्टि नही होती किसी भी काल में नही हुआ करती क्योंकि विज्ञान तो ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में रमण करता रहता है और अपनी इन्द्रियों के ऊपर अनुसन्धान करता रहता है, क्योंकि जितना विज्ञान है संसार का वह सर्वत्र विज्ञान मानव की इन्द्रियों में समाहित रहता है। इसीलिए हमारे यहां, वह जो सूक्ष्म जो इन्द्रियों का विषय है, उन्हीं विषयों को एकत्रित किया जाता है, और उनसे मुनिवरों! देखो, आध्यात्मिक यज्ञमान याग करने वाला, उस साकल्य की आहुति देता है। और वह साकल्य क्या है? इन्द्रियों का विषय है। रूप, रस, गन्ध, स्पर्श मानो उनमें समाहित हो रहा है। यही उनका विषय कहलाता है इस विषय की यदि मैं व्याख्या करने लगूं तो बेटा! मैं नेति नेति उच्चारण करूंगा। नेति में पंहुचने के लिए तत्पर हो जाएंगें। परन्तु इस विषय को मैं विशेष गम्भीरता में तुम्हें नही ले जाना चाहता हूँ। केवल विचार विनिमय क्या है हमारा? हम यह उच्चारण कर रहे हैं कि जब इन्द्रियों पर मानव का अनुशासन हो जाता है, इन्द्रियों के ऊपर मानव अपने अधिपथ्य करने लगता है तो मुनिवरों! देखो, जो मानव नेत्रों से दृष्टिपात

करना चाहता है। जिसको वह दृष्टिपात नही किया जाता। क्योंकि मानव को विचारना है, कि हमारे में जब यह प्रश्न करता हूँ, अपने मानो आभा में रमण हो करके, कि यह हमारे नेत्र किसके प्रकाश से प्रकाशित रहते हैं। तो उत्तर प्राप्त होगा क्या सूर्य है तो सूर्य का विज्ञान उसमें समाहित हो गया। मेरे प्यारे! जब प्रश्न किया जाता है, क्या यह मानव किसके प्रकाश से प्रकाशित होता है? तो उत्तर प्राप्त होता है, तो चन्द्रमा का विज्ञान समाहित हो गया परन्तु जब प्रश्न किया जाता है कि यह नेत्र किसके प्रकाश से प्रकाशित हैं? तो उत्तर मिलता है कि नाना तारामण्डलों के। तो नाना तारामण्डलों का विज्ञान समाहित हो जाता है मेरे पुत्रों! आगे पुनः प्रश्न कर रहा है, क्या नेत्र किसके प्रकाश में? तो उत्तर देता है अग्नि का प्रकाश। तो अग्नि की जितनी तरंगें हैं, चाहे वह सूर्य मण्डल में हैं, चाहे वह बृहस्पति में है, चाहे वह मङ्गल में हैं, चाहे वह आरुणि में हैं, चाहे वह सौर मण्डलों में गति कर रही हैं परन्तु वह सर्वत्र विज्ञान उसके समीप आ जाता है। मेरे प्यारे! इन्द्रियों में समाहित रहने वाला विज्ञान है। परन्तु उससे प्रश्न किया जाता है क्या किसके प्रकाश में? तो कहता है यहां नेत्रों का विषय समाप्त हो गया है, यहां शब्द का विषय आ जाता है, शब्द के प्रकाश से प्रकाशित हो रहा है सप्तं हिनम् ब्रह्मे जब शब्द नही रहता तो उत्तर देने वाला दे रहा है, क्या आत्मा ब्रह्मणे प्रकाश क्या मानो इन्द्रियों का विषय समाप्त हो जाता है।

आत्मा का साक्षात्कार

अरे, भोले प्राणी जब तू अपनी अन्तरात्मा के नेत्रों के साक्षात्कार नही कर पाता, तो प्रभु! को कैसे साक्षात्कार कर पाएगा। परन्तु देखो, जिस हृदय रूपी गुफा में रहने वाला आत्मा विद्यमान हैं, परन्तु एक दूसरे विज्ञान से गुथा हुआ है, परन्तु रहा यह वाक हम प्रभु

को साक्षात्कार करना चाहते हैं, कैसे कर पायें जब तक हम अपनी आत्मा को साक्षात्कार नही कर पायेंगें वह केवल आत्मा का भी अनुभव का विषय है। और प्रभु का अनुभव का विषय है। नेत्रों से कोई साक्षात्कार नही कर पाया आज तक तो संसार का मानो कोई प्राणी ऐसा नही हुआ रहा यह विज्ञान का विषय प्रत्येक मानव कहता है कि विज्ञान में रमण करना है यह विज्ञान तो एक खिलवाड़ है, प्रकृति का यह विज्ञान क्या है? आध्यात्मिकवेत्ता कहते हैं कि यह तो खिलवाड़ हैं, यह तो हम आत्मा का इन्द्रियों का विषय है। यह जो मानव यह जो ब्रह्माण्ड की पिण्ड की कल्पना करने वाला मानव है, पिण्ड और ब्रह्माण्ड की दोनों की कल्पना करने वाला मेरे प्यारे! देखो, इससे तुम्हें आगे सिद्ध होगा। आगे विचार में आयेगा एक मानव प्राणायाम कर रहा है, एक मानव देखो, प्राण को जान रहा है, हमारे इस मानव शरीर में मेरे प्यारे! दस प्राण है प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान मुनिवरों! नाग, देवदत, धनञ्जय, कुरू कृकल यह दस प्राण कहलाते हैं इस सर्वत्र विज्ञान पांचों इन दसों प्राणों की गतियों में रमण कर रहा है जो मानव के शरीर में निहित रहते हैं, परन्तु देखो, जितना भी प्रकृति का मानो पांचों गतियों में गति करने वाला मानो गतिशील हो रहा है, वह मेरे पुत्रों! देखो, इन्द्रियों में समाहित रहने वाला है। वह इन्द्रियों का विषय है, इन्द्रियों में समाहित रहता है, वह प्रकृतिवाद का मानो वर्णन कर रहा है, वर्णन करता रहता है। परन्तु जहां आत्मा का प्रसंग आता है, आत्म चेतना है, परन्तु इतना उच्चारण कर रहा है, उससे स्वरूप को किसी ने दृष्टिपात नही किया मेरे प्यारे! उसका कैसा स्वरूप है। आत्मा अणु और विभु में दोनों में इसके स्वरूप में वर्णन करने वाले आदि ऋषियों ने बेटा! अपना अपना मन्तव्य दिया है। मुनिवरों! देखो, रेवक मुनि महाराज ने अपना विचार व्यक्त किया और

रेवक मुनि महाराज ज्ञानश्रुति दोनों विद्यमान रहते थे, महाराज ज्ञानश्रुति मग्न हो रहा है, उन ऋषि मुनियों के आभामयी विचारों को श्रवण करता हुआ ऋषि मन मग्न है, विचार में है परन्तु देखो, जिसने राष्ट्र को त्याग दिया, और वह भंयकर वन में आत्म शान्ति के लिए मेरे प्यारे! वह ऋषि के चरणों में है। मेरे प्यारे! देखो, उनका मन्तव्य उनके विचार मेरे प्यारे! क्या है इनके सम्बन्ध में कुछ कुछ सूक्ष्म सूक्ष्म उनके विचार है, रेवक मुनि महाराज ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था, उस समय क्या आज हम प्रभु का साक्षात्कार करना चाहते हैं। प्रत्येक मानव मुझे इस गाड़ी के नीचे विद्यमान हो गया हूँ, मुझे एक सौ एक वर्ष हो गया है, एक सौ वर्ष से मैं तप कर रहा हूँ, और तप किसे कहते हैं? यह उन्होंने अपना मन्तव्य प्रगट किया है, उन्होंने कहा तपं वर्णो ब्रह्मे तपश्चप्रमाणं ब्रीहि लोका वेद का आचार्य कहता है कि रेवक मुनि महाराज जिसको एक सौ वर्ष तक गाड़ी के नीचे विद्यमान हो करके वह तप कर रहा है। परमात्मा को जानना चाहता है, परमात्मा की आभा में उसकी कृति का दिग्दर्शन करना चाहता है। मेरे प्यारे! वह प्रत्येक इन्द्रिय तक बारह बारह वर्षों का तप कर रहा है, जैसा तुम्हें स्मरण होगा महाराज इन्द्र जब तप करने पंहुचे तो मेरे प्यारे! देखो, प्रजापति ने उन्हें उपदेश दिया था और मुनिवरों! उन्होंने कहा था कि यह नेत्र ही ब्रह्मे इसकी पूजा की जाएं मेरे पुत्रों! उन्होंने कहा यह नेत्र तो किसी के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं, आगे उन्होंने कहा कि यह स्वप्न अवस्था ही ब्रह्म है, इसको जानों कायां ब्रह्मणे यह जो शरीर है, यही ब्रह्म है, शरीर से ले करके नेत्रों के स्वप्न और सुषुप्ति के आगे इनका सबका निराकरण करता रहा निराकरण करते करते मेरे प्यारे! जब सबका निराकरण हो गया उस समय महाराजा प्रजापति ने आत्मा का उपदेश दिया, मेरे प्यारे! मैं इस सम्बन्ध में विवेचना विशेष नही देना

चाहता हूँ, केवल क्या रेवक मुनि महाराज ने यह कहा कि मैंने एक सौ एक वर्ष मेरा तप पूर्ण हो गया है।

मेरे बारह बारह वर्षों के कई अनुष्ठान हुए हैं, मानो मुझे अपने मन को पवित्र बनाने के लिए और मन को पवित्र बनाना इन्द्रियों के ऊपर अनुशासन करना, और उस विज्ञान को जानना जो इन्द्रियों में विज्ञान समाहित रहता है, मानो नेत्रों का जो विषय है, वह रूप है, इन नेत्रों से हम बाह्य जगत में रूप को दृष्टिपात कर रहे हैं। यह माता है, महामाता पत्नी इत्यादियों को स्वरूपों का रमण कर रहा हैं। आगे जब और गम्भीरता में जाते हैं, तो व्यापकवाद में जब रूप को जब चिन्तन में लाते हैं, तो इनमें कुछ सार्थकता प्रतीक नही होती। जब कोई प्रतीति नही होती, जब और गम्भीरता में जाते हैं, चक्षुओं के रूपों में तो नाना हम यन्त्रों का निर्माण करने लगते हैं। यन्त्रों के हम सूक्ष्म इस मानो अणुवाद को दृष्टिपात करने लगते हैं, जो हमें कृणि में ही दृष्टिपात आती है परन्तु देखो, बाह्य जगत में हम और जब तप करते हैं, तो मन और प्राण का दोनों का समन्वय करने लगते हैं, तो हम मानो इन्हीं नेत्रों से हम मानो प्रकृति की सूक्ष्म तरंगों को दृष्टिपात करने लगते हैं। परन्तु वह प्राणायाम के द्वारा करते हैं, जब मन और प्राण दोनों का समन्वय होता है, समन्वय हो करके हम सूक्ष्म धाराओं का निरीक्षण कर रहे हैं। परन्तु देखो, यही दशा अप्रतां देवाः हम बाह्य जगत में प्रकृतिवाद में नेत्रों को ले जाते हैं। प्राण को ले जाते हैं, समाधिष्ट हो जाते हैं, समाधिष्ट हो करके मन और प्राण को हम मानो देखो, इस आभा में पृथ्वी के गर्भ में ले जाते हैं, पृथ्वी के गर्भ में जो खनिजों का निर्माण हो रहा है, रत्नों का निर्माण हो रहा है, उस क्षेत्र में ले जाते हैं, यह स्वरूप का वर्णन है। मेरे पुत्रों! यह रूपों का ही वर्णन है, जो पृथ्वी के गर्भ में है, जो सूर्य के गर्भ में हैं, सूर्य की किरणों के साथ मन और प्राण

को मुनिवरों! देखो, आकुञ्चन करा देते हैं। आगे ले जाते है।

अहिल्या उद्धारक भगवान राम

आज मैं तुम्हें योग के सम्बन्ध में नही ले जा रहा हूँ, केवल परिचय देने आया हूँ, और वह परिचय क्या है? मानो इसके नेत्रों के सूक्ष्म स्वरूप का वर्णन है, मेरे प्यारे! जब यह अन्त में अन्तिम चरण में चला जाता है, चेतना के गर्भ में तो ऋषि कहता है, सम्भूतिया आंकुचनं देव प्रव्हा अस्ते मेरे प्यारे! वेद का ऋषि कहता है। ये तो रूप अनन्तता में है, परन्तु उसको आकुञ्चन किया जाएं, तो ऋषि जन बेटा! इसको आकुञ्चन में लाते हैं। आकुञ्चन में लाते है। तो इसी प्रकार वह घ्राण को ले जाते है। सुगन्धि में ले जाते है। वह सुगन्धि कहां तक आती है बेटा! पृथ्वी की गन्ध में ले जाते हैं, जब पृथ्वी की गन्ध में सुगन्ध में ले जाते हैं, मानो इस पृथ्वी का अनुसन्धान करने लगते हैं, घ्राण के द्वारा कौन सी वस्तु कौन सी स्थली पर कौन सा खनिज विद्यमान हैं। कौन सा खनिज कहां प्राप्त होगा? यह पृथ्वी के कणों से बेटा! जो घ्राण के ऊपर अनुसन्धान करने वाला है, उसको जानने लगता है मेरे प्यारे! देखो, उसको जानने लगता है। आयुर्वेद का जो पण्डिता है मानो रूग्ण को उस मानव की दुर्गन्ध सुगन्ध को दृष्टिपात करके मानो उसके रूग्णों का मानो निदान करने लगता है। मेरे प्यारे! देखो, उसके अप्रतों लक्षणों को मानो देखो, सुगन्धि में वर्णन करने लगता है।

मुझे स्मरण है भगवान राम को यह मानो घ्राण इन्द्रिय के ऊपर अनुसन्धान किया जाता है, वह पृथ्वी के कणों को दृष्टिपात करके सुगन्ध से ही निर्णय कर देते थे। क्या इतनी दूरी पर इतना खनिज विद्यमान हैं, मेरे प्यारे! इसीलिए उन्होंने अहिल्या का उद्धार किया, मुझे स्मरण आता रहता है अहिल्या हमारे यहां पृथ्वी

को कहा जाता है, जिस पृथ्वी में अन्न उत्पन्न हो सकता हो, और वह पृथ्वी ऐसे ही हो मानो वीरांगना के रूप में उसकी सुगन्ध के द्वारा इसको मानो राम ने निषाद से कहा इस भूमि में अन्न की स्थापना करो। जहां पृथ्वी को अहिल्या के रूपों में परणित किया है, तो मुनिवरों! देखो, वह भगवान राम को यह ज्ञान और विज्ञान था इस घ्राण के सम्बन्ध में तो मुनिवरों! देखो, ऋषियों ने जब इस घ्राण के ऊपर अनुसन्धान किया, तो इसको भी आकुञ्चन में लाए मानो इसको व्यापक रूप को आकुञ्चन मानो उसको सूक्ष्मतां वृत रूपों में लाने का प्रयास किया इसी प्रकार देखो, श्रोत्रों को किया श्रोत्रों का सम्बन्ध शब्द से है, शब्द का सम्बन्ध अन्तरिक्ष से है, मानो दिशाओं से हैं, और दिशाओं का सम्बन्ध अन्तरिक्ष से कहलाता है।

मेरे प्यारे! देखो, इसके सर्वत्र स्वरूप को जानते हुए हमारे यहां व्यापकवाद में शब्दों में ले गएं। चित्रों में ले गएं मुनिवरों! उनके शब्दों को श्रवण करने लगे मुनिवरों! देखो, ऋषि मुनि जब अनहाद की ध्वनि को श्रवण करने लगते हैं, तो मेरे प्यारे! देखो, मस्तिष्क में हमारे यहां एक ब्रह्मरन्ध्र नाम का स्थल है मानो त्रिकुटि कहलाती है, त्रिकुटि के ऊर्ध्वा भाग में त्रिकोण कहलाता है, त्रिकोण के ऊर्ध्वा भाग में मुनिवरों! देखो, ब्रह्मरन्ध्र कहलाता है। और ब्रह्मरन्ध्र के ऊर्ध्वा भाग में एक पिपाद स्थान होता हैं, और पिपाद स्थान में मुनिवरों! देखो, अमृत होता हैं। योगी जन प्राण और मन की धुकधुकी बेटा! जब पिपाद स्थान पर लगने लगती हैं, उसमें से रसों का झरना प्रारम्भ हो जाता हैं। ब्रह्मरन्ध्र की गति सूत्र बन जाती हैं, और योगी जन बेटा! देखो, उस रस को पान करते हैं, उसको सोमरस

कहा जाता हैं।

व्याकरण की उत्पति

आओ, मेरे प्यारे! मैं तुम्हें योग के विषय में ले गया हूँ, परिचय देने आया हूँ विचार क्या है मानो देखो, उस शब्द को कौन श्रवण कर रहा है, अनहाद किसे कहते हैं? जिसका मेरे प्यारे! स्पर्श ध्वनि कहते हैं, आदि ब्रह्मा ने जब मुनिवरों! देखो, सृष्टि के प्रारम्भ में व्याकरण को जानने का प्रयास किया, तो मुनिवरों! देखो, यह जो अनहाद इसमें जो स्वर ध्वनि होती हैं, इसकी ध्वनि के शब्दों को ले करके इसकी ध्वनि को बेटा! देखो, वह व्याकरण के रूपों में परणित किया है। मेरे प्यारे! इसी से इन्हीं ध्वनि को ले करके मुनिवरों! देखो, इसी से मानव देखो, बाह्य जगत में नाना प्रकार के स्वरों की रचना करता है, व्यंजनों में रमण करने लगता है, मुनिवरों! देखो, उसी ध्वनि को ले करके **वेद के पठन पाठन करने वाले बेटा! जटा पाठ, घन पाठ, माला पाठ, विसर्ग पाठ, उदात्त और अनुदात्त में बेटा! इसको अपने शब्दों में परिवर्तित कर लेते हैं**। यह शब्द कहां से आता है, इसका समन्वय अन्तरिक्ष से रहता है, इसका समन्वय मानव के ब्रह्मरन्ध्र से रहता है।

आत्मा का साक्षात्कार

तो इसीलिए मुनिवरों! देखो, शब्दों का जो समन्वय अथवा सम्बन्ध है, वह ब्रह्मरन्ध्र से कहलाता है। ऋषियों ने विचारा सम्भवितं प्रमाणं ब्रहे आंकुचानम् उन्होंने कहा इसका आकुञ्चन करो। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि मुनियों ने इसको आकुञ्चन किया। आकुञ्चन करके इसको अन्तर्हृदय में ले गए। अन्तर्हृदय रूपी गुफा में इसका अनुसन्धान करने लगे, आगे मेरे प्यारे! देखो, रसना पर चले गएं, रसना में जो नाना प्रकार के स्वादन होते है। मानो कहीं मधु हैं, कहीं मानो कैषला है, कहीं

मानो कटु है, यह मानो देखो, पञ्च रस कहलाते हैं। इन रसों का स्वादन लेने वाली बेटा! कौन निर्णय कर रहा है, वह रसना है, रसना का समन्वय मेरे प्यारे! जलों से होता हैं। यह जल ही नाना प्रकार का रस समाहित रहता है। इन रसों का सम्बन्ध ही मानो चन्द्रमा से होता है, चन्द्रमा से रस आता रहता है, उसको मेरे प्यारे! यह पान करता रहता है। वही रस नाना प्रकार की वनस्पतियों में रहता है, उन्हीं वनस्पतियो को पान करते रहते हैं। उन्हीं रस मेरे प्यारे! नाना प्रकार की औषधियों के रूप में वनस्पतियों में मानो देखो, ऋषि मुनियों ने रसना से ले करके इनको मानो आयुर्वेद का निकास किया है। प्रत्येक मानव वनस्पति को रसना से जान जान करके मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार की औषधियों का निदान किया है, अब ऋषियों ने विचारा सम्भविते प्रमाणं ब्रहे व्रतां आकुञ्चन अस्ति उन्होंने विचारा कि इसको भी आकुञ्चन करो। अब इसको बेटा! आकुञ्चन कर लिया, आकुञ्चन करके इसको भी हृदय में समाहित कर लिया। मेरे प्यारे! जब इसको समाहित कर लिया तो इसी प्रकार त्वचा का आया त्वचं ब्रह्मे राणस्तु वायु में रमण करने वाला बेटा! जो प्राण है इसका समन्वय त्वचा से रहता है, यह त्वचा के ऊपर अनुसन्धान किया और व्यापक रूप में ले गएं। जिसमें विज्ञान था संसार के जितने भी मानो स्पर्श क्रिया हैं, वह अग्नि से ले करके शीतलता क्या जितने भी स्पर्श हैं, वह त्वचा को समाहित हो गएं। मेरे प्यारे! देखो, इसको जाना जानने के पश्चात मुनिवरों! देखो, इन सबको आकुञ्चन की सामग्री बनाई गई, ऋषि मुनियों ने जो आत्मा का याग करने वाले थे, आध्यात्मिक याग करने वाले जो मृत्यु को विजय करना चाहते हैं। उन्होंने बेटा! इसका साकल्य बनाया, सामग्री बनाई, इन सर्वत्र विषयों की और जान करके, साकल्य बना करके मेरे प्यारे! हृदय रूपी यज्ञशाला में आहुति देने लगे। और

वह जो आहुति देने लगे उसमें जो परमानन्द प्राप्त हो रहा था। जिसमें बेटा! जिस पिपासा में यह अन्तरात्मा लगा हुआ है, मानो वह आनन्द की पिपासा में हैं, वह आनन्द मेरे प्यारे! प्राप्त होने लगता है, और वह जो आनन्द है, वह मुनिवरों! देखो, नेत्रों से साक्षात्कार नही किया जाता है। वह वाणी से वर्णन नही किया जाता है। वह अवर्चनीय कहलाता है।

मेरे प्यारे! देखो, वहां उस योगी को जब इन्द्रियों के विषयों का साकल्य बना करके और जब वह तरंगें उत्पन्न होती हैं, आनन्द की उस आनन्द का कोई वर्णन नही कर सकता। मेरे प्यारे! देखो, उस आनन्द में प्रभु का साक्षात्कार होता हैं, यह है बेटा! प्रभु का साक्षात्कार आज जो भी मानव इसमें रमण करना चाहता है। तपस्या करना चाहता है। रेवक मुनि ने यह कहा क्या मैं इस आनन्द के लिए एक सौ एक वर्ष हो गयें हैं, मुझे गाड़ी के नीचे तप करते करते मैं अनुसन्धान कर रहा हूँ, मैंने प्रत्येक इन्द्रिय को व्यापक बनाया है। प्रत्येक इन्द्रिय को व्यापक बना करके आकुञ्चन किया है प्रत्येक इन्द्रियं को मानो साकल्य रूप में बना करके आध्यात्मिक याग क्या मेरे जीवन में अन्धकार न आ जाएं उस प्राणी के हृदय में अन्धकार नही आता परन्तु देखो, वह जो साक्षात्कार का प्रसंग हैं मेरे प्यारे! महानन्द जी! मुझे नाना प्रकार की प्रेरणा देते रहते हैं अथवा प्रेरित करते रहते हैं यह रेवक मुनि महाराज ने कहा कि इस वाणी से हम उसका वर्णन नही कर सकते परन्तु रहा यह कि विज्ञान का वाक है जो भी प्रभु रचित्त वस्तु हैं वह सर्वत्र ऐसी है जो अन्त में वह दृष्टिपात नही आती अन्तिम चरण उसका यही है कि वह उसके हृदय में समाहित रहता है परन्तु जब मानव प्रभु के मानव कण कण में प्रभु को जब दृष्टिपात करता है जब वह सर्वत्र व्यापत रहता है मानो व्यापक है तो व्यापकता का दिग्दर्शन कैसे हो परन्तु देखो, उस व्यापक का

दिग्दर्शन करने के लिए मानव को व्यापक बनना पड़ेगा मानव को व्यापक बनना होगा और व्यापक कैसे जहां भी दृष्टिपात करो प्रभु ही दृष्टिपात आए। अरे, जहां मानव वेद के आचार्यों ने ब्रह्मवेत्ताओं ने कहा की कोई गुफा ऐसी नही हैं जहां वे परमपिता परमात्मा न हो कोई समुद्र की तरंगें ऐसी नही जहां पभु न हो, परन्तु देखो, वह जहां मानव पाप कर्म करने के लिए चलता है, मानो जहां मन जाता है वही परमपिता परमात्मा विद्यमान हैं बेटा! ऋषि मुनियों ने यह कहा कि जब तुम प्रभु को दृष्टिपात करोगे हर वस्तु में दृष्टिपात करोगे तो मेरे प्यारे! वही तो प्रभु! का दिग्दर्शन है वह क्या है? वह दिग्दर्शन है जब यह निष्ठा हो जाती हैं क्या जहां तेरा मन जाता है वहीं प्रभु विद्यमान हैं। तो मेरे प्यारे! उससे प्रबल और प्रभु का दिग्दर्शन क्या हो सकता है? मेरे प्यारे! मानो ब्रह्मणे व्रणा स्वस्त व्रणे प्रत्येक वेदमन्त्र साक्षी है, मुनिवरों! देखो, जो वेदमन्त्रों में कहा गया है, क्या प्रभु का दिग्दर्शन मानो सूर्य है, आज हम सूर्य को नही जान पाते सूर्य का दिग्दर्शन नही कर पाते अन्तर्हृदय में जिस आभाओं को नही कर पाते परन्तु देखो, इनको करना चाहिए दिग्दर्शनता में सूर्य की नाना प्रकार की किरणें हैं। मानो उन किरणों का विभाजन करने से ही ऐसा प्रतीत होता हैं, क्या एक एक किरण ऐसी है, जो कई कई कार्य कर रही है। एक किरण सोम ब्रीहित नाम की किरण कहलाती हैं, मेरे प्यारे! वैज्ञानिकों ने जब उस किरण का विभाजन किया वही किरण मुनिवरों! देखो, माता के गर्भस्थल में बालक को तेजस्वी बना रही हैं। वही किरण है जो पृथ्वी के गर्भ में मेरे प्यारे! देखो, जल को शक्तिशाली बना करके जल का रूपान्तर कर रही है, वही किरण है मेरे प्यारे! देखो, अप्रतां देवाः वही किरण है, जो मुनिवरों! देखो, असुतों में चन्द्रमा के आधारित होती चन्द्रमा को प्रकाशित कर रही हैं, वही मानो देखो, विभक्त होने पर वही परमाणु

रूप बन करके उसको वैज्ञानिक जब अपने में धारण करते हैं, उसको और विभक्त क्रिया में लाते हैं, मानो वही किरणों से ऐसा प्रतीत होता है। किरणों से क्या मुनिवरों! देखो, उसी से परमाणु शक्ति का निकास होता हैं, अणु शक्ति का निर्माण होता है, तो मानो देखो, यह वस्तु सब अग्नि से प्राप्त होती हैं।

विचार विनिमय क्या मैं तुम्हें विज्ञान में भौतिक विज्ञान आध्यात्मिक विज्ञान का समन्वय करना है, आध्यात्मिक विज्ञान का समन्वय करते हुए देखो, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता यही तो चाहता है, और रहा यह कि विज्ञान से प्रभु का साक्षात्कार नही होता, जिन वैज्ञानिकों को नही होता यह विचार का विषय है। जैसे महर्षि रेवक मुनि महाराज आध्यात्मिक और भौतिकवाद के मार्ग से हो करके आध्यात्मिक मार्ग में प्रवेश कर लिया जिन्होंने मानो उन्हें अभिमान नही होता, और जिन वैज्ञानिकों के साथ मृत्यु का भय लगा रहता है। जिन वैज्ञानिकों के साथ राष्ट्रीयता विद्यमान होती हैं, राष्ट्र के लिए अभिमान में आ करके नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करते हैं, मेरे प्यारे! वह वैज्ञानिक कदापि भी प्रभु का साक्षात्कार नही कर पाते, क्योंकि वह उनके अभिमान है, अभिमान है, क्योंकि वह प्रकृति में रत्त रह रहे हैं। उन्हें प्रकृति तक का ही ज्ञान है, परन्तु देखो, वह जो चेतना उसमे समाहित हो रही हैं, उस चेतना के ऊपर जब अनुसन्धान करेंगें और मृत्यु की पिपासा को त्याग देंगें। उस समय बेटा! उन्हें मानो देखो, गम्भीर ज्ञान विज्ञान में जाने का सौभाग्य प्राप्त होगा।

आओ, मेरे प्यारे! इस सम्बन्ध कल मेरे प्यारे! महानन्द जी! अपना कुछ प्रकाश दे सकेंगें, क्योंकि आधुनिक वैज्ञानिकों का विशेषतव महत्व इनके मस्तिष्क में रहता हैं। परन्तु आज का हमारा विचार यह क्या कह रहा है? हमारा यह विचार कहता है कि

रेवक मुनि महाराज ने यह कहा कि प्रत्येक इन्द्रिय के विषय को जानते हुए, उसके विज्ञान को जानते हुए, उसको आकुञ्चन क्रिया में लाना, और मुनिवरों! देखो, उसको अपने में अन्तर्मुखी हो करके अन्तर्ध्यान हो करके मन और प्राण को दोनों का समन्वय करते हुए मानो देखो, प्रभु की आभा को दृष्टिपात किया जाता है। यहां जब प्रभु को कण कण में प्रत्येक वस्तु रचना जितनी हैं, उसमें प्रभु का दिग्दर्शन किया जाता हैं, वह उसका साक्षात्कार कहलाता हैं। परन्तु देखो, हम अपने मुखारबिन्द को दृष्टिपात नही करते, परन्तु दूसरों को दृष्टिपात करते रहते हैं। यह प्रभु का कितना दिग्दर्शन है, मेरे पुत्रों! मानो अपने को ही दृष्टिपात नही करते, अरे, यहां अपने को जानना है, अपने को जान करके इसको प्रभु ने निर्माण किया उसका साक्षात्कार भी करना चाहिए, परन्तु जब अपने को ही नही जानते, अपनी ही अन्तरात्मा का जो हृदय रूपी गुफा में विद्यमान रहने वाली चेतना है, जिसके कारण यह मानव का शरीर चेतनित बना हुआ हैं, जिसके न रहने पर यह मानव का शरीर शव रह जाता हैं। और जिसके रहने पर यह चेतना में रहता है, अरे, उस चेतना को जानने का प्रयास करो, उस चेतना को जानना है, उस चेतना के मूल में रमण करना है, मेरे प्यारे! देखो, पिता, महापिता, पड़पिता सर्वत्र मानो यह संसार चला जा रहा है। मेरे प्यारे! देखो, उस अन्तरात्मा को जानना जिसके कारण से यह मानव उनकी स्मरणता है, और न रहने पर स्मरण शक्ति भी समाप्त हो जाती हैं। यह चित्त के मण्डल में चली जाती हैं। मेरे प्यारे! इस विज्ञान को मैं कहां तक वर्णन करता रहूँगा, यह तो विज्ञान है, यह तो महान ज्ञान है। दर्शनों की भाषा में मैं कल उच्चारण करूंगा, यह आत्मा का कैसे विकास होता हैं, और कैसे विस्तार होता है, कल मैं बेटा! एक वेदमन्त्र की व्याख्या कर पांऊगा। आज का विषय हमारा समाप्त

होने जा रहा है। कल मुझे समय मिलेगा कल मैं इसके सम्बन्ध में और क्या प्रभु का साक्षात्कार मानो कैसे होता है? यह तो मैंने कुछ सूक्ष्म सा परिचय दिया, कल मुझे समय मिलेगा कल इसके ऊपर और विचार होगा, कल दर्शनों की मन और प्राण के विभक्त और एक सूत्र में लाने का कुछ प्रयत्न किया जाएगा, आज का वाक समाप्त अब वेदों का पठन पाठन। दिनांक २२ ०२ १९८०।

17 १३ ०९ १९८१

... देखो, विभानव ऋषि महाराज पाराशर गोत्र में उत्पन्न हुए। जब पाराशर गोत्र में उनका जन्म हुआ, तो बेटा! वह ब्रह्म जिज्ञासु थे, तो मुनिवरों! वह भ्रमण करते हुए, द्वार पर पंहुचे, महर्षि रेवक ने कहा, तुम्हारा आगमन कैसे हुआ? ऋषिवर! हे भगवन! आप से ब्रह्माणी महाराज से कहा क्या महाराज। आप का जो उच्चारण करने की जो मानो प्रतिक्रिया है, उसने मेरे हृदय को विदिर्ण कर दिया है। मेरे हृदय को उसने प्रभावित कर दिया है आपकी ब्रह्मामयी जो शब्दावली है, वह मेरे अन्तःकरण में समाहित हो गई है। मेरे प्यारे! मैं इसीलिए मैं ब्रह्मवेत्ता इसीलिए जब मैं अपने पितरों के द्वारा विद्यमान हो करके शिक्षा अध्ययन करता था तो ब्रह्मवेत्ता की जो उन्होंने मीमांसा की हैं वह मीमांसा मुझे स्मरण है उस आधार पर मैंने आपको ब्रह्मवेत्ता कहा है। मैं आपके चरणों ओत प्रोत हो करके मैं ब्रह्म की आभा को जानना चाहता हूँ।

मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने यही वाक उन्हें देखो, उच्चारण कर दिया क्या वाणी से उद्गीत गाते रहो मेरे प्यारे! देखो, वह पाराशरी ऋषि मानो देखो, ब्रह्म की गाथा गाने लगा मानो उद्गीत गाने लगा तो मेरे प्यारे! देखो, जो विशुद्ध रूपों से वाणी से उद्गीत गाता है ध्वनि उच्चारण होती रहती है। वही ध्वनि मेरे प्यारे! देखो, वायुमण्डल को पवित्र बना देती है, वायुमण्डल कैसे

पवित्र होता है यह वाणी के द्वारा होता है। मेरे प्यारे! देखो, यह उसके मनों का आन्तरिक जगत का भाव है जब तक आन्तरिक जगत में अहिंसा न आ जाएं मानो हिंसा का भाव समाप्त न हो जाएं तब तक वह ब्रह्म जिज्ञासु अथवा ब्रह्म की आभा में रमण करने के लिए तत्पर नही होता और द्वितीय जो स्वरूप है। मेरे प्यारे! वह देखो, यह मनशा है और वाचा कहलाता है वाचा में हमारी वाणी में मधुरपन होना चाहिए। हमारी वाणी में मानो व्यवहार में हमारे में कुशलता होनी चाहिए जिससे व्यवहार कुशल प्राणी मेरे प्यारे! देखो, साधारण ही उन लोकों को विजय कर लेता है।

मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहां वाणी को उच्चारण करने वाला मुनिवरों! देखो, दूसरों के हृदयों को परिवर्तित कर देता है। एक मानव अशुद्ध उच्चारण कर रहा है परन्तु शुद्ध रूप का वाचन उसके समीप आता है तो उसका हृदय उसका वाक भी स्वीकार कर लेता है कि वास्तव में तू अशुद्ध है, मेरे प्यारे! एक कर्मणा होता है, परन्तु यह मेरे प्यारे! देखो, हिंसा नही होनी चाहिए। यह मनसा वाचा कर्मणा मानो देखो, इन तीन रूपों से हिंसा प्रारम्भ करता है मेरे प्यारे! अहिंसा में भी तीनों रूप आ जाते हैं इन तीन रूपों से मानो के कर्म में, मानव के वचन में, और मुनिवरों! देखो, आन्तरिक जगत में तीनों भाव एक रूप होने चाहिएं तो मुनिवरों! देखो, जैसे महर्षि रेवक मुनि महाराज के की मैं विवेचना कर रहा था मानो उनके जीवन में सदैव देखो, एष्णाओं को त्याग करके वह ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होने लगे वह उसका इतना मनोमयी अगम्य बन गया अगम्य ज्योति उनके हृदय में समाहित हो गई मेरे प्यारे! वही एकान्त गाड़ी के नीचे अपने जीवन को व्यतीत करते थे एक सौ एक वर्ष तक वह गाड़ी के नीचे वह मुनिवरों! देखो, तपस्या करता रहा है। उद्गीत गाता रहा मेरे प्यारे! प्राणी आते उनके उद्गीत को श्रवण करके अपने आश्रम को

प्रस्थान करते मेरे प्यारे! एक मानव ही नही मानो देखो, प्राणी मात्र उस उद्गीत को श्रवण करता रहता था।

तो आओ, मेरे प्यारे! मैं आज तुम्हें जैसे दूरी ले गया कल मैंने तुम्हें यह उच्चारण किया था यही शब्द है मेरे प्यारे! जिसके ऊपर हम संयम करते हैं विचार करते हैं तो विज्ञान के युग में भी प्रवेश करते हैं बेटा! मैंने तुम्हें उच्चारण किया था उद्दालक गोत्र ऋषियों का मैंने तुम्हें आह्वान कराया कि वार्ता प्रगट कराई उद्दालक गोत्र का ऋषि बेटा! एक समय याग कर रहा था जब वह याग कर रहा था तो यज्ञशाला में आहुति दे रहा था जब यज्ञ में अग्नि होत्र अग्नि के मुख में आहुति दे रहा था तो प्रार्थना कर रहा था वेद का ऋषि हे अग्ने! हे अग्ने! तू देवताओं का मुख है तू सूक्ष्म बना करके मानो देवताओं को तू प्रसाद रूप में प्रदान कर देता है तू प्रसाद देता है हे अग्नि देव! मानो तू भरण करता है तू सूक्ष्म बना देता है। मानो सूक्ष्म रूप बन करके वह पर्जन्य रूपों में कहीं परिवर्तित हो जाता है। कहीं वायुमण्डल में, मिश्रित हो करके मानो देखो, वह सुगन्ध के रूप को, वह दुर्गन्ध के रूप को धारण कर लेता है। तो मुनिवरों! देखो, वेद का ऋषि प्रार्थना कर रहा था है हे अग्निदेव! तू मेरा देव है आज मैं तेरे ऊपर अनुसन्धान करूंगा, अवश्य करूंगा तो बेटा! वह पति पत्नी दोनों याग कर्म करते थे, क्योंकि पति पत्नी का कर्तव्य है, संसार में एक दूसरे के मानो देखो, सहकारिता में, सहयोगिता में, अपने को समाहित कर देने का नाम ही पति पत्नेश्वर माना गया है। वेद का ऋषि कहता है दोनों का स्वरूप एक दूसरे में आभायित रहना चाहिए और मानो वेद की आख्यिकाओं को विचारना चाहिए देव पूजा के याग होने चाहिए जिससे देव पूजा, जो देवता हमारे अन्तर्हृदय में कार्य कर रहे हैं जिससे हमारा जीवन संचालित हो रहा है यह देवता पौष्टिक हो करके, हमारे जीवन के साथी बन करके एक

महान और पवित्रता को धारण कराने वाले हों।

तो मेरे प्यारे! देखो, यह ऋषि मानो यह याचना कर रहा था, कि पति पत्नी दोनों ने यह विचारा एक समय पत्नी देवी ने कहा कि हे प्रभु! मेरी इच्छा है यह कि चलो हम भयंकर वनों में याग करेंगें, अग्नि की पूजा करेंगें, और मानो देखो, अग्न्याध्यान करके जिसकी हम पूजा करेंगें, उसको हम देव पूजा कहेंगें, तो मेरे प्यारे! देखो, यह उद्दालक गोत्रीय मुनिवरों! देखो, उनकी पत्नी दोनों भयंकर वन में जा पंहुचें एक उनके द्वारा कामधेनु गऊ थी उस कामधेनु के दुग्ध के द्वारा मानो देखो, नाना साकल्य एकत्रित करके, वह याग कर्म करते थे। जब वह याग करने वाले बनें तो मुनिवरों! देखो, वह याग में जो सुगन्धि परमाणु उत्पन्न होता था, उन परमाणुओं के ऊपर, वह अनुसन्धान करने लगे। एक समय बेटा! अनुसन्धान करने लगे, आगे करते रहे, तो मुनिवरों! देखो, उन्हें कहीं एक परमाणु क्योंकि उनकी यौगिक दृष्टि भी सूक्ष्म थी, हमारे यहां जब यौगिक दृष्टि सूक्ष्म बन जाती है, उसके लिए कोई परमाणु असम्भव नही रह जाता। वह उसके गर्भ में प्रवेश कर जाता है। उन्होंने परमाणुओं के गर्भ में प्रवेश किया, तो मुनिवरों! देखो, उन्हें सृष्टि का चित्र उन्हें दृष्टिपात आने लगा। मेरे प्यारे! उन परमाणुओं को, उन्होंने एकत्रित किया, और एकत्रित करके उन्होंने तुनगृत नाम के एक यन्त्र का निर्माण किया, जिसमें वह परमाणु एकत्रित करने लगे, परमाणु जब एकत्रित करने लगे, तो करते रहे, तो बेटा! उन्हीं परमाणुओं के मिलान से कुछ पार्थिव तत्त्व, परमाणुओं का समन्वय किया, और उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया। और उस यन्त्र का जब निर्माण किया, तो बेटा! वह यन्त्र त्रिचिकेतु अमृता नभकेत नाम का वह परमाणु था जिसमें नाद होता था। इसमें मानो शब्द की प्रतिभा उससे उत्पन्न होती रहती है। उस शब्द को जाना, और उस शब्द को जब जाना तो मुनिवरों!

देखो, उसमें नाना प्रकार के शब्दों की आभा, उन्हें प्राप्त होने लगी। जैसे मानव, जब योगाभ्यास करता है। योगेश्वर जो अपने नाद को स्वीकार करता है, जो प्राणों की ध्वनि है मन का समन्वय है मेरे प्यारे! देखो, वह जो ध्वनि है, वह मस्तिष्क के अग्र भाग में ब्रह्मरन्ध्र के ऊर्ध्वा गति से वह नाना प्रकार की ध्वनि उत्पन्न होती है। इसी प्रकार मेरे पुत्रों! देखो, बाह्य जगत वैज्ञानिक को अब देखो, उनमें यन्त्र में ध्वनि आने लगी इस ध्वनि के ऊपर अब मुनिवरों! विचारा कि यह ध्वनि इस प्रकार की है, इसके स्वरूप क्या हैं? अब मेरे एक दूसरे की ... परणित की, तो उसमें मुनिवरों! देखो, ध्वनि थी, उसके स्वरूपों के वह उसके चित्र मुनिवरों! देखो, उस यन्त्र में प्रवेश करने लगे। उसके जब चित्र आने लगे, चित्र आभा में रमण करने लगे तो उन्होंने दृष्टिपात किया, अब मुनिवरों! देखो, उन्हीं के यन्त्र उन्हीं के चित्र उन्होंने यन्त्रों में दृष्टिपात आने लगे। मेरे प्यारे! याग कर रहे है। पति पत्नी यागों को वही स्वरूप यन्त्र में दृष्टिपात आ रहा है। आगे जब उन्होंने अनुसन्धान किया, आगे उन्होंने एक सूत्र निकासी कृतिभा महेतकेतु यन्त्र का निर्माण किया, उस यन्त्र में बेटा! विशेषता आने लगी क्या उन्होंने बेटा! देखो, अपने पितर जन जो वहां नही थे, उनके भी उन्हें दिग्दर्शन होने लगे। तो मेरे प्यारे! उन्होंने विचारा कि यह जो वाणी है, इस वाणी में इतना परमाणु हैं, इस परमाणु के साथ साथ यही परमाणु देखो, जो इतने आकार का शब्द के साथ में, उस मानव का आकार बना हुआ हैं। जैसे मुनिवरों! एक परमाणु हैं, एक परमाणु आभा में रहता है, एक परमाणु त्रिअणुवत में रहता है। तो मुनिवरों! देखो, यह एक परमाणु अरबों परमाणुओं के साथ में, जैसे मधु मक्खी होती है, मधु मक्खी मानो एक उनमें विशेष, जो राजलक्ष्मी होती है, और वह जो राजलक्ष्मी मानो मधु में मानो देखो, वह नाना मक्खियां, उसकी परिक्रमा

करती रहती हैं। राजलक्ष्मी जो मक्खी है, उसके नाना मक्खी गति करती रहती हैं, उतने आकार में करती रहती हैं, इसी प्रकार जैसे एक वाणी का कृत है एक परमाणु व्राण अस्वति है। मेरे प्यारे! अरबों परमाणु उसके साथ में, उसी आकार के भ्रमण कर रहे हैं। नेत्रों के उसी आकार के परमाणु हैं, मेरे प्यारे! स्थूल शरीर जितना भी, मानव का है, उसी स्थूल शरीर के जो परमाणु मानो देखो, एक परमाणु अरबों परमाणु के गति और उतने आकार में वह कर रहे हैं जितने आकार का वह मानव है मेरे प्यारे! एक शब्द उतने ही परमाणु उसमें आकार गति करके बेटा! वह वायुमण्डल में प्रवेश कर जाते हैं। अब वह शब्द मेरे प्यारे! आचार के सहित मानो यन्त्र में उन्हें दृष्टिपात आने लगते हैं जब यन्त्रों में दृष्टिपात आने लगे, यन्त्रों में, मेरे प्यारे! उद्दालक गोत्र में, और भी नाना ऋषि हुए हैं, परन्तु वह विज्ञानवेत्ता हुए है। आध्यात्मिकवाद और भौतिक विज्ञानवेत्ता हुए हैं, उन्होंने भौतिक विज्ञान को, बहुत रूपों से जाना है।

तो मेरे पुत्रों! वह भौतिक विज्ञान को बृहद रूपों से जानते रहे। मेरे प्यारे! कहा जाता है उन्होंने यन्त्रों में बेटा! अपने दसवें महापिता के दर्शन होने लगे, दसवें महापिता कहाँ रहते हैं? वह इस पृथ्वी पर नही हैं। वह पृथ्वी पर नही रहे हैं। परन्तु उनके जो शब्द है, वह अन्तरिक्ष में, मेरे प्यारे! विद्यमान हैं। और वह अन्तरिक्ष में से, मुनिवरों! देखो, वही परमाणु मुनिवरों! देखो, यन्त्रों में, वही शब्द आते हुए, उन शब्दों के साथ में, उनके चित्रों के चित्र आते हुए, दृष्टिपात होने लगे। मेरे प्यारे! देखो, पति पत्नी, एक समय रात्रि का काल था रात्रि काल में उन्हे, एक वेदमन्त्र स्मरण आया, वह पत्नी शाण्डिल्य गोत्रीय थी ब्रह्मवाद में थी, उन्हें एक वाक स्मरण आया मन्त्र त्रिवर्णमः अध्ययनम् देवाः सर्वम् ब्रह्मे अन्तरिक्षां व्रतम् लोकाः सहस्त्राणि आभ्यां पितरश्चम लोकाः मेरे प्यारे! देखो, वह देवी मध्य रात्रि का काल

था, वेदमन्त्र की आख्यिकाएं क्योंकि जो याज्ञिक पुरूष होते है। और जो मन्त्र द्रष्टा होते हैं। जो वेद की ध्वनि को श्रवण करते हैं, अथवा उच्चारण करते हैं, उन्होंने मेरे प्यारे! देखो, रात्रि के मध्य काल में, मेरे प्यारे! वह जागरूक हो करके वेदमन्त्र उनके अन्तःकरण से उपजने लगते हैं, मानो उनमें भाव में वह रत्त हो जाता है, अनुसन्धान करने लगता। मेरी प्यारी मात्र अब्रहे मेरे प्यारे! देखो, अनुसन्धान करने लगती है, और ऋषि से बोली कि हे प्रभु! यह वेदमन्त्र क्या कह रहा है? यह वेदमन्त्र हमें आभा में पंहुचा रहा है प्रभु! ।

पूर्वजों के दर्शन

मेरे प्यारे! अब ऋषि इसके ऊपर अनुसन्धान करने लगा, मेरे प्यारे! उनकी पत्नी भी अनुसन्धान करने लगी। उन्हें विचार आया देवी ने कहा प्रभु! सहस्राणि चित्रश्चम ब्रव्हे यह वेदमन्त्र तो यह कहता है क्या सहस्रों पिता के चित्र आने चाहिए हमें दिग्दर्शन होने चाहिएं। मेरे प्यारे! वह यन्त्रों का आह्वान करने लगे, निर्माण करने लगे, मेरे प्यारे! वह अग्नि देव पूजा नित्य प्रति करते थे, और उसी के द्वारा मुनिवरों! देखो, वह चित्र आते रहते। ऐसा मुझे स्मरण है बेटा! देखो, वह पचासवें महापिता के दर्शन होने लगे। जो अन्तरिक्ष में बेटा! शब्दों की आभा में विद्यमान हैं, उनके चित्र आने लगे, उनका क्रियाकलाप आने लगा, उनके शब्द मेरे प्यारे! देखो, शब्दों में जो शब्दों के गर्भ में जो सारगर्भित विचार थे, वह भी मेरे प्यारे! उन्हें मानो देखो, अक्षरों के रूप में दृष्टिपात होने लगे।

तो मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष मानो विज्ञान के युग में चला गया हूँ, पुत्रों! यह कैसा विशाल विज्ञान? बेटा! वेद कह रहा है वेद कैसी ब्रह्म की गाथा गा रहा है कैसा विज्ञानमयी स्वरूप बन करके मानव को महान बनाने के लिए क्या व्यापकवाद की सामग्री

दे रहा है तो मेरे प्यारे! देखो, जब यह पचासवें महापिता के दर्शन करने लगे एक समय पत्नी ने कहा शाण्डिलय गोत्रीय सोमभानु ने कहा हे भगवन! वेदमन्त्र तो यह कहता है कि और भी हम अग्रणीय बन सकते हैं। हम और भी पितरों के दर्शन कर सकते हैं मेरे प्यारे! जब वेद का ऋषि यह कहता है मन्त्र कहता है चित्रम् देवाहं सहसत्राणि व्रणाम ब्रह्मे पदमश्चम ब्रव्हे व्रतम देवाः वेद का मन्त्र जब यह कहता है प्रभु क्या हम सहस्रों प्राणियो के रक्तों को हमारा यह मानव शरीर का निर्माण हुआ है मानो देखो, हम प्रणालियों में जब जाते हैं मानो देखो, ऐसी सृष्टि के प्रारम्भ से अब तक हम गणना भी नही कर पा सकते तो इससे यह सिद्ध होता है कि वेद आगे के लिए एक मार्ग दर्शन करा रहा है मार्ग पथ का बन रहा है।

तो मेरे पुत्रों! देखो, अनुसन्धान करने लगे वेदमन्त्र को आगे आगे ले करके उसके ऊपर विचार विनिमय मुझे स्मरण है बेटा! उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया जिस यन्त्र का नाम चित्रावली धातु यन्त्र कहते थे। उस यन्त्र मेरे प्यारे! उनके सौवें महापिता के दर्शन होने लगे। तो बेटा! सौवें महापिता के दर्शन कहाँ से हुए? मेरे प्यारे! अन्तरिक्ष में जो शब्द विद्यमान है, उनका जो सारगर्भित विचार है, उसके साथ में जो चित्र है, वह मुनिवरों! देखो, वह अग्नि की तरंगों पर विद्यमान हो करके प्राण ब्रहे वह विद्युत की धाराओं पर विद्यमान हो करके अन्तरिक्ष में समाहित रहते थे मेरे प्यारे! देखो, वह अब यन्त्रों के द्वारा उनका आह्वान होने लगा मुनिवरों! देखो, उनके चित्र आने लगे विचार विनिमय क्या आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नही आया हूँ विचार यह देने के लिए आया हूँ। मेरे प्यारे! देखो, उद्दालक गोत्र में नाना ऋषि हुए हैं मानो वैज्ञानिक हुए हैं मेरे पुत्रों! देखो, जब उन्होंने अनुसन्धान कर लिया चित्रों में दृष्टिपात होने लगे एक समय उनकी देवी ने

कहा प्रभु! यह जो हमने अब तक पुरूषार्थ किया है विज्ञान को जाना है इससे आध्यात्मिकवाद से इसका क्या समन्वय है, क्या सम्बन्ध हैं? प्रभु!।

आध्यात्मिक विज्ञान

मेरे प्यारे! ऋषि पत्नी कहती है इनका समन्वय होना चाहिए। मेरे प्यारे! ऋषि कहता है, हे देवी! यह जो हम याग कर रहे हैं, मानो यह कर्तव्य का, यह देवपूजा कर रहे हैं। इसका मानव दर्शन से, इसका समन्वय है, मानव दर्शन से इसका सम्बन्ध हैं, परन्तु मानव दर्शन में जो चेतना है, उस चेतना में ही मानो देखो, उस चेतना से मानव दर्शन का सम्बन्ध हैं। तो हे देवी! यह जो मानव शरीर में चेतना विद्यमान हैं, और बाह्य जगत का जो भौतिक विज्ञान है, इसका समन्वय ये है, क्या यह विज्ञान हमने जाना है, इतना व्यापक, अपने विचारों को बनाया है, अपने क्रियाकलापों को बनाया है, यह इतना व्यापकवाद बन गया है, क्या इसका जहाँ समापन होगा वहाँ से हम देखो, आध्यात्मिक युग में प्रवेश कर जाएंगें देवी! आध्यात्मिक युग में जब प्रवेश करेंगें आत्म ज्ञान में और आत्म विज्ञान वहाँ से प्रारम्भ होता है, जहाँ भौतिक विज्ञान समाप्त हो जाता है देवी! यह भौतिक विज्ञान यह समाप्त नही हुआ है, जहाँ सौवें महापिता के यन्त्रों के द्वारा हम दर्शन करते हैं जहाँ तक मन की विचार मन की धारा है, मन का विस्तार है, वह सर्वत्र ब्रह्माण्ड मानो एक एक कण कण में सृष्टि का दिग्दर्शन होता ही यह मन की सूक्ष्म धारा है और जहाँ हम विज्ञान में क्योंकि मन का स्वभाव है मन मानो देखो, मन जहाँ जाना चाहता है इसको जाने दिया जाना चाहिए परन्तु देखो, विज्ञान में प्रवेश कर देना चाहिए क्योंकि विज्ञान का एक यह तन्तु हैं क्योंकि प्रकृति का सूक्ष्म तन्तु कहलाता है, और जिसमें अणुवाद है, चित्रवाद है,

परमाणुवाद है यह सब प्रकृति का स्वरूप माना गया है। परन्तु देखो, जब मन की आभा मानो समापन हो जाती हैं वहाँ मानव देखो, बाह्य जगत से मौन हो जाता है और आत्म स्वरूप में अपने में अपने का दिग्दर्शन कर लेता है मेरे प्यारे! उसको आध्यात्मिक विज्ञान कहते हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नही आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ जहाँ भौतिक विज्ञान में प्रवेश होना है वहाँ आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक विज्ञान दोनों का समन्वय करते ही मुनिवरों! देखो, पिण्ड और ब्रह्माण्ड की दोनों की आभा में परणित हो जाना है। आओ, मेरे पुत्रों! आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नही आया विचार यह देने के लिए आया हूँ, क्या प्रत्येक मानव प्रत्येक देव कन्या को विचार विनिमय करना है कि हम प्रभु की आभा में रमण करते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं आओ, मेरे पुत्रों! आज मैं तुम्हें कोई विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने नही आया हूँ आज मैं तुम्हें केवल परिचय देने के लिए आया हूँ और परिचय क्या है कि वाणी पवित्र होनी चाहिए वाणी में महानता होनी चाहिए क्योंकि वाणी ही विज्ञान के युग में कहाँ कहाँ प्रवेश कर जाती है कैसे चित्र आते हैं यह सब विज्ञान का विषय बन जाता है परन्तु देखो, इस मार्ग से देखो, तुम्हें ऊर्ध्वा गति से प्राप्त हो करके अपना मानव दर्शन करना है यह है बेटा! आज का वाक अब मुझे समय मिलेगा मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। आज का वाक समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा। ओ३म् दधिमा रेवं आभ्यां दधि ब्रह्मचरी गातानि गृहिता देवं रथाः ओ३म् सम्व्यापक गृही यशशचाम् रेवं भविता मां ऋषि आप्यां। दिनांक १३ ०९ १९८१।

18 ०० ०० १९८२

आनन्दमयी है मानो देखो, उसके आनन्द को

कोई वर्णन नही कर पाता, उसके प्राप्त होने से जो आनन्दमयी आता है उससे मानव उच्चारण करने में बेटा! असमर्थ रहता है। इसी प्रकार, आज का हमारा यह वाक्, हमें क्या प्रेरणा दे रहा है, कौन से मार्ग के लिए हमें प्रेरित कर रहा है, इसके ऊपर आज हम कुछ सूक्ष्म सा विचार विनिमय करते चले जाएं, मानवीय एक अमूल्य, एक मार्ग है अथवा एक दिशा है। जिसको प्रत्येक मानव अपनाना चाहता है। प्रत्येक मानव के हृदय में, एक आकांक्षा होती है, क्या वास्तव में यह संसार क्या है? यह संसार कैसा अमूल्य है, इसको हम कैसे जान सकेंगें, इसके ऊपर बेटा! मानव मनन करता है, जिस भी काल में वह शान्त मुद्रा में विद्यमान होता है, उसी काल में इस मार्ग को अपनाने के लिए, अथवा चिन्तन करता है। मेरे प्यारे! वह एक मार्ग कौन सा है जिसके लिए वह विचारता है, कि अमूल्य जगत क्या है जिस भी काल में वह विवेक आता है, उसे मानो प्रभु का तो स्मरण आता है, कुछ विच्छेद किए हुए मानो शब्द उसे स्मरण आते हैं, तो वह उस सम्बन्ध में मनन करता है, और मनन करता हुआ, यह विचारता है, हे मानव! मेरा कौन सा स्वरूप है, मैं किस स्वरूप में ऐसा किस काल में, तो मेरे प्यारे! देखो, वह उसकी कल्पना करता है, उड़ान उड़ता रहता है और यह विचारता है, कि मेरी जो कल्पना का माध्यम है, मैं जो कल्पना कर रहा हूँ मानो यह कल्पना किसी काल में साकार रूप और अथवा यथार्थ रूप को धारण कर जाएं तो मेरा अहोभाग्य होगा। मेरा जीवन मानो सफल हो जाएं।

तो मुनिवरों! देखो, हमारा जो मार्ग है, वह केवल वही है जो महापुरूषों का मार्ग कहलाता है, हमारा कोई नवीन मार्ग नही हैं, किसी भी मानव का, नवीन मार्ग नही, संसार में कोई वस्तु नवीन नही रहती, क्योंकि प्रत्येक वस्तु बेटा! वृद्धपन में क्या, सदैव एक

रस रहने वाली, न वृद्ध होती है, और न नवीन होती है। नवीन तो वह वस्तु होती है, जो आज मानो पूर्व किसी काल में नही थी, और जो पूर्व काल में भी थी वर्तमान में भी हैं, मानो भविष्य में भी रहेगी, वह तो एक रस रहने वाला एक मार्ग है। तो मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक मानव इसके ऊपर अध्ययन करता रहता है अथवा मनन करता रहता है, ये विचारता रहता है कि मेरा जो जगत है, मेरे मनन करने का जो मानो एक मार्ग है वह सदैव एक रस रहने वाला है, और वह एक रस ही मेरे गति होनी रहनी चाहिए, जैसे बेटा! सूर्य प्रातःकाल में, आज भी उदय हो रहा है, और आज से करोड़ो वर्षों पूर्व भी, प्रातःकालीन उदय होता था, तो एक रस, मेरा मार्ग, एक रस मेरी प्रतिभा है, मानो उसी प्रकार मैं जागरूक रहता था। जो योगाभ्यास करता था, अपने में मननशील होता रहा। तो मुनिवरों! देखो, यह भी यथार्थ मार्ग कहलाता है, उस मार्ग को अपनाना ही हमारे जीवन की एक सार्थकता कहलाई जाती है।

आज का हमारा यह वाक क्या कह रहा है, पुत्र! हमारे इन वाक्यों में जो विचारणीय, एक विचित्र धारा है, उसके ऊपर हम प्रायः मनन करते रहें, अनुसन्धान करते रहें, और उस मार्ग में सफल हो जाएं, जो मार्ग सदैव एक रस रहने वाला है, क्योंकि प्रभु भी एक रस है प्रकृति भी एक ही रस कहलाती है। मेरे प्यारे! मानव के चिन्तन करने का, जो ऊर्ध्वा चिन्तन है, वह भी सदैव एक रस कहलाता है। परन्तु मानव के जीवन में, परिवर्तन कहाँ आता है, परिवर्तन आता है मानो जब वह मान वृत्तियों में ऐसी आभाओं में ऐसी वृत्तियों में मानो रमण कर जाता है जहाँ अपने उद्देश्य को वह शान्त कर देता है और उद्देश्य के मार्गों में वह जो, उसके जीवन में परिवर्तनता आ जाती है और वह जो परिवर्तन है वही उस मानव के मेरे प्यारे! देखो, मृत्यु के क्षेत्र में लाने का मानव प्रयास करता रहता है।

आओ, मेरे प्यारे! आज का विचार विनिमय क्या? आज मैं तुम्हें यह उच्चारण करने जा रहा हूँ कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना का .....शेष अनुपलब्ध।

19 १९ ०१ १९८२

देखो मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भान्ति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे यह भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से जन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया हमारे यहां परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है, क्योंकि वह परमपिता परमात्मा वरणीय हैं जो मानव उसका वरण कर लेता है वह प्रायः उसी को प्राप्त हो जाता है क्योंकि वह परमपिता परमात्मा जो सर्वत्र इस प्रकृति के कण कण में ओत प्रोत है एक एक परमाणु में वह गति कर रहा है तो इसीलिए हमे उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाना चाहिए प्रत्येक मानव संसार में उसकी एक ही प्रबल इच्छा होती है। क्या मैं सुखद और आनन्द को प्राप्त करने वाला बनूं। कोई मानव यह नही चाहता कि मैं सुखद और आनन्दवत नही रहना चाहता परन्तु वह आनन्द कहां प्राप्त होता है यह चिन्तन का विषय बन जाता है जो मानव उसके ऊपर चिन्तन करता है क्या हमे सुखद कहां प्राप्त होता है तो बेटा! वह उस सुखद को प्राप्त कर ही लेता है क्योंकि यहां ऋषि मुनि राष्ट्रीयवेत्ता मानो जितना भी ब्रह्मचर्यवत है परम्परागतों से एक ही उड़ान उड़ता रहा है क्या मैं इस संसार को जानने वाला बनूं और संसार में जितना भी ज्ञान और विज्ञान मुझे दृष्टिपात आ रहा है इस सर्वत्र ज्ञान और विज्ञान के लिए मैं अपने मानवीयतव को मानो इसके अर्पित करना चाहता हूं क्योंकि समर्पित करना ही मानव का जीवन है समर्पित होना ही मानव उस सुखद और आनन्द को

प्राप्त करना है यदि उसमें समरुद्र वर्णाः सुतम् अध्यानं मानो उस उसमें समर्पित नही होता तो उसे आनन्द प्राप्त नही होता है जैसा पुत्रों इससे पूर्व काल में हमने तुम्हे कुछ सूत्र की वार्ताएं प्रगट की क्योंकि प्रत्येक मानव अपनी इन्द्रियों से महानता को प्राप्त करना चाहता है और वास्तव में इन्द्रियों से ही मानव को महानता प्राप्त होती रही है बेटा! मुझे स्मरण आता रहता है गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज प्रत्येक इन्द्रियों का अनुसरण करते रहे। मानो चक्षु के द्वारा, श्रोत्रों के द्वारा जितनी भी इन्द्रियां मानव की हैं इन्हीं के ऊपर अनुसन्धान करते रहे और गाड़ीवान रेवक ने एक सौ पांच वर्ष की तपस्या करने के पश्चात यह अपना निर्णय दिया कि हम वास्तव में महान बन सकते हैं तो इन्द्रियों के व्यवहार को शोधन करने से ऊंचे बन सकते हैं योग की आभा में प्राण के द्वार पर जाने के लिए प्रत्येक मानव बेटा! अनुसरण करता हुआ ऋषि कहता है कि हम अपने जीवन को महान ऊर्ध्ववेत्ता बन सकते हैं ऊर्ध्ववेत्ता हम उस काल में बनेंगें जबकि हमारा इन्द्रियों का जो ज्ञान है अथवा विज्ञान है उसको हम सजातीय बना दें यदि हम सजातीय नही बना सकते तो मुनिवरों! देखो, जीवन कदापि महान नही बनता बहुत पुरातन काल में बेटा! हमने तुम्हे प्रगट कराते हुए कहा था कि प्रत्येक इन्द्रियों के विषय को जानना ही इस ब्रह्माण्ड की आभा को जानना है इस ब्रह्माण्ड में जो भी कुछ क्रियाकलाप हो रहा है वह मानव हम जान सकते हैं परन्तु इन्द्रियों का विषय हृदय अगम्य उससे समन्वय और हृदय का समन्वय मानो द्यौ लोकों से होना चाहिए और द्यौ लोकों में जो भी क्रियाकलाप हो रहा है बेटा! उसको अपने में समाहित करना अपने में धारण करना वह मानो उसकी महान प्रतिक्रिया कहलाती है मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! मुझे स्मरण आता रहता है त्रेता के काल की वार्ताएं त्रेता के काल में महात्मा

पुलस्तय ऋषि महाराज अपने आसन पर विद्यमान थे परन्तु आसन पर विद्यमान होने के पश्चात महर्षि पुलस्त्य महाराज की धर्म देवी शकुन्ककेतु मानो वह उसके द्वार पर आ पंहुची। और उन्होंने कहा कहिए भगवन क्या चिन्तन कर रहे हो महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज बोले हे देवी! मैं यह चाहता हूं क्या मुझ सुखद और आनन्द की प्राप्ति होनी चाहिए मैं सुखद और आनन्द की कल्पना कर रहा हूं और अपने को सजातीय बना रहा हूं मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने शकुन्तका देवी ने कहा क्या हे प्रभु! आपको आनन्द की पिपासा जागरुक हुई है यह कहां से प्राप्त हुई उन्होंने कहा कि हे देवी! मैं इस संसार को दृष्टिपात करता रहता हूं। मानो देखो द्रव्यपति बनने वाला प्राणी यह चाहता है क्या मेरा जीवन सुखद में आनन्द में प्राप्त हो परन्तु देखो राजा यह चाहता है कि मुझे सुखद प्राप्त हो और आनन्द की प्राप्ति हो जाए और मैं योगेश्वर बन जाऊं। तो यह मैं व्यवहार में दृष्टिपात करता रहता हूं क्या हे देवी! तुम भी तो सुखद और आनन्द चाहती होगी उनकी धर्म देवी शकुन्तकेतु ने कहा हे प्रभु! यह तो प्रभु! यह तो प्रत्येक प्राणी चाहता है मार्ग में विचरण करने वाला सिंहराज भी यह चाहता है कि मुझे आनन्द प्राप्त हो परन्तु सर्पराज भी यह चाहता है कि मुझे आनन्द की प्राप्ति हो मुझे स्मरण आता रहता है शकुन्तकेतु ने कहा क्या हे भगवन! मेरे जो महापिता थे शुम्भकेतु ऋषि महाराज मानो वो शुम्भकेतु ऋषि महाराज गान जानते थे और वह नाना प्रकार की विद्याएं जानते थे गान रुप में जैसे दीपावली गान होता है ऐसे ही मेघों का गान होता है इसी प्रकार वह मोहिनी अश्वासन गान को भी गाते रहते थे परन्तु देखो एक समय जब वह गान गा रहे थे तो गान गाता हुआ ऋषि अपने में आनन्द विभोर हो रहा था और ऐसा आनन्द विभोर हुआ की वेदों का गान गाता हुआ साम गान गाता हुआ उसमें भी जटा पाठ, और माला

पाठ की वह पुट लगा रहे थे। परन्तु जब वह गान गाने लगा तो उनके आश्रम में भयंकर वन था कौन गान को मानो श्रवण नही कर रहा था परन्तु मार्ग में रहने वाले प्राणी मात्र उस गान को श्रवण कर रहे थे जब वह श्रवण कर रहे थे तो कुछ मर्गराज उनके चरणों में आ गए और उस गान को श्रवण करने लगे गायत्री सुधा उनका गान चल रहा था गायत्री सुधा उसे कहते हैं जो मेरे प्यारे! गायत्री और छन्दों के सहित जो गान गाता है गायनमं ब्रहे वर्णस्वस्तं गायां ब्रह्मणा वर्ण स्वस्तं देव ध्यानम् अग्नि मित्रा मेरे प्यारे! वह अग्नि की आभा में ओत प्रोत हो करके वह गान गा रहा है जैसे अग्नि संसार में निर्भय होती है अग्नि निर्भय होती है क्योंकि वह देखो सदैव उसके लिए हिंसक हो अहिंसा परमोधरमी हो किसी भी प्रकार का प्राणी मात्र हो परन्तु उसे निर्भय रहना है चाहे वह विषधर हो मेरे प्यारे! देखो इसी प्रकार जो अग्नि का चयन करने वाला अग्निष्टोम में रमण करता है वह मेरे प्यारे! देखो भयंकर वनों में गान गा रहा है और वह जब गान गाता है तो मर्गराज उसके चरणों की आभा में प्राप्त हो रहे हैं और मुनिवरों! देखो, और गान गा रहा है तो सर्पराज मानो देखो स्वर ध्वनि आश्रम में मानो उस समय पंहुचीं बाल्यकाल था तो मैं यह स्वीकार करने लगी मेरे महापित को जो यह आनन्द प्राप्त हो रहा है यह आनन्द महानन्द है क्योंकि ज्ञानयुक्त जो गान गाता है ज्ञानयुक्त जो अपनी आभा में रमण करने वाला है मानो देखो वह महान और पवित्र कहलाया जाता है। मेरे प्यारे! देखो शकुन्तकेतु ने कहा प्रभु मेरा हृदय तो विभोर हो गया है मेरे हृदय में मानो देखो उनके विचार उनका गान अङ्कित हो गया है हृदय में जब अङ्कित हो गया तो मृगराज भी मानो देखो अहिंसा परमोधर्म का पालन करने वाला जो हिंसक प्राणी है मानव को भक्षण कर जाता है ध्वनि को जानता है वह ध्वनि सार्वभौम कहलाती है मानो वह ध्वनि

जिस समय मेघा गान गाने वाला मेघों का चयन करता है उस समय मेरे पुत्रों देखो मेघा चयन करने वाला वह उसकी जो ध्वनि है वह ओमां ब्रह्मणे प्रणा स्वस्तं वह ओ३म् से गुथी हुई ध्वनि होती है तो इसीलिए आज हमे विचारना चाहिए क्या हम उस ध्वनि को अपने में धारण करे जिससे हमे सुखद और आनन्द प्राप्त हो मेरे प्यारे! देखो अब ब्रह्मणा सुते मुनिवरों! देखो महात्मा पुलस्त्य मुनि महाराज ने कहा हे देवी! तुमने अपने महापिता के तो बहुत ऊर्ध्वा में वाक प्रगट किया है परन्तु मेरे महापिता भी इसी प्रकार के थे और मैं यह चाहता हूं क्या हमारे यहां जो भी बाल्य हो वह ब्रह्मवेत्ता और ब्रह्मनिष्ठ हो करके वो निष्ठा युक्त हो करके गान गाने वाला बने मेरे प्यारे! देखो महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज का एक पुत्र था जिसका नाम वरुणकेतु कहते थे वह वरुण जब गान गाता तो मुनिवरों! देखो उनके पिता भी विभोर हो जाते थे मुनिवरों! देखो वह आयुर्वेद के मर्म को भी जानते थे आयुर्वेद की आभा में औषधियों में नियुक्त रहने वाले थे। मेरे प्यारे! परन्तु गान गाते रहते थे जब वह गान गाते थे तो मुनिवरों! देखो औषधियां भी उस वैद्यराज को मुनिवरों! देखो उसकी आभा में स्वप्नवत को प्राप्त होती रहती थी तो विचार विनिमय क्या महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज ने अपनी देवी से कहा हे देवी! हमारे यहां यह जो वरुण ब्रह्मचारी है मानो देखो यह महान है पवित्र है जब यह गान गाता है तो सिंहं ब्रह्मणा कृतं देवाः औषधियां इसके सम्मुख आ करके गुणों का वर्णन करने लगती हैं मेरे प्यारे! देखो गुणों का कैसे वर्णन होता है यह एक महान आश्चर्य का वाक मैं बेटा! तुम्हे उच्चारण कर रहा हूं एक औषधि है वह अपने गुणों का वर्णन कैसे करेगी मेरे प्यारे! देखो जो रसोस्वादन करने वाला प्राणी होता है रसों के ऊपर जो रसना को अपनी आभा में ले जाता है उन रसों को मुनिवरों! देखो अनुसन्धान करता हुआ

रसास्वादन करने लगता है तो वह रसों में आ करके अपने गुणों का औषधियां वर्णन करती रहती हैं अपने में अपनी प्रतिष्ठा में ओत प्रोत हो जाती हैं तो मेरे प्यारे! देखो वह वरुण नामक कनस्ते महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज ने बेटा! देखो वरुण ब्रह्मचारी कृतां एक समय बेटा! देखो जब वह वरुण विद्यालय में थे तो महात्मा भुञ्जकेतु ऋषि महाराज भुञ्जकेतु ऋषि महाराज मेरे प्यारे! अङ्गिरस गोत्र में हुए भुञ्जकेतु मुनिवरों! देखो उस समय वह उन्हे शिक्षा देते थे जब वह शिक्षा देते थे तो मानो भयंकर वनों में ब्रह्मचारी जाता और औषधियों से वार्ता प्रगट करता रहता मुनिवरों! देखो औषधियों को अपने में उनके गुणों को धारण करता रहता तो मेरे पुत्रों देखो वरुणकेतु अप्रतं देखो जब आचार्य सांयकाल को ब्रह्मचारी को मुनिवरों! अपने समीप लाते तो मुनिवरों! देखो वह भुञ्जकेतु ऋषि महाराज अपनी आभा में उस ब्रह्मचारी को नाना प्रकार की शिक्षा में ऊर्ध्वा गति में ले जाने का प्रयास करते रहे। उन्होंने कहा हे ब्रह्मचारी! आज तुम मानो देखो मग्न हो रहे हो जब तुम भयंकर वनों से ला करके जब तुम औषधियों से वृक्षों से वार्ता प्रगट करते हो मानो देखो वार्ता क्या उनके गुणों का गुणावादन करते रहते हो परन्तु मैं यह जानना चाहता हूं तुम्हे ब्रह्म की आभा में भी तो रमण करना है मुनिवरों! देखो उन्होंने वरुण ने कहा हे प्रभु! मैं वास्तव में यह वाक जानता रहता हूं परन्तु मैं आपके चरणों में ओत प्रोत हूं जब तक मेरे पर आपकी अनुपम कृपा न होगी जब तक मैं ब्रह्मेत्ता नही बनूंगा। क्योंकि मैं गान गाता रहता हूं वेद की ध्वनियों में रमण करता रहता हूं उसी में मेरी आभा गान रुपों में रमण करती रहती है मेरे प्यारे! महात्मा पुलत्स्य ऋषि महाराज का जो वंशलज था वह नाना प्रकार के गान गाने वाला था नाना प्रकार कि विद्या को जानने वाला था मेरे प्यारे! देखो जब एक समय बेटा! वो गान जब गाने लगे तो

मुनिवरों! देखो उनके गान में अश्वतम् अग्नि प्रचण्डं ब्रव्हे कृतं देवाः जब वह गान गाने लगे तो अग्नि प्रचण्ड हो गई। और अग्नि प्रचण्ड हो करके उसके जो आन्तरिक रसना का जो भाग था वह एक रुप में अग्नि बेटा! उसको स्वस्त कर दिया जब अग्नि ने स्वतत्व कर दिया तो मुनिवरों! देखो वह अपने प्रभु से प्रार्थना और आचार्य के चरणों में ओत प्रोत हो गए तो मुनिवरों! देखो वह मध्य रात्रि के काल में आसन पर विद्यमान हो करके वह गान गाने लगे मेरे प्यारे! देखो जो भयंकर वर्णं ब्रहे प्रणाथ मुनिवरों! अन्तरिक्ष में जो परमाणु जो शीतल परमाणु थे उन्हे वह मुनिवरों! देखो वह नाना प्राणायाम के द्वारा अपने में शोषण करने लगे तो मुनिवरों! देखो उनकी रसना का भाग ज्यों का त्यों उसी प्रकार बन गया जैसे मुनिवरों! वह था तो मुनिवरों! देखो वेद का ऋषि कहता है मन्त्र कहता है क्या मानव को अपने जीवन को इतना क्रियातमक बनाना चाहिए क्योंकि बिना क्रियातमक जीवन बनाए बेटा! मानव कदापि भी सुखद और आनन्द को प्राप्त नही कर सकता क्योंकि नाना प्रकार की विद्याओं को जानना उन विद्याओं में रत्त रहना मुनिवरों! देखो मेघा गायन, अग्नि गायन बेटा! देखो यहां नाना प्रकार के जैसे अग्निष्टोम वो याग का एक स्वरूप माना गया है क्योंकि हमारा यहां भिन्न भिन्न प्रकार के यागों में एक याग अग्निष्टोम कहलाता है जो मानव अग्नि का चयन करता है अग्नि को बाह्य अग्नि आन्तरिक अग्नि दोनों का समन्वय करता है दोनों का मिलान करता है उन दोनों प्रकार की अग्नियों के द्वारा मुनिवरों! देखो अग्नि प्रदीप्त शान्त हुई अग्नि को बेटा! वह प्रदीप्त करता है और प्रदीप्त करता है उस अग्नि का मानो देखो बाह्य दीपावली से उसका समन्वय हो जाता है तो विचार विनिमय क्या मेरे प्यारे! देखो वह वरुण प्रमाणं मुनिवरों! देखो भुञ्जु मुनि महाराज मेरे प्यारे! जब गान गाते थे तो बह भी महानता

में गान गाते थे बेटा! पूर्णिमा के दिवस जब वह गान गाते थे तो पूर्णिमा के दिवस मानो चन्द्रमा अपनी कलाओं से परिपूर्ण होता है षोडश कलाओं वाला चन्द्रमा है जो मेरे प्यारे! पूर्णिमा के दिवस अपनी आभा में अपनी छटा देता रहता है आभायित करता रहता है रात्रि को अपने गर्भ में धारण कर लेता है जैसे मेरी प्यारी माता अपने में मानो देखो शिशु को अपने में धारण कर लेती है और उसका भान भी नही होता इसी प्रकार यह चन्द्रमा पूर्णिमा के दिवस मुनिवरों! देखो सर्वत्र रात्रि को अपने गर्भ में धारण कर लेता है उस समय महात्मा भुञ्जकेतु मुनि महाराज मेरे प्यारे! देखो गान गाते थे जब वह गान गाते तो सोमरस का पान करते थे जो सोम कहलाता है सोम को अपने में धारण कर लेता है वह मेरे पुत्रों देखो सौम्य बन जाता है वह अमृत को बहाने वाला बनता है जैसे चन्द्रमा नाना प्रकार का अमृत बहाता रहता है वह मानो जो मुनिवरों! देखो जो उस कान्ति को अपना धारण करता हुआ अपने में धारण करता हुआ अपने को महान बनाता हुआ अश्वतं ब्रह्मणा प्रव्हे स्वाहाः पूर्णकेतां चन्द्रं बृहि अस्सुतं मेरे प्यारे! देखो वह चन्द्रमा की आभा में अपने को और अपने को चन्द्रमा में चन्द्रमा को अपने में धारण करके बेटा! मानो देखो अपने में वह सोम का बहाने वाला बनता है जैसे मेरी प्यारी माता अपने बालक को लोरयों का पान करा रही है परन्तु जब वह माता लोरियों का अपने में यह स्वीकार करती है क्या मैं अपने बाल्य को मानो देखो, सोम बहा रही हूं सोम दे रही हूं सोम का अभिप्राय है ज्ञाना प्रव्हे व्रणा स्वस्तं मेरे प्यारे! देखो जानना ही किसी वस्तु की जानकारी कराने का नाम मुनिवरों! देखो सोम कहलाता है सोम क्या है आनन्द को सोम कहते हैं जो उस वस्तु को जानने के पश्चात मानव को एक आनन्द की प्राप्ति होती है उसका नाम सोम कहलाता है तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या

मुनिवरों! देखो सोमकेतु आभां ब्रह्मणा वर्णसुते मेरे प्यारे! देखो सोम को बहा रहे थे माता अपने गर्भस्थल में ही क्या अपनी लोरियों से अपनी वाणी का समन्वय करती हुई मानो देखो बालक को सोम बहा देती है जो माता अपने पुत्र को सोम रस का सोम बहाने वाली होती है मेरे प्यारे! उस माता के श्रृंगार को हनन नही कर सकता वह माता सदैव अपने श्रृंगार में परिपूर्ण होती है क्योंकि माता का वास्तविक जो श्रृंगार मानो देखो ऋषि मुनियों ने गणना में लाए हैं मुनिवरों! देखो वह क्या है सिंहाराम ब्रह्मणे सोमं बृहि वृता हे मां! तेरा जो सोम है वही तेरा श्रृंगार है मानो देखो वही तुझे सजातीय बनाता है तेरे उस श्रृंगार को संसार को कोई भी प्राणी अब तक मुनिवरों! देखो हनन नही कर सका है तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या आज हम अपने जीवन में बहुत ऊंची उड़ान उड़ने वाले बनें विचारवान बनें जिससे हमारा जीवन एक महानता में परिणत होता रहे तो मेरे प्यारे! देखो सोम भुञ्जकेतु मुनि महाराज और मुनिवरों! देखो महात्मा पुलस्त्य मुनि महाराज के पुत्र मुनिवरों! देखो वह वरुणकेतु मुनिवरों! दोनो का संवाद होता रहता था दोनों का क्रियात्मका विचार विनिमय होता रहता था क्योंकि वह विद्यालय था आचार्य की शरण में जब ब्रह्मचारी जाता है तो उस विद्या को अपने में धारण कर लेता है वह नाना प्रकार की विद्या में संलग्न हो जाता है आचार्य मुनिवरों! देखो उसको अपनी आभा प्रगट कराते हैं जैसे चन्द्रमा अपनी छटा से अपनी आभा से मुनिवरों! देखो रात्रि को धारण कर लेते हैं मानो रात्रि अन्धकार को अपने में ग्रहण कर लेता है उसी प्रकार मेरे पुत्रों देखो आचार्य ब्रह्मचारी के अज्ञान को अन्धकार को मेरे पुत्रों अपने हृदय में धारण कर लेता है और उस विद्या को उस प्रकाश को देता है जिससे मुनिवरों! देखो वह प्रकाशमान हो करके मानो देखो विद्यालय का नामोकरण एक महान और पवित्र

बना देता है तो आओ, मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या हमारे यहां नाना प्रकार की मुनिवरों! आभाएं परम्परागतों से एक महानता में परिणित होती रही हैं मानो देखो सूत्रों में सूत्रित होती रही हैं जिसको अपने में धारण करने वाला प्राणी मुनिवरों! देखो सुखद को प्राप्त होता है मेरे प्यारे! देखो जब वरुण महाराज ने विद्या का अध्ययन कर लिया अध्ययन करने के पश्चात मेरे प्यारे! देखो भुञ्जकेतु मुनि महाराज एक दीक्षान्त उपदेश हुआ और दीक्षान्त उपदेश में मुनिवरों! देखो जब विद्यालय को त्याग करके वरुणकेतु जाने लगे तो मुनिवरों! देखो उन्होंने एक दीक्षान्त उपदेश दिया महात्मा भुञ्जकेतु मुनि महाराज ने कहा हे ब्रह्मचारी! तुम इस विद्यालय को अब त्याग रहे हो इस विद्यालय में तुमने अध्ययन किया है और यह विद्यालय तुम्हारी दृष्टि में महान होना चाहिए। तुमने जो नाना प्रकार की विद्याएं इस विद्यालय में विद्यमान हो करके अध्ययन की हैं इस अध्ययन की हुई विद्या को तुम्हे क्रियात्मक बनाना है क्योंकि क्रियात्मक बनाने वाला ब्रह्मचारी ही मानो देखो विद्यालयों को पवित्र बना देता है माता की आभा और माता का जो स्नेह है माता की जो पवित्रता है वह मानो देखो तुम्हारे हृदयों में प्रवाहित रहनी चाहिए हे ब्रह्मचारी! हे पुलस्त्य पुत्रा! अब तुम विद्यालय को त्याग रहे हो तुम्हे इस संसार में जाना है तुम्हे गृह में भी प्रवेश होना है गृह में भी प्रवेश होना है क्योंकि महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज पुलस्त्यं ब्रह्मे यह गोत्र परम्परागतों से ही माना गया है क्योंकि तुम्हारे जो पिता हैं वह स्वाति पुलस्त्य कहलाते हैं स्वाति पुलस्त्य तुम्हारे पिता का नाम है और पुलस्त्य उनका गोत्र है यह पुलस्त्य गोत्र मानो परम्परागतों से ही माना गया है हे ब्रह्मचारी! अब तुम अपने गृह में जब प्रवेश होगे तो अपनी जो परम्परा है तुम्हारा जो पुलस्त्य गोत्र है इस गोत्र में ब्रह्मवेत्ता मानो देखो ऋषि हुए हैं ब्रह्मववेत्ता रहे

हैं हिसक प्राणियों से वह अहिंसा में जीवन को परिवर्तित करते हुए रहे हैं। हे ब्रह्मचारी! तुम्हे भी अपने जीवन को मानो देखो वृणी वर्ण प्रव्हा स्वस्ते तुम्हे भी अपने जीवन को मानो देखो वृणी कृताम् रहना है तुम्हे हिंसक प्राणियों से अहिंसा से अपने जीवन को परिवर्तित किया है तुमने और करते रहोगे क्योंकि तुम्हारे गोत्रों की जो परम्परा है वह महान और विचित्र मानी गई है। क्योंकि तुम्हारे पुलस्त्य जो गोत्र है इका जो निकास है वह अङ्गिरस गोत्रों से देखो इसका निकास हुआ है। हे ब्रह्मचारी! तुम्हारे विद्यालय में तुम्हारे गृह में मानो देखो किसी प्रकार का अन्तर्द्वन्द्व नही है हे ब्रह्मचारी! अब जब तुम इस विद्यालय को त्याग रहे हो अपने गुरुओं का नामोकरण तुम्हे ऊंचा बनाना है अपने गुरुओं की महानता को उस महानता में परिणित करना है जिससे तुम्हारे जीवन में एक महान आभा प्रगट होती रहे मेरे प्यारे! देखो महर्षि ने कहा हे ब्रह्मचारी! जब तुम अपने जीवन को ब्रह्मचारी बनाओगे तो मानो देखो तुम्हारे जीवन में सुगन्धता की प्राप्ता होगी क्योंकि ब्रह्मचरिष्यामि ब्रह्मचरी ही ब्रह्म को धारण करना है ब्रह्म की आभा को धारण करना है तुम्हे गृह में भी जाना हो तो तुम्हे उसके पश्चात भी मानो देखो ब्रह्म को अपने से दूरी न करना। यह ब्रह्म वर्णा स्वस्तः मानो देखो ब्रह्म ही मानव का वरणीय माना गया है उसी के लिए प्राणी गुथा हुआ है उसी के लिए प्राणी मानो देखो यह ब्रह्माण्ड मानो देखो आभा में रमण कर रहा है हे ब्रह्मचारी! तुम्हे अपने श्वांस पर श्वांस जो गति कर रहा है इसमें ब्रह्म सूत्र में श्वांस को अपने में पिरोना है मेरे प्यारे! देखो वरुण ने ऋषि के चरणों को स्पर्श किया और उसने कहा कि हे प्रभु! जो आपका मुझे आदेश प्राप्त होगा उसका मैं पालन करूंगां उन्होंने कहा हे ब्रह्मचारी! जब तुम विद्यालय को त्यागो तो तुम्हारे हृदय में हिंसा भाव नही रहना चाहिए क्योंकि तुम्हारा जो वंश

है वह महान और पवित्र रहा है उसमें सदैव मानो गान गाने वाले ऋषि रहे हैं गान गाते रहे हैं और ऊर्ध्वा में देखो जटा घन पाठों का मानो देखो ध्वनि रुपों से वरण होता रहा है मानो देखो जिस समय तुम्हारा इस विद्यालय में प्रवेश हुआ, तो तुम्हारी माता शकुन्तकेतु और तुम्हारे पितर दोनों इस विद्यालय में आये और दोनों ने यह कहा हे ऋषिवर! हमारे ब्रह्मचारी को तू महान बना देना मानो देखो आज मैंने तुम्हे विद्याए दी हैं उस विद्या का तुम्हारे हृदय से ह्रास नही होना चाहिए मानो देखो तुम्हारे महामाता ने यह कहा था गर्भस्थं ब्रह्मे प्रणा स्वस्ति उन्होंने कहा हे ऋषिवर! मैंने अपने गर्भाश्य में अपने बालक को कुछ उपदेश दे दिए हैं मानो कुछ आभाएं प्रगट की हैं मेरा जो पुत्र है वह श्रृंगार की रक्षा करने वाला हो श्रृंगार का हनन करने वाला न हो मेरे प्यारे! देखो यह वाक जब ऋषि ने प्रगट कराए तो मुनिवरों! देखो महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज के पुत्र वरुणकेतु मुनिवरों! देखो ऋषि के चरणों में ओत प्रोत हो गए और उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! जो आपने मुझे उपदेश दिया है जो आपने मुझे आज्ञाएं दी हैं उसका मैं पालन करुंगा। मेरे प्यारे! देखो ऋषि ने उसके पश्चात यह कहा ब्रह्मचारी! अन्तिम उपदेश यह है क्या यह जो विद्यालय है इस विद्यालय को तुम्हारी संरक्षणता में यह विद्यालय महान बनता रहे मेरे प्यारे! देखो यह वाक उच्चारण करके ऋषिवर मौन हो गए और ऋषि ने यही कहा अन्तिम उनका सूत्र यही था क्या हे ब्रह्मचारी! ब्रह्मचर्य वर्णाः तुमने देखो आयुर्वेद विद्या को अध्ययन किया है तुमने मानो देखो सूर्य विद्या को अग्निष्टोम याग का जीवनभर चयन किया हे ब्रह्मचारी! तुमने मानो देखो मेघा रुद्रस्केतु मानो देखो आभा को तुमने मानो वर्णित किया है अपने में वरा है यह तुम्हारी वरणीय रहने चाहिए यह विद्या तुमसे दूरी न हो ऐसी मेरी कामना है तो बेटा! भुञ्जकेतु मुनि महाराज शान्त हो गए और

शान्त होने के पश्चात मुनिवरों! देखो ब्रह्मचारी ने वहां से गमन किया और ब्रह्मचारी ने भ्रमण करते हुए महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज के गृह में उनका प्रवेश हुआ तो मुनिवरों! देखो महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज ने और शकुन्तकेतु उनकी पत्नी ने बेटा! उनका स्वागत किया और उनका स्वागत करने के पश्चात हमारे यहां यह एक विद्या कृति वेद का उपदेश यह कहता है मन्त्र यह कहता है कि ब्रह्मचारी जब विद्यालय जब आचार्य कुल से जब वह प्रस्थान करता है तो मानो देखो माता पिता उस ब्रह्मचारी को कुछ प्रश्न करते हैं माता ने कहा हे ब्रह्मचारी! तुम अध्ययन करके आए हो तुमने क्या पाया है मम प्राण ब्रहे अस्तो मेरे प्यारे! देखो वह ब्रह्मचारी ने माता के चरणों को स्पर्श करके यह कहा कि हे माता! मैं माता की आज्ञा का पालन करुंगा सबसे प्रथम द्वितीय आचार्य ने मुझे जो उपदेश दिया है मैं उसका पालन करुंगा मानो जिस विद्या को मैंने अब तक निगला है उस विद्या को मानो देखो परोक्ष से अपरोक्ष में लाने का प्रयास करुंगा मेरे प्यारे! देखो माता प्रसन्न हो गई। जब पिता के दर्शन हुए तो पिता ने यह कहा परम्पर ब्रहे कृत सुताः हे ब्रह्मचारी! आचार्य ने कुछ परम्परागतों की वार्ता भी प्रगट की हैं अथवा नही उन्होंने कहा वरुण बोले कि हे पितर! हमारा जो वंशलज है उसकी परम्परा प्रगट करते हुए ऋषि ने यह कहा है क्या तुम अपने कुल की परम्परा अपने वंश की परम्परा को शान्त न करो हे भगवन! देखो वंशों में ब्रह्मवेत्ता हुए ब्रह्म जिज्ञासु हुए मानो देखो ऊंची उड़ान उड़ने वाले विज्ञान में रमण करने वाले हुए हैं उनकी सबकी मानो जीवन का अध्ययन करके अपने जीवन को उसी के अनुकूल अपने जीवन को व्यतीत करना यह आचार्य ने मुझे उपदेश दिया है मेरे प्यारे! देखो पुलस्त्य ऋषि मौन हो गए उसने कहा धन्य है तो मुनिवरों! देखो गृह में ब्रह्मचारी का प्रवेश हुआ तो मेरे

प्यारे! विचार विनिमय क्या मुनिवरों! देखो सुखद कैसे प्राप्त होता है यहे मैंने बेटा! तुम्हे कुछ चर्चाएं की हैं और वह सुखद होने की चर्चाएं कैसे मानव को सुखद मिलता है क्या संसार की जितनी जानकारी हैं उनको विवेक पूर्वक जानना अपने में धारण करना मुनिवरों! देखो दूरिता को अपने से दूरी करना यह मेरे प्यारे! अपने जीवन को सुखद और आनन्दित बनाता है यह है बेटा! आज का वाक मैं विशेष चर्चा तो मुनिवरों! कल ही प्रगट करूंगा आज का विचार क्या आज मैंने अपने विचारों की एक भूमिका को निर्धारित किया है मुनिवरों! देखो रणं ब्रह्मे स्वता अस्सुतं देवाः मेरे प्यारे! देखो हमे प्रभु को वरणीय बनाते हुए वेद की ध्वनि में रत्त रहना और मुनिवरों! देखो अपने जीवन को उसी के अनुकूल बनाना यह है बेटा! आज का वाक अब मुझ समय मिलेगा मैं इससे आगे की कड़ी चर्चाएं कल प्रगट कर सकूंगां मुनिवरों! देखो कल मैं देखो वरुण के सम्बन्ध में उनके जीवन की प्रतिक्रियाएं कैसी थी यह चर्चाएं कल प्रगट करेंगें आज का वाक समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा। ओ३म् मा वसो देवं मधुप्रा वसो गृहितां रथाः। ओ३म् अग्नि जिव्ह्या हं गतं आप्यां लोकं सर्वाः गृहिता मधु आभा रथाः३म्। ओ३म् ब्रह्मणा देवं मया सर्वं रुद्राः। पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन, पूज्यपाद गुरुदेवः आनन्द रहो। दिनांक १९ ०१ १९८२, अमृतसर।

20 २० ०१ १९८२ राजा रावण का जन्म वृत्त

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की

प्रतिभा का वर्णन किया जाता है। क्योंकि वह मेरा देव प्रतिभाशाली है, विज्ञानमयी स्वरूप माना गया है। मानो यह संसार उसका आयतन माना गया है। इस संसार में जितनी गतियाँ है उस सर्वत्र गति के मूल में, वह मेरा देव विद्यमान है। चाहे वह षोडश कलाओं वाला हो, चाहे वह बारह कलाओं वाला हो। परन्तु वे परमपिता परमात्मा सर्वत्रता में ओत प्रोत है।

मुझे नाना वार्त्ताएं स्मरण आती रहती है, नाना चर्चाएं भी करते रहते है। परन्तु उन चर्चाओं में, जहाँ परमपिता परमात्मा के विज्ञानमयी स्वरूप का वर्णन आता है तो उसका विज्ञान इतना नितान्त दृष्टिपात होने लगता है। मुनिवरों! देखो, मानव चकित हो जाता है। ऋषि, मुनि, तपस्वी तपस्या करते करते बेटा! अन्त में वे मौन हो जाते हैं। क्योंकि विज्ञान की तरंगों पर मानव का मानवीतव विद्यमान होता है क्योंकि मानव तरंगों से, तरंगित रहता है। जैसे मुनिवरों! देखो, मानव की प्रत्येक इन्द्रियों से, तरंगें उत्पन्न होती रहती है, गति कर रहा है। वाणी तरंगें दे रही है, गति कर रहा है। त्वचा में तरंगें आ रही है, गति कर रहा है। नेत्रों में मेरे पुत्रो! देखो, आभा प्रगट हो रही है, गति कर रहा है। मानव की तरंगों में परणित हो रहा है। एक नहीं, बेटा! मैं इन तरंगों के ऊपर जाना नहीं चाहता हूँ, परन्तु मूल में एक ही वाक है क्या, मानव का जो मानवीयतव है, वह मेरे प्यारे! देखो, तरंगों से तरंगित होता है और प्रविष्ट होता हुआ, वृक्ष की तरंगों पर, यह मानव विचार विनिमय कर लेता है।

पाप का मूल

तो मुनिवरों! देखो, यही षोडश कलाओं वाला, यही बारह कलाओं वाला, यह महापुरुष बन करके बेटा! इस संसार का कल्याण उद्धार कर देता है। मुझे बेटा! यहाँ नाना वार्त्ताएं स्मरण आती रहती है, बेटा!

हम महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज की चर्चाएं कर रहे थे। महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज बेटा! देखो, उनके गोत्र में, उनके पूर्वजों में, सत्यवादी पुरुष होते रहे है। सत्य उसे कहते जो मेरे प्यारे! अपनी अन्तरात्मा में समाहित रहता है और अन्तरात्मा, जिससे प्रश्न रहता है, उन शब्दों में और क्रियात्मकता में जो क्रियाकलाप हो रहा है, उस क्रियाकलाप की आभा में आत्मा प्रसन्न हो रहा है। मेरे पुत्रों! देखो, वह मानव सत्यवादी कहलाता है। और यदि उसके क्रियाकलाप से और मुनिवरों! देखो, व्यावहारिक जीवन में, अपने से उसका अन्तरात्मा यदि दुःखित हो रहा है आन्तरिकता में, उसको धिक्कार रहा है तो मेरे पुत्रों! वही पाप का मूल बन करके रहता है। मुझे स्मरण है। क्यो मानव का जीवन क्रियाकलापता में रहना चाहिए?

रावण के पिता

महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज के यहाँ बेटा! देखो, वे सत्यवादी पुरुष रहे। मैं, बेटा! बहुत समय हुआ, जब इन ब्रह्मचारियों को, आभा में प्रगट करते रहते। मैं वरुण देव की चर्चा कर रहा था, परन्तु उनके पिता, जिनका नाम मणिचन्द्र था, मणिचन्द्र केता, मेरे प्यारे! मैं वरुण की चर्चा कर रहा था। क्योंकि वरुण, पुलस्त्य ऋषि महाराज के पौत्र थे और मणिचन्द्र उनके पुत्र कहलाते थे। तो मैंने यह जो कल, करणा स्वस्ति वधनम् मानो देखो, साहित्य का जो व्रज था, वह कुछ स्मरण नहीं रहा। परन्तु यह जो कल, मैंने चर्चाएं इससे पूर्व काल में की थी, वह मणिचन्द्र ब्रह्मचारी की चर्चाएं थी। तो मुनिवरों! देखो, शकुन्तकेतु उनकी माता थी और मणिचन्द्र, शिक्षा अध्ययन करने के पश्चात अपने

गृह में, उनका प्रवेश हुआ। तो मुनिवरों! देखो, वह अध्ययनशील, हमारे यहाँ एक परम्परागतों से एक वार्ता चली आई, कि जैसे ही विद्यालय से ब्रह्मचारी, गृह में प्रवेश करता, तो माता पिता उस ब्रह्मचारी के लिए मानो गृह में प्रवेश होने के लिए, उनका सब कर्म बना देते थे।

रावण की माता

तो महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज बेटा! एक समय भ्रमण करते हुए, वह शाण्डिल्य, गोत्रीय एक ऋषि थे, जिनका नाम ब्रद्दस्त् ऋषि महाराज था। वे त्रीत ऋषि कहलाते थे। क्योंकि वे क्रोधी बहुत थे। परन्तु वह त्रेतकेतु ऋषि के द्वार पर, जब पहुँचे, तो महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज और त्रीतकेतु की चर्चाएं हुई। तो मुनिवरों! जब चर्चाएं होने लगी, तो उनके आश्रम में मानो एक बालिका, कृतिभा सोमकेतु बालिका, उनके आश्रम में अध्ययन कर रही थी। तो महात्मा पुलस्त्य, ने उसके गुणों का अध्ययन किया और अध्ययन करने के पश्चात त्रीत ऋषि से कहा कि महाराज! हे शाण्डिल्य! इस कन्या का संस्कार, मेरे गृह में, यह कन्या सुशोभित हो जाए, तो मेरा बड़ा सौभाग्य होगा। तो मुनिवरों! देखो, ऋषि ने इस वाक को स्वीकार कर लिया।

मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने मणिचन्द्र का नामोकरण भी श्रवण किया था, क्योंकि वह ऋषियों के आश्रमों में भ्रमण करते रहते थे। तो मुनिवरों! देखो, कन्या ने भी नामोच्चारण, उनकी प्रतिष्ठा स्वीकार की थी। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने, कन्या से कहा हे कन्या! शुभ वर्ण तत्त्वतं ब्रीहि अद्धाधं ब्रहे पुलिस्तानम्, क्या, हे कन्या! यह ऋषि चाहता है कि मेरा पुत्र मणिचन्द्र मेरे प्यारे! नामोच्चारण करते ही कन्या ने वह स्वीकार कर

लिया।

माता का तप

तो मेरे प्यारे! देखो, स्वीकार करने के पश्चात, महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज ने और त्रीत ऋषि महाराज ने, शाण्डिल्य गोत्र में उत्पन्न होने वाली कन्या का संस्कार, मेरे प्यारे! पुलस्त्य गोत्र में उसका संस्कार हुआ। संस्कार, क्योंकि हमारे यहाँ माताओं का, कन्याओं का, बड़ा सौभाग्य रहा है। उनका जो तप है, वह गृह को सजातीय बनाता है। माता का जो तप है, वह माता के श्रृङ्गार की रक्षा करता है। मेरे प्यारे! जब उनके गृह में, उसका प्रवेश हुआ, तो मुनिवरों! कन्या तपस्विनी थी, गायत्री छन्दों का पठन पाठन किया करती थी, प्रातःकालीन अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके मानो अपने गृह के कार्यो में, अपने को संलग्न कराती रहती। क्योंकि वही मानव सौभाग्यशाली होता है संसार में, जो प्रातःकालीन मुनिवरों! प्रभु का चिन्तन करने वाला और गायत्री छन्दों में रमण करने वाला हो। क्योंकि गायत्री कहते है गायन को, छन्द कहते है मुनिवरों! देखो, जो उत्सर्ग में होता है। तो मुनिवरों! देखो, जो गायत्री से गान गाता है, अपने प्रभु का गान गाती है वह कन्या, वह मेरी प्यारी माता सौभाग्यशालिनी होती है।

तो मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ ऋषि मुनिवरों! ने परम्परागतों से ही, गृह आश्रम के लिए बेटा! एक क्रियाकलाप बनाया, तपस्या करने के पश्चात, उन्होंने वेद का अध्ययन किया और वेद का अध्ययन करने के पश्चात उन्होंने बेटा! ब्रह्मयाग को रचा, उसके पश्चात देवयाग को रचा और भी मुनिवरों! देखो, ओर भी याग रचे, परन्तु दो याग विशेष होते है। सबसे प्रथम

ब्रह्मयाग होता है।

ब्रह्मयाग

ब्रह्मयाग उसे कहते है जहाँ ब्रह्म का चिन्तन किया जाता हो, ब्रह्म के चिन्तन करने के नाना प्रकार माने गएं है। मानो एक तो ब्रह्म का चिन्तन मुनिवरों! नेत्रों को आन्तरिक जगत में ले जाना और जहाँ तक उसकी दृष्टि आन्तरिक जगत में, नेत्रों के साथ दृष्टिपात होती रहती है, वहाँ तक दृष्टिपात करते करते अन्तिम, नेत्रों को आन्तरिक जगत में और मौन हो जाए, मानो उसकी सृष्टि को दृष्टिपात करता रहे। मुनिवरों! देखो, एक तो वह क्रियाकलाप होता है। द्वितीय यह है कि वाणी से वह प्रभु की महिमा का गुणगान गा रहा है, उसके गुणों का वर्णन कर रहा है, हे प्रभु! तू महान है। आज तूने हमारे, इस मानव शरीर को रचा है यह मानव शरीर नाना तरंगों पर मानो विद्यमान है। जैसे सूर्य प्रकाश दे रहा है, सूर्य नाना प्रकार की तरंगों वाला है, और वह मानो देखो, द्यौ की तरंगों पर स्थित रहने वाला है और नाना मण्डलों को तपाने वाला है। मानो देखो, एक मण्डल, दूसरे मण्डल में, जो यह प्रतिष्ठित, हमें दृष्टिपात हो रहा है यह उस महान मेरे प्यारे! प्रभु की महिमा और उसकी विचित्रता है।

ऋचा में ओ३म्

मेरे प्यारे! देखो, यह एक सूत्र में पिरोया हुआ सा संसार, दृष्टिपात आता है। तो इस प्रकार का जो चिन्तन है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में, जो सूत्रपात हो रहा है, जैसे माला में धागा होता है। माला में सूत्र होता है। ऐसे ही मुनिवरों! देखो, प्रभु ने, वेद की आभा को जाना। तं ब्रह्मणे देवाः ज्ञानी पुरुषों को, वेद का जो ज्ञान दिया है बेटा! ओ३म् रूपी सूत्र में, एक एक ऋचा पिरोई हुई है। और उन ऋचाओं में क्या है? संसार का

ज्ञान और विज्ञान है। मानो देखो, ज्ञान और विज्ञान उनमें पिरोया हुआ है। ओ३म् रूपी सूत्र में, तो हमें उस सूत्र के ऊपर चिन्तन करना है यह ब्रह्मयाग कहलाता है, याग का अभिप्राय है यागां ब्रह्मणा व्रते हम सदैव मानो उसी प्रभु की सृष्टि में जागरूक रहते है। हमारा जो ज्ञान और विज्ञान है वह भी प्रभु की ही सृष्टि में रमण कर रहा है। हम संसार में, यह ज्ञान न कहीं से लाते है और न कहीं को जाता है। यह तो प्रभु! की महिमा में, मानो प्रभु के ही गर्भ में यह ज्ञान और विज्ञान के गर्भ में हम सब रमण करते हैं। मेरे प्यारे! आत्मा सर्वत्रता में ज्ञान स्वरूप है आत्मा में ज्ञान होता है। संसार में जितनी भी मानो भाषाएं है, वह किसी भी काल में हो, परन्तु आत्मा सर्वत्रता में उसका बुद्धिमान है। क्योंकि आना जाना कहीं नहीं है क्योंकि उस प्रभु के गर्भ में हम जब विद्यमान है तो बेटा! देखो, उसका ज्ञान और उसका विज्ञान, उसकी जितनी महानता है मानो देखो, उसी में ओत प्रोत हो रही है, उसी से उद्बुद्ध हो रही है। उन्हीं तरंगों से बेटा! वह ज्ञान की नाना तरंगों से तरंगित हो रही है तो मुनिवरों! इस प्रकार का जो चिन्तन है, इसका नाम मेरे प्यारे! ब्रह्मयाग कहलाता है। ब्रह्मयागां ब्रह्मणे लोकाः हम ब्रह्म लोक को जाने वाले बनें, ब्रह्म लोक कहाँ है? जहाँ मुनिवरों! देखो, ब्रह्म को महिमा में, ब्रह्म की सृष्टि में, ब्रह्म के लोक में स्थित हो जाता है बेटा! वहीं उसकी सृष्टि विद्यमान होती है और वह ब्रह्म का ही लोक है। परन्तु देखो, हमें अपने मनस्तव, प्राणस्तव को मानो देखो, ब्रह्म लोक में प्रतिष्ठित हो जाना है।

ब्रह्मलोक

तो मेरे प्यारे! देखो, हम जब ज्ञान और विवेक की दृष्टि से, जब विवेचना करने लगते है, तो प्रायः ऐसा दृष्टिपात होता है क्या मानो देखो, यह ब्रह्म का

चिन्तन है। ब्रह्म का चिन्तन क्या है? बेटा! ब्रह्म का चिन्तन वह कहलाता है, जितने भी ज्ञान है वह मानव के मानवीयतव में स्थित रहता है। मानव का जितना भी लोक लोकान्तर है वह उसमें स्थित रहता है। मेरे प्यारे! देखो, उन तरंगों में, प्रत्येक मण्डलों की छाया होती है। प्रत्येक लोकों की आभाएं विद्यमान होती है। उन आभाओं में रमण करने का नाम, उनमें स्थित रहने का नाम बेटा! वह ब्रह्म लोक कहलाता है। लोकां ब्रह्मा लोकश्चं ब्रव्हे लोकं दिव्यां गतप्रव्हा देवाः मेरे प्यारे! उस लोक में हमें स्थित हो जाना है।

माता का बाल्य पर प्रभाव

विचार विनिमय क्या बेटा! मैं उच्चारण कर रहा था। मेरे प्यारे! देखो, वह शाण्डिल्य गोत्र की कन्या, जब प्रातःकालीन पुलस्त्य के गोत्र में आने वाली कन्या, प्रतिष्ठित हो गई तो, मेरे प्यारे! वह प्रातःकालीन ब्रह्म का चिन्तन करती रहती थी, इसलिए हमारे ऋषि मुनियों ने कहा है कि मेरी पुत्रियों को वेद का अध्ययन करना चाहिए। वेद का अध्ययन करने से उनके जीवन में ब्रह्म की आभा होनी चाहिए, जिससे उनका जीवन महान बनता हुआ, उनके गर्भों से उत्पन्न होने वाले, हम जैसे शिशु मानो सब बुद्धिमान बन जाए। सब महान बन करके रहे। तो माता का तप ही मुनिवरों! देखो, पुत्र को महान बनाता है। माता का तप ही मुनिवरों! देखो, संसार में, माता का तप ही संसार में मिथ्या को दूरी कर देता है। और सत्यता में मानो ओत प्रोत कर देता है। मेरे पुत्रों! देखो, माता के दिए हुए विचार, बाल्यकालीन हो, गर्भ स्थल में हो, उनको बेटा! विद्यालय में आचार्य समाप्त नहीं कर सकता। उनको मेरे प्यारे! देखो, आगे आने वाला समाज, मुनिवरों! देखो, उनको समाप्त नहीं कर सकता। वह महान रहते है। वह उसी प्रकार ज्यों के त्यों बने रहते है परन्तु देखो,

तपो तपं ब्रह्मणा जैसा मुनिवरों! ऋषियों ने तप कहा है। कि उसको मेरे प्यारे! देखो, तप की मीमांसा करने वाला, वेद का ऋषि कहता है क्या, हे माता! तू आयुर्वेद, क्या मानो तू महान बनने के लिए, वेद का अध्ययन कर। वेद कहते है प्रकाश को, तेरा जीवन प्रकाश में रहेगा, तो गृह प्रकाशित रहेगा। गृह प्रकाशित रहेगा तो मानो देखो, राष्ट्र पवित्र रहेगा। और राष्ट्र पवित्र रहेगा तो उसका नामोकरण महान और पवित्रता में परणित हो जाएगा।

देवयाग

तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या, उच्चारण कर रहे थे मुनिवरों! देखो, जब गृह में कन्या, प्रातःकालीन, ब्रह्मयाग करती थी, ब्रह्मयाग में रमण, क्योंकि यागां ब्रह्मणे प्रतिष्ठित होने का नाम याग है। मेरे प्यारे! उसके पश्चात वह मानो देखो, देव याग में परणित हो जाती, देवताओं के लोक में जाना मुनिवरों! देव याग किसे कहते है? देव याग कहते है मेरे पुत्रों! देखो, देवां ब्रह्मणा ब्रह्मे व्रताः देव याग के पूर्व, जब ब्रह्मयाग करता है प्राणी, तो मुनिवरों! देखो, वह पूर्ववत में जाता है। तो वहाँ अग्नि, प्रकाश दृष्टिपात आता है। दक्षिण में तरंगे जाती हुई, दृष्टिपात आती है। मेरे प्यारे! देवा, धनिष्ठता अन्नादं भण्डारां ब्रह्मे कृताः पश्चिमा मेरे प्यारे! उत्तरायणं सोभां ब्रीहि वृताम् सोम गति करता रहता है। ध्रुवा में विष्णु गति करता है, ऊर्ध्वा में बृहस्पति गति कर रहा है। तो मुनिवरों! साधक कहता है, तपस्वी कहता है, हे मन! तू कहाँ जा रहा है? जहाँ भी तू जा रहा है वही वह तेरा देव विद्यमान है। मानो वह नाना रूपों में, तुम्हें दृष्टिपात आ रहा है। तो मेरे प्यारे! देखो, इसको ब्रह्मयाग कहते है। विचार आ गया, उन देवताओं के याग में जाना है, देवताओं के लोक में जाना है।

मुनिवरों! देखो, देव याग क्या है? एक मेरा प्यारा

याग कर रहा है, अग्नि को धारण कर रहा है अग्नि का चयन कर रहा है और अग्नि में मुनिवरों! देखो, वह साकल्य प्रदान करके, वह देवताओं को हूत दे रहा है, भोज दे रहा है। वह देवताओं को दे करके, अपने में प्रसन्न हो रहा है और प्रसन्न हो करके, यह कह रहा है ऊर्ध्वा गतं ब्रव्हे व्रत्तं देवाः हे देवताओ! जैसे यह अग्नि चयन कर रही है यज्ञशाला में, हे देवताओं! मेरे हृदय की अग्नि को भी प्रकाशित कर दो। मेरे हृदय रूपी जो अग्नि है, वह भी प्रकाशित हो जाए, जिससे भगवन्! मैं तुम्हारी सभाओं में जाने योग्य बन जाऊं, क्योंकि देवताओं की सभा में वही जाता है जो देववत बन जाता है। देवताओं की सभा में वही जाता है जो उनके सुयोग्य बन जाता है। मुनिवरों! देखो, अग्नि से कहता है हे अग्नि! तू जैसे इस यज्ञशाला में मानो चयन कर रही है, ऐसे ही तू मेरे हृदय में चयन कर, हे देवताओ! तुम मेरे हृदय को प्रकाशित कर रहे हो, तो मुनिवरों! देखो, मैं यह अशुद्धियाँ कर रहा हूँ, कि जो मैं यह कह रहा हूँ कि तुम यह कर रहे हो। प्रभा ब्रव्हे कृतम् मानो यह तो मेरा शरीर, तुम्हारा लोक ही कहलाता है। परन्तु मैं इस संसार के प्रपञ्च, संसार की आभाओं में, प्रपञ्चता में तुम्हें मानो देखो, अपने से दूरी स्वीकार कर रहा हूँ। मैं अग्नि को कही दृष्टिपात कर रहा हूँ, वायु को कहीं दृष्टिपात कर रहा हूँ मानो देखो, पृथ्वी को कहीं दृष्टिपात कर रहा हूँ, नाना प्रकार के विज्ञान में अपने को, मानो देखो, सूर्य को अपने से, अग्नि को अपने से, सबको दूर स्वीकार कर रहा हूँ। यह मेरी कितनी घृष्टता हो रही है।

परन्तु वास्तव में, इससे तो मेरे शरीर का निर्माण ही हुआ है। यह जो देवता कार्य कर रहे है, आत्मा के अङ्ग संग मानो आमं महिमा व्रणि अस्तात्मान यह जो आत्मा के विकास इसका सञ्चार करने वाले, शरीर का सञ्चार करने वाले देवता है। तो मुनिवरों! जब यह

देवतावत को, इस प्रकार, मैं स्वीकार करता हुआ, कि मेरे शरीर में प्राण गति कर रहा है, प्राण जब इस परिधि को, इस सङ्कीर्णता को त्यागता है तो बाह्य जगत में, वह वायु बन जाता है और मेरे शरीर में मानो अग्नि ज्योति बन रही है, नेत्रों के साथ में, नेत्र जब देखो, इस शरीर में रहते है तो नेत्र है, इसका बाह्य स्वरूप बन जाता है तो वही सूर्य बन जाता है। इसी प्रकार चन्द्रमा बन जाता है, सर्वत्र देवता मेरे शरीर में विद्यमान है। बेटा! जब इस प्रकार मानव अपने जीवन को चयन करने लगता है और उपासक बन जाता है तो मुनिवरों! देखो, उस मानव के जीवन में एक महानता परणित हो जाती है और वह महान बन जाता है। महान वैसे ही नहीं बनता है प्राणी, बेटा! बहुत अनुसन्धान करने से और अपने को समर्पित करने से बनता है।

सौभाग्यशाली गृह

तो बेटा! यह दो याग है, एक ब्रह्मयाग है और एक यह देव याग कहलाता है, इसमें याग होते है। इसमें संसार की सम्पदा, जो प्राकृतिक कहलाती है इसका सर्वत्र वैभव उसे प्राप्त होता है मानो उसके चरणों में ओत प्रोत हो जाती है। तो मुनिवरों! देखो, यह अग्नि हमें, अग्नि का चयन करना है। प्रातःकालीन, जब वेदों की ध्वनि होती है, जिस गृह में वेद की ध्वनि होती है वह गृह कितना सौभाग्यशाली होता है। मेरे प्यारे! जिस गृह में, जिन आश्रमों में, वेद का अध्ययन करते हुए, अपने को वेद को समर्पित करने वाले प्राणी होते है, वह आश्रम, वह गृह कितने सौभाग्यशाली कहलाते है।

तो मेरे प्यारे! हमें जीवन में सौभाग्यशाली बनना है, हमें महान बनना है, हमें इस संसार को ऊर्ध्वा में

बेटा! जो इस प्रकार की मेरी प्यारी माताएं होती है, इस प्रकार के पुत्र पुत्रियाँ होती है पुत्र और पुत्रियाँ होती है जो इस प्रकार के, महान कर्तव्य का पालन करने वाला पुरुष होता है प्रभु के राष्ट्र में गति करने वाला बेटा! उसे संसार के राष्ट्र की आवश्यकता ही नहीं, वह इस सांसारिक राष्ट्र से, जो स्वार्थवादी राष्ट्र होता है इससे वह ऊर्ध्वा में गति करता है प्राणी, वह समाज ही गति करता है। बेटा! मैंने कुछ श्रवण किया है, भगवान मनु के काल से, क्योंकि हमारे यहाँ कई मनु हुए है, जब सृष्टि का सृजन होता है तो बहुत काल, तब बिना राष्ट्र के, यह समाज चलता रहता है और वह समाज उसी काल में चलता है जब कि प्रत्येक मानव उसी प्रकार की प्रतिक्रियाँ में गति करता है इसी परिधि में रहता है। परमात्मा के राष्ट्र में, जो देव कार्य कर रहे है, उन देव को विचारना ही मेरे प्यारे! महानता कहलाती है।

सौभाग्य से याग

तो मुनिवरों! देखो, जिस गृह में मानो पुत्र वधु आती है और वह मुनिवरों! देखो, याग करती है मानो वह ब्रह्म का चिन्तन करने वाली, ब्रह्मयाग, देव याग नाना प्रकार के याग होते है मानो देखो, उन याग को करने वाला मानव सौभाग्यशाली होता है। हमारे यहाँ याग का जो कर्म बना है, वह सृष्टि के प्रारम्भ से ही बना है। एक याग ही ऐसा कर्म है जो सदैव सृष्टि के आदि से कर्म बन रहा है वह अकाट्य है, उसको कोई विशुद्धता नहीं मानो शुद्धता में रमण करता है उसको अशुद्धि नहीं कह सकते। क्योंकि वह याग है।

बालक वरुण का भविष्य

तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या, मैं विशेष चर्चाएं देने नहीं आया हूँ, विचार यह मानो बेटा!

महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज के यहाँ, जब कन्या का प्रवेश हो गया, तो बेटा! गृह स्वर्ग बन गया। जब गृह स्वर्ग बन गया, तो कुछ समय के पश्चात मेरे प्यारे! देखो, शाण्डिल्य गोत्रीय कन्या से बेटा! एक सन्तान का जन्म हुआ, जिस सन्तान का नाम बेटा! देखो, यहाँ वरुण नाम नियुक्त किया गया। मेरे प्यारे! देखो, वरुण माता की लोरियों में आनन्दित होता रहता, एक समय बेटा! महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज के यहाँ बेटा! देखो, सोमभाग कृति भानु केतु ऋषि महाराज उनके द्वार पर आये, वह अङ्गिरस कहलाते थे। मेरे प्यारे! पुत्र, आंगन में गति कर रहा था। ऋषि ने मस्तिष्कों का अध्ययन करते हुए, हमारे यहाँ बेटा! प्रथम जो विद्यालयों की शिक्षाएं, आयुर्वेद का जो ज्ञान है, वह बड़ा विशाल भण्डार है। मस्तिष्कों का अध्ययन करने मात्र से, उस मानव के जीवन की, भविष्य की आभा को प्रगट करने वाले ऋषि रहे है।

मेरे प्यारे! अङ्गिरस ने आ करके, उस ब्रह्मचारी के मस्तिष्क का अध्ययन किया, मानो पुलस्त्य वहीं विद्यमान थे, उन्होंने उनका स्वागत किया। मणिचन्द ने भी उनका स्वागत किया। उन्होंने कहा हे पुलस्त्य! गोत्र में जन्म लेने वाले, तुम्हारे वंशलज में कोई राजा नहीं हुआ, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि यह तुम्हारा पुत्र राजा बनेगा। और महात्मा पुलस्त्य आश्चर्य में चकित हो गये। उन्होंने कहा कि महाराज! यह क्या उच्चारण कर रहे हो? राष्ट्र तो निर्मम ब्रहे स्वागत ही मानो देखो, यह राष्ट्र तो नरक का गामी होता है उन्होंने कहा कि यह मैं नहीं जानता। परन्तु इसके मस्तिष्क की मध्य जो रेखा है, वह कहती है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने एक वाक ओर कहा कि ब्रह्मचरिष्यामि ब्रह्मे बालकानि गच्छतम् यह बालक पवित्र तो रहेगा, परन्तु आभा में, संशय में जीवन रहेगा। संशय का जीवन

क्या होता है? मानो देखो, वह चरित्र की आभा में सूक्ष्म बन जाता है।

नक्षत्र का प्रभाव

यह वाक उच्चारण करके अङ्गिरस मौन हो गये। पुलस्त्य ऋषि महाराज आश्चर्य में चकित हो गये, क्या हमारे वंशलज में तो सदाचारी पुरुष हुए है, महान पुरुष हुए है, इसके मूल में क्या है? तो बेटा! दार्शनिक जन जो होता है बहुत ऊँची उड़ान उड़ने लगते है। मेरे प्यारे! बहुत ऊँची उड़ान उड़ते रहते है, उन्होंने उड़ान उड़ी, कि अन्तरिक्ष में बेटा! एक स्वाति नक्षत्र होता है। और वह जो स्वाति नक्षत्र है मानो स्वाति नक्षत्र में एक सोम भूनि नाम की एक औषध होती है, उसको माताएं मेरे पुत्रो! छठे मास में ग्रहण करती है। मुनिवरों! देखो, स्वाति नक्षत्र की, जब छाया पूर्ण रूप से आती है तो उस औषध को, देखो, बुद्धिमान आयुर्वेद के जानने वाला उस औषध को पृथ्वी से लाता है। और मुनिवरों! यदि वह उस नक्षत्र में नहीं लाता, तो उस औषधि का मानो देखो, दूसरा रूप बन जाता है। उस औषध का, एक रूप यह कि स्वाति नक्षत्र की पूर्ण छाया में, उसको पान किया जाता है तो वह बुद्धिमता है और यदि दूसरे नक्षत्रों की आभा में उसको लिया जाता है तो उसका मानो देखो, द्वितीय स्वरूप बन जाता है, वह उसमें बुद्धिमान रह करके, बुद्धिमान तो रहेगा, परन्तु देखो, बुद्धि में परिवर्तन आता रहेगा।

तो मुनिवरों! देखो, ऋषि ने यह अध्ययन किया। तो मेरे प्यारे! देखो, औषधियों के विज्ञान में तो मैं विशेष जाना नहीं चाहूँगा। मैंने अपना एक साहित्यिक वार्त्ताएं प्रगट की है परन्तु इनमें वैद्यराजो की चर्चाएं भी आती रहेगी, विचार विनिमय क्या, मेरे पुत्रों! देखो, उस बालक का जन्मं ब्रहे व्रताः स्वस्ति वह बालक मुनिवरों! देखो, पुलस्त्य ऋषि महाराज ने अपना अनुसन्धान

करके और वह अपने में मौन हो गये, उसने विचार लिया कि यह सूक्ष्मता रही। मुनिवरों! देखो, उनके यहाँ, उनके वैद्यराज थे सोम भूनक ऋषि, मानो वह आयुर्वेद के ऊपर अध्ययन करते थे, उन्होंने इसमें धृष्टता की, कि वह मानो देखो, नक्षत्रों में औषधियों का वरण नहीं किया, मानो वह औषधि देखो, द्वितीय रूपों में प्रगट कराई। तो मेरे प्यारे! उसको पान करने से दूसरा रूप बन गया।

महात्मा पुलस्त्य के तीन पौत्र

तो मेरे प्यारे! आज का विचार हमारा क्या कह रहा है, कि हम मुनिवरों! देखो, कर्मकाण्ड में, कितने विशेष, हमारा कर्मकाण्ड कैसा हो, हम समर्पित करने वाले, अपने जीवन को, महात्मा पुलस्त्य मुनि महाराज के मेरे प्यारे! तीन सन्तानों का जन्म हुआ, महात्मा पुलस्त्य मुनि महाराज के जब तीन पौत्र, उत्पन्न हुए, तो मेरे प्यारे! उनका नामोकरण, उनका जन्मोकरण नाना प्रकार के, मेरे प्यारे! उनमें संस्कार देने का ऋषि ने प्रयास किया। क्योंकि मणिचन्द तो स्वतः ही बुद्धिमान थे, वह उनमें संस्कार देते रहते थे। माता भी संस्कार देती रहती थी।

माता के चिन्तन का बालक पर प्रभाव

मेरे प्यारे! देखो, जिस समय माता के गर्भ स्थल में कुम्भकरण थे, तो मेरे पुत्रों! देखो, माता एक समय, एक ऋषि के दर्शन करने के लिए जा पहुँची। तो वह ऋषि, आसन पर विद्यमान हो करके, वह लोकों की उड़ान उड़ रहा था। कि लोक क्या है? निंद्रा क्या है? यह क्या है? तो मुनिवरों! देखो, इसके ऊपर अब, वह कन्या मानो देखो, उनका मंगलं ब्रहे वह भी वहीं जा विद्यमान हुई। तो ऋषि, उन्हें अध्ययन कराने लगे। मेरे प्यारे! जैसे ऋषि कर रहा था वैसे ही वह देवी भी

करने लगी, क्योंकि बुद्धिमान तो वह स्वतः थी। तो मेरे प्यारे! देखो, अपने बालक की, जो कि चतुष माह में, आयुर्वेद का सिद्धान्त, आयुर्वेद की आभा कहती है कि चतुष माह में, बालक के अङ्ग प्रत्यंग का निर्माण हो जाता है। मानो देखो, बुद्धि के अङ्कुरों की उपज हो जाती है। तो मेरे प्यारे! देखो, जो ऋषि का क्रियाकलाप था, उस माता के विचारों में परणित हो गया, विज्ञान, एक परणित हो गया। तो मुनिवरों! देखो, वही जो विज्ञान का, ऋषि का दिया हुआ विचार, वायुमण्डल का, माता के गर्भ में रहने वाला शिशु, उसमें जब वह विचार प्रवेश कर गये। तो मेरे पुत्रों! देखो, तुमने, कुम्भकरण का जीवन दृष्टिपात किया होगा, वह कितने महान रहे है। मेरे प्यारे! उसी माता के गर्भ से, कुम्भकरण का जन्म हुआ।

जो मेरे पुत्रों! देखो, छह छः माह मैंने कई काल में तुम्हें वर्णन कराया है, मैं इनके बाल्य काल की क्रीड़ा तो कल ही प्रगट करूंगा, क्या वह गुरुओं के सहित कैसे विद्यमान होते? कैसे उनकी आभा रमण करती रहती? परन्तु देखो, तीन सन्तानों का जन्म हुआ। हमारे यहाँ, मेरे प्यारे! महानन्द जी! ने, मुझे कई काल में यह प्रगट कराया है कि आप रावण के वंश को क्यों उच्चारण कर रहे हो, मैं यह कहा करता हूँ कि हे पुत्रों! मैं रावण के वंश को नहीं, मैं ऋषि मुनियों के वंशों का वर्णन करता हूँ। कि उनमें कितनी महानता रही है और गृह आश्रमों में मानो कितनी महानता की आवश्यकता रहती है। माता कौशल्या का जीवन इसी प्रकार का था। परन्तु जितनी भी मेरी पुत्रियाँ रही है, उनका जीवन आयुर्वेद से, विज्ञान से कटिबद्ध रहता है। मुनिवरों! देखो, तब ही तो यह सन्तान और पुत्रों! को जन्म दे करके, अपने जीवन को सौभाग्यशाली बनाती है। मेरे पुत्रों! देखो, जीवन तब ही सौभाग्यशाली बनता है जब बुद्धिमानो का जन्म होता है, ऋषियों का जन्म होता

है, विवेकी पुरुषों का जन्म होता है। क्या इस मायावाद की नगरी वाला जो जीवन है, यह तो मेरे पुत्रों! धृष्टता का जीवन है मानो द्रव्यपति होना चाहिए, परन्तु द्रव्य विवेकयुक्त होना चाहिए। द्रव्य में विवेक होना चाहिए, यदि द्रव्य में अविवेक आ गया है, तो वह द्रव्य ही मानो देखो, उसको निगल जाता है। उसको नारकिक बना देता है।

तो मेरे पुत्रों! आज का विचार, अब हमारा समाप्त होने जा रहा है। कल समय मिलेगा, तो शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगे। आज का यह विचार क्या कह रहा है, कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, हम इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करें और हमारा जीवन तन्मय होना चाहिए, यह है बेटा! आज का वाक्, अब समय मिलेगा, शेष चर्चाएं हम कल प्रगट करेंगे, आज का वाक समाप्त, अब वेदों का पठन पाठन। ओ३म् मा गतौ ग्राहाणां त्वाः यौ सर्वश्चमत प्राची गाताहं मनो ब्रह्म भूः रथाः। ओ३म् सर्वाणि भद्राः गायन्त्वाहं मनो आप्यां लोकं सर्वाः इदं रथा। ओ३म् दधि रन्धि कृतां मां धेनुः गताः। ओ३म् ब्रह्मणा देवं मया सर्वं भद्रा। पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन! आज्ञा। पूज्यपाद गुरुदेवः आनन्द मंगलं भवति। दिनांक २० ०१ १९८२ अमृतसर।

21 २१ ०१ १९८२ महाराजा रावण का शिक्षण काल

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का, पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे प्रभु का ज्ञान और विज्ञान निहित रहता है। क्योंकि ज्ञान और विज्ञान में जाना,

यह प्रत्येक मानव के हृदय से गुथा हुआ सा दृष्टिपात आता है। क्योंकि आज का हमारा वेद मन्त्र, यह कह रहा है कि कोई भी संसार का मानव, ऐसा नहीं है, जो ज्ञान और विज्ञान में जाना नहीं चाहता। सर्वत्र मानव की कामना रहती है, कि मैं ज्ञान और विज्ञान में रमण करने वाला बनूँ। क्योंकि परमपिता परमात्मा ज्ञान और विज्ञानमयी स्वरूप माना गया है।

अब जो मानव यह चाहता है कि मैं प्रभु को जानना चाहता हूँ, तो प्रभु! के ज्ञान और विज्ञानमयी जगत को, उसके लिए जानना बहुत अनिवार्य होता है। हमारे ऋषि मुनि, परम्परागतों से, ऊँची ऊँची उड़ान उड़ते रहे है और ज्ञान और विज्ञान की आभा में, प्रायः वे रमण करते रहे और उन्होंने परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को जानने का प्रयास किया। उसके पश्चात वह आध्यात्मिकवाद, आत्मा के विज्ञान में जाने के लिए सदैव तत्पर रहे।

तीन इन्द्रियों का महत्त्व

मैं बेटा! तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ ऋषि मुनि विद्यमान हो करके, विद्यालयों में, ब्रह्मचारियों को शिक्षा देते रहते थे। क्योंकि हमारे यहाँ, जब आचार्य कुल में ब्रह्मचारी प्रवेश करता है तो बेटा! आचार्य उसे अपने गर्भ में धारण कर लेता है। जैसे माता अपने पुत्र को, अपने गर्भ में धारण करती रहती है इसी प्रकार, आचार्य उसे अपने गर्भ में धारण करता है। गर्भ का अभिप्राय है, वास करना। मेरे प्यारे! जब उसमें प्रतिष्ठित हो जाता है, तो आचार्य उसे एक ही वाक कहता है चक्षुर्मे शुन्धामि प्राणं में शुन्धामि श्रोत्रोंमयी, श्रोत्रों मे शुन्धामि हे ब्रह्मचारी! तू इसे मुझे अर्पित कर। मानो चक्षु, वाणी और श्रोत्र तीनों को अर्पित कर। तीन इन्द्रियाँ ऐसी है, जो बाह्य जगत से

सामग्री को लाती है।

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है महाराजा मणिचन्द्र के यहाँ, प्रथम पुत्र, द्वितीय पुत्र और तृतीय पुत्र तीन पुत्रों! का जन्म हुआ। परन्तु आचार्यजन इनके समीप आते रहे। हमारे यहाँ आयुर्वेद की विद्या, वनस्पति विज्ञान परम्परागतां से बेटा! पराकाष्ठा पर रहा है। हमने बहुत पुरातन काल में, यह वाक कहा था कि जो मानव इस संसार, समाज को ऊँचा बनाना चाहता है तो विद्यालयों में, आचार्य ऊँचे होने चाहिए। और आचार्य कैसे हो? आयुर्वेद का पूर्णत्व ज्ञान हो। वे रेखाओं को जानने वाले हो, क्योंकि मानव का जो मस्तिष्क होता है, इसमें कुछ रेखाएँ होती है और वेद के जो पण्डित होते है वह इसके मस्तिष्क का अध्ययन करके, उसके जीवन की कुछ वार्त्ताएं प्रगट कर देते है।

मेरे प्यारे! हमारे यहाँ, जब महात्मा पुलस्त्य ऋषि गोत्र में, इन तीनों सन्तानों का जन्म हुआ तो मुनिवरों! देखो, सुख देरावत्त ऋषि महाराज उनके समीप आए और उन्होंने बेटा! उनका अध्ययन किया। तो ऋषि ने एक वाक कहा, परिवार में, कि यह ग्रहणत्व प्रव्हा वरुणत्व तत्त्वामि मानो यह जो तुम्हारा प्रथम पुत्र है, यह राजा बनेगा। द्वितीय जो पुत्र है यह कोई विशेष महानता वाला नहीं है और तृतीय जो पुत्र है यह विज्ञान में रमण करने वाला बनेगा। परन्तु यह वाक प्रगट करके वहाँ से प्रस्थान किया। जब ये बाल्य मेरे पुत्रों! कुछ प्रबल हुए, तो इनका विद्यालय में प्रवेश हुआ। ब्रह्मा जी के यहाँ इनकी शिक्षा, दीक्षा। क्योंकि हमारे यहाँ, परम्परागतों से यह माना गया है कि सम्भवति अस्सुतं पालस्तिम् नाना प्रकार की उपाधियाँ होती है और उन उपाधियों में, कुछ विशेष गुण और उनका क्रियाकलाप

होता है।

ब्रह्मा

हमारे यहाँ ब्रह्मा एक उपाधि है, और ब्रह्मा उसे कहा जाता है जो वेद के मर्म को जानता है। मुझे स्मरण आता रहा, मेरे पुत्रों! मैंने कई काल में, वर्णन कराया, कि ब्रह्मा के चार मुख होते है। परन्तु प्रायः चार मुख नहीं होते, क्योंकि मुखं ब्रहे व्रणाति वह मानो चारों प्रकार की, जितनी विद्याएं है, विद्याएं तो तीन ही प्रकार की होती है। परन्तु चतुष में, विज्ञान को परणित किया जाता है। जो इनको अच्छी प्रकार जानता है, मन्थन युक्त है। तो मेरे प्यारे! वह ब्रह्मा कहलाता है। जो वेद के कर्म काण्डों को जानने वाला हो, और चारों वेदों के, एक एक वेदमन्त्र बेटा! उन्हें स्वप्नवत में आ करके और मन्त्र अपने गुणों का वर्णन करने वाला हो, इतना उसका अध्ययन, इतनी उसमें यौगिकता होनी चाहिए।

दस दिशा

तो मुनिवरों! देखो, महात्मा पुलस्त्य मुनि महाराज के, गोत्रीय तीनों पुत्र ब्रह्मा जी के यहाँ अध्ययन में लग गये। अध्ययन करने लगे। परन्तु एक समय वे बालक, जब अध्ययन कर रहे थे। तो मुनिवरों! देखो, वरुण जब अध्ययन कर रहा था, तो वह एक समय अध्ययन करता हुआ दसों दिशाओं की वार्ता प्रगट करने लगा। गुरु के चरणों में ओत प्रोत है। उन्होंने कहा प्रभु! मुझे तो दस दिशाओं का ज्ञान कराईए? मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मा ने उनको दसों दिशाओं का ज्ञान कराया। सबसे प्रथम प्राचीदिक होता है, प्राचीदिक का देवता मुनिवरों! देखो, अग्नि कहलाया गया है। अग्नि ऊर्ध्वा कहलाता है। हे ब्रह्मचारी! अग्नि ऊर्ध्वा है, यह मानव को ऊर्ध्वा में ले जाती है और

प्रकाशमयी है। इसी अग्नि का सम्बन्ध काष्ठों से होता है। इसी अग्नि का सम्बन्ध, नेत्रों से होता है। इसी अग्नि का सम्बन्ध बाह्य जगत में, द्यौ और सूर्य से होता है।

मेरे पुत्रों! इस अग्नि का चयन कराते हुए, ऋषि ने इसका ज्ञान कराया। दक्षिणीदिक का देवता, मेरे प्यारे! देखो, वरुण कहलाता है। सम्भवा नव ब्रव्हे कृतं देवाः दक्षिणीदित्यं ब्रहे व्रत्तत्वा उन्होंने कहा हे ब्रह्मचारी! यह दक्षिण है, यह मानो देखो, इसका देवता वरुण कहलाता है। मंगलं ब्रहे स्वस्ति यह मानो देखो, दक्षिण दिशा में जितना विद्युत का भण्डार है, वह रहता है। मेधो की जो उत्पतियाँ और मानो देखो, उसमें जो आभा रहती है, उसका समन्वय द्यौ और चन्द्रमा से रहता है। मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी को यह ज्ञान हुआ। अब ऋषि उसकी भूमिका बना रहा है। उन्होंने मुनिवरों! देखो, व्रणीस्तुभिः कुण्डलाकृति स्वस्तुं ब्रहे प्रणा हमारे यहाँ तृतीय प्रतीचीदिक कहलाती है जहाँ अन्न का भण्डार होता है। मानो वह वर्षा से, इन्द्र देवता प्रगट होते है। और इन्द्र देवता से मानो देखो, वह देवों की आभाएँ, शचि की सहायता से, यह वृष्टि जब प्रारम्भ होती है तो मानो देखो, वृत्तियाँ उत्पन्न होती है वृष्टियाँ होने लगती है। तो नाना रूपों में वनस्पतियों का जन्म हो जाता है। वह जो वनस्पतियों का जन्म और अन्नाद की उत्पति होती है, जिससे मानव का, इस संसार का जन जीवन चलता है। मेरे प्यारे! गतिशील होता रहता है। इसी प्रकार आभ्यां गतं ब्रह्मणे लोका उदीची देवं ब्रह्मे सोमाः रथं ब्रव्हे मानो देखो, उदीची का देवता सोम कहलाया जाता है, सोम आता है, जो सोम को पान करने वाला है, वह योगी बन जाता है।

योग

सोम कैसे पान दिया जाता है? हे ब्रह्मचारी! आचार्य के कुलों में जब ब्रह्मचारी मानो देखो, जब ब्रह्म

को अपने में पिरो लेता है, तो उस समय वह सोम का पान करता है। सोम कहते है विद्या को, विद्या का मन्थन किया हुआ, जो मानव की आभा में रमण करता है उसे सोम कहते हैं। जैसे हमारे यहाँ योगी जन, समाधिष्ट होते रहते है। और जो मानो देखो, प्राण और मन दोनों को सम्मिलान करते हुए, क्योंकि योग कहते किसको है? मन और प्राण का जब विभाजन हो जाता है। मन और प्राण जहाँ विभक्त हुए उसी काल में मेरे प्यारे! अज्ञानादि तत्छतं देवाः और जब दोनों का मिलन होता है तो उसे योग कहते है।

सोम रस

एक समय बेटा! ब्रह्मा जी, उन्हें वर्णन करा रहे थे, कि मैं जब बाल्यकाल में था तो एक समय मानो ऊर्ध्वा मुख बना करके, आसन पर विद्यमान हो गये, सङ्कल्प से युक्त, हमने एक सौ एक वर्ष तक की समाधि, एक सौ एक वर्ष तक मानो देखो, सङ्कल्प किया और ब्रह्मरन्ध्र को मानो मूलाधार से ले करके, स्वाधिष्ठान, जहाँ नाभि, नाभि, हृदय और कण्ठ और स्वाधिष्ठान और त्रिकुटी उसके पश्चात ब्रह्मरन्ध्र आता है। इन तीनों में जब प्राण और मन को गमन करने लगे, तो गमन करके मानो ब्रह्मरन्ध्र के ऊपर, एक पिपाद स्थान होता है। उस पिपाद स्थान में से परमाणु झरने लगते है। और उन परमाणुओं को झरने वाला, स्वादिष्ट अग्रणा रसना के अग्र भाग को, उसको पान करता है। उस सोम को, जब पान करता है तो जितना ब्रह्माण्ड है, यह ब्रह्माण्ड उसके लिए खिलवाड़ बन जाता है। मानो देखो, लोक लोकान्तर, उसके ब्रह्मरन्ध्र की छाया करने लगती है। तो मानो देखो, यह ब्रह्मणास्ते वह योगी कौन, रस का पान करता है। वह उदीची देखो, वह प्राण का देवता हे ब्रह्मचारी! वह सोम कहलाता है। तुम सोम रस को पान करने वाले बनो। सोम रस

किसे कहते है? व्यष्टि और समष्टि को, व्यष्टि को समष्टि में परणित कराने का नाम सोमरस कहलाता है।

तो मुनिवरों! देखो, जब यह वाक उन्होंने प्रगट किया तो उसकी कृता, ब्रह्मचारी प्रसन्न होने लगा। उन्होंने ध्रुवा का ज्ञान कराया, ध्रुवा का देवता विष्णु है, ध्रुवा का देवता कौन है? विष्णु! मुनिवरों! देखो, जो पालन करने वाला है। संसार का कौन पालन कर रहा है? विष्णु, मेरे प्यारे! देखो, ध्रुवा में गमन करने वाला, विष्णु है। जो नाना प्रकार की वनस्पतियों को और प्राणी मात्र को बेटा! पालन के रूपों में रमण करा रहा है। मानो वह ध्रुवा में गति कर रहा है। सम्भवितां हेवगृहितो देवाः तो मुनिवरों! देखो, वह ध्रुवा में, जब ब्रह्मचारी प्रवेश होता है, विष्णु का पालन करने वाला श्रृङ्गार करता है, स्वयं भी पालना की पुकार करता रहता है। तो मेरे प्यारे! विष्णु रूप बन करके और विष्णुश्चन कहलाता है। ऊर्ध्वा का देवता बृहस्पति कहलाया गया है बृहस्पति कहते है, जो ज्ञान की वृष्टि करने वाला है। ज्ञान देता रहता है। तो मुनिवरों! देखो, इसी से, हमारे यहाँ एक दूसरां का निर्माण भी हुआ। बृहस्पति बृह्श्चं ब्रहे मानो देखो, जो ज्ञान की वृष्टि करता हुआ मुनिवरों! देखो, ऊर्ध्वा में गमन करता है। आचार्य सदैव ऊर्ध्वा में रहते है। इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, वह सम्ब्रह्मणे व्रत्ताः वह वृष्टि करने वाला है, बृहस्पति!

तो मुनिवरों! देखो, जब उन्होंने यह ज्ञान कराया, तो वरुण ने कहा प्रभु! यह तो मैंने जान लिया। परन्तु ईशान कोण का देवता कौन है? उन्होंने कहा ईशान कोण का देवता द्यौ कहलाता है। उन्होंने कहा दक्षिणाय जो कोण है, उसका देवता कौन है? उन्होंने कहा इसका देवता शचि कहलाता है। उन्होंने कहा उसका देवता मेध कहलाता है। उन्होंने कहा कि उदीची का देवता कौन है? उदीची, सोम का देवता कौन है उन्होंने कहा उसका देवता ज्ञान है। तो मेरे प्यारे! जब उन्होंने दसों

दिशाओं का ज्ञान दिया और वह बालक अच्छी प्रकार ज्ञान को जानने लगा, कोई ब्रह्मचारी ऐसा नहीं था, वरुण के द्वारा, जो इस प्रकार की जानकारी और मानो इतना ऊर्ध्वा मस्तिष्क वाला हो, तो ब्रह्मा ने उनको दशानन कहना प्रारम्भ किया। उन्हें दशानन कहा। उसने कहा हे ब्रह्मचारी! अब तुम इसके ऊपर अध्ययन करो।

मेरे प्यारे! उन्हें प्रत्येक दिशाओं का ज्ञान करा करके, ब्रह्मा जी मौन हो गये। वह ब्रह्मचारी एकान्त स्थली में विद्यमान हो करके उनका अध्ययन करता रहा। मानो अध्ययन की चर्चाएं होती रही, समादेश अपने में धारण करते रहे। अब मुनिवरों! देखो, तीनों ब्रह्मचारी अपने में अध्ययन करते रहे, परन्तु उन दशाओं का ज्ञान, वरुण ने प्राप्त किया, गुरुओं के चरणों में। मेरे प्यारे! देखो, वह दिशान देवाः भविष्यम् कर्मकाण्ड को जानने वाला, वह कर्म काण्ड की चर्चा करते रहते। और मुनिवरों! देखो, तृतीय वह बाल्य वर्णासुतम् वह मेरे प्यारे! परमाणु विद्या में गति करते रहते थे।

वर्ण व्यवस्था का निर्माण

तो मुनिवरों! देखो, इसलिए आयुर्वेद की आवश्यकता आचार्यों को रहती है। क्योंकि आचार्यों को, आयुर्वेद की इसलिए आवश्यकता है, क्योंकि वे मस्तिष्क का अध्ययन किए बिना, कोई भी मानव, वर्ण व्यवस्था को ला नहीं सकता। क्योंकि वर्ण व्यवस्था का जो निर्वाचन होता है, विद्यालयों में होता है। विद्यालयों में प्रायः इनका निर्माण होता रहता है। भगवान मनु ने जब वर्ण व्यवस्था को लाने का प्रयास किया, तो समाज को चार विभागों में विभक्त कर दिया। परन्तु वह विद्यालयों से किया गया। मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ विद्यालयों में ही ब्रह्मचारियों का अध्ययन किया जाता है। यह कौन से गुण वाला बन सकता है? कौन सा

कर्म करने वाला है। मेरे प्यारे! देखो, इसके रूपों में परम्परागतों से ही, कर्म ब्रह्मणे कृता देवाः क्योंकि कर्म करने वाला प्राणी सदैव ऊर्ध्वा मुख में गति करता रहता है। वह ऊर्ध्वा को प्राप्त होता रहता है।

तो मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ ब्रह्मा जी ने, उस वर्ण व्यवस्था को मानो देखो, अपने विद्यालय में निर्धारित किया। हमारे यहाँ बुद्धिमान आचार्यों के द्वारा ही, समाज की रचना होती है। समाज की आभा, उसी में परणित होती रहती है और समाज का निर्माण भी उसी काल में होता रहता है।

विद्यालय से राष्ट्रवाद

तो मेरे प्यारे! देखो, उससे राष्ट्रवाद की उत्पति, मुनिवरों! देखो, विद्यालयों से होती है। तो हमारे यहाँ एक वाक उच्चारण करने का अभिप्राय कि बेटा! संसार में प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्याएँ, संसार में ज्ञान के इच्छुक रहते है और ज्ञान होना चाहिए। क्योंकि ज्ञान के बिना मानव अपंग कहलाता है। और ज्ञान, मन्थन किए बिना प्राप्त नहीं होता। एक वस्तु को हमने श्रवण किया है, उसके ऊपर चिन्तन करना, सूक्ष्म रूपों में उसे ले जाना। क्योंकि मानव का यह जो शरीर है इसमें भी बेटा! देखो, पांचों तत्त्व गति करते रहते है और जितना यह ज्ञान है, यह पांचों लोकों में, पांचों प्रणस्सुति पांचों तत्त्वों में गति करता रहता है। मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्म कैसे इसमें ओत प्रोत है, कैसे गति कर रहा है, यह सब मुनिवरों! देखो, उस महान, पञ्च लोकों में, आभा में रमण करने वाला है। क्योंकि लोकां ब्रह्मणा सुते पञ्च लोक कहलाता है। पञ्च लोक में, प्रत्येक मानव गति कर रहा है और आत्मा गति कर रहा है।

तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या, मैं विशेष चर्चा तो तुम्हें देने नहीं आया हूँ, केवल परिचय ही देने के लिए आता हूँ कि हमारे यहाँ प्रत्येक मानव, जब

अपनी आभा में गति करता रहता है, तो उस आभा में गति करने वाला प्राणी, इस संसार सागर से पार हो जाता है। क्योंकि इस परमात्मा ने जो वेद की सुकृत विद्या है इसमें प्रत्येक वस्तु का ज्ञान, हमें प्राप्त होता है। मन्थन करने वालों को प्राप्त होती है। मेरी प्यारी माता, जब यह विचारने लगती है, क्या, मैं अपने ही गर्भ से, महान सन्तान को जन्म देना चाहती हूँ, तो माता का जो विचार, मानो परमाणुओं में गति करता है। उन्हीं परमाणुओं से, बालक का निर्माण होता है। तो माता अपने को सौभाग्यशाली और चिन्तन में स्वीकार करती हुई, अपने जीवन का, उसे ज्ञान हो जाता है।

तो मेरे प्यारे! हमारे वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह, कि प्रत्येक मानव इस संसार में ज्ञान चाहता है, चाहता है कि वह ज्ञान स्वरूप, इसीलिए उस प्रभु के राष्ट्र में, जो भी प्राणी आया है, वह ज्ञान स्वरूप बनना चाहता है, ज्ञानी बनना चाहता है। क्योंकि उसके ज्ञान युक्त राष्ट्र में वह मानव विद्यमान है। वह प्रभु! ज्ञान और विज्ञान में रमण करने वाला है ज्ञान और विज्ञान के राष्ट्र में जो प्राणी रहता है, वह उसकी आभा को जानना चाहता है। यह है बेटा! आज का वाक्, मैं कोई विशेष चर्चाएं तुम्हें प्रगट करने नहीं आया हूँ, शेष चर्चाएँ हम कल प्रगट करेंगे, आज का विचार, अब हमारा यह समाप्त होने जा रहा है। ओ३म् मधु मा रथं आभ्यां देवाः सर्व च प्राची गताः मां धेनु रथं आभ्यां दधि ब्रह्मणश्च मा रेवं आपा। ओ३म् ब्रह्मणा देवं सर्वाः गतचं देव्यं ऋताः। अच्छा भगवन्! आज्ञा दिनांक २१ ०१ ८२ अमृतसर

22 २२ ०१ १९८२ महाराजा रावण को दीक्षांत उपदेश

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का

गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, वह महामना, जो सर्वत्र व्याप्त हो रहा है, उसकी व्यापकता और वह कैसे इस संसार में पिरोया हुआ है, वह प्रत्येक वेदमन्त्र उस महानता का परिचय देता रहता है। क्योंकि उसकी महानता तो, प्रकृति के कण कण में दृष्टिपात होती रहती है। एक समय त्रेतकेतु ऋषि महाराज अपने आसन पर विद्यमान हो करके वह गान गा रहे थे। उद्गान गाते हुए उन्हें कुछ ऐसा प्रतीत हुआ, कि जो वायुमण्डल में प्राण नाशक परमाणु थे, वह मुनिवरों! देखो, उनके गान गाने से, वह मृतक से प्रतीत होने लगे। जैसे वह मृतक हो गएं हो। तो उन्हें यह प्रतीत हुआ, कि वेद में जो उद्गान की महिमा का वर्णन आता है, कि हम सबको उद्गान गाना चाहिए तो उससे यह सिद्ध हुआ कि हमारी जो वाणी है, वह जितनी वेद के प्रकाश से गुथी हुई होगी, मानो उतना ही वायुमण्डल पवित्र होगा।

उद्गान का महत्त्व

क्योंकि मुझे स्मरण आता रहता है, कुछ वैज्ञानिकों की चर्चाएं भी, एक परमाणु को जो त्रि वार्ष्णेय परमाणु कहलाता है। मानो उसका जब विभाजन ऋषि मुनि करते रहते थे, तो बेटा! जितना यह ब्रह्माण्ड है नाना निहारिकाओं वाला है, यह उस परमाणु के विभक्त करने से, विभाजन करने से, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड का चित्र उसमें दृष्टिपात आने लगता है। तो मेरे प्यारे! इससे हमें प्रतीत होता है, कि हम जो प्राणनाशक और प्राणवर्धक जो दोनों प्रकार के परमाणु गति कर रहे है, मेरे प्यारे! हमें उन परमाणुओं को ऊर्ध्वा में ले जाने के लिए, पवित्र बनाने के लिए, हमें उद्गान

गाना चाहिए। हमें, नम्रता से उद्गान और तन्मय हो करके उद्गान गाना चाहिए। जैसे यज्ञशाला में, यज्ञमान आहुति दे रहा है, परन्तु उद्गाता, उद्गान गा रहा है और उद्गान गाता हुआ, वाणी को पवित्र बना रहा है। तो इन शब्दों के पवित्र बनाने की जो प्रतिभा है, अथवा उसका जो वर्णन, वेद का मन्त्र कर रहा है। बेटा! वह शब्दों की प्रतिभा का वर्णन कर रहा है। इसीलिए हमारे यहाँ जितने भी महापुरुष होते है, वे जिस स्थली पर ये विचारते है कि हमें तप करना है अथवा चिन्तन और मनन करना है, उस आसन को मेरे प्यारे! अपने प्राण के द्वारा, याग के द्वारा, विचारों के द्वारा, वहाँ का वायुमण्डल पवित्र बनाते जा रहे है।

ऋषियों का अकाट्य सिद्धान्त

तो यह बेटा! साहित्य की वार्ता है मानो विचार क्या, इसीलिए हमारे यहाँ याग का वर्णन है। संसार का प्रत्येक प्राणी याग कर रहा है। क्योंकि शुद्ध कामना, शुद्ध परमाणुओं को, वायुमण्डल में भरण करने का नाम याग कहलाता है। यह सृष्टि के आदि से ही ऋषि मुनियों का बेटा! अकाट्य सिद्धान्त माना गया है। क्योंकि परमाणुवाद को तो मैं करुँगा ही, परन्तु उसको जानना, मानव का, मानवीय दर्शन कहलाता है। क्योंकि मानव का एक एक अणु, एक एक परमाणु बेटा! अग्नि की, विद्युत धाराओं पर विद्यमान हो करके गति करता है। इसलिए आज के हमारे वेद पाठ में, अग्नि की बड़ी महानता का वर्णन किया जाता है। यह अग्नि ही बेटा! जो मानव के चित्रों को ले करके, वायु मण्डल में गति कराती है। बेटा! एक दूसरे से गुथा हुआ, यह जगत, ऐसा प्रतीत होता है, क्या मानव जैसे आभा में रमण कर रहा हो। प्राणी मात्र का जीवन,

एक दूसरे से गुथा हुआ है।

माता से बाल्य

तो मेरे प्यारे! आओ, मैं तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाने के लिए आया हूँ, जहाँ मानवीयता का अवधान होता है। बेटा! मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय दिया, कि हमारे यहाँ जितना भी निर्माण होता है, मानवीयतव का, वह माता के गर्भस्थल में होता है और द्वितीय विद्यालयों में होता है, आचार्यों के चरणों में ओत प्रोत हो करके। परन्तु जो विचार माता परणित कर देती है, वह आचार्य नहीं दे सकता। जो माता अपने में तपस्वी बन करके, तपस्वी बना देती है वह आचार्य, उसे तपस्या नहीं दे सकता। मेरे प्यारे! वार्ता तो बहुत, इस संसार की, बहुत सी चर्चाएं है। मेरे प्यारे! जो शुभचिन्तक है, माता अपने आसन पर विद्यमान है, याग कर रही है, अग्निहोत्र करके देखो, नया जीवन दे रही है। मेरे प्यारे! प्रभु से उपासना करती हुई, अपने बाल्य के लिए शुभकामना करती रहती थी। परन्तु वह विचार दे रही है, कि प्राण चल रहा है, अग्नि का प्रहार चल है, द्दष्टिपात हो रहा है। मेरे प्यारे! माता प्रसन्न हो रही है। माता के उद्गार मुनिवरों! देखो, माता के गर्भ में, जो बाल्य रहता है उसमें प्रवेश हो रहे है। मुनिवरों! वही, बालक, जब विद्यालय में प्रवेश करता है, तो उसकी बुद्धि प्रखर हो जाती है। मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण है, मैं उस काल की चर्चा करने जा रहा हूँ, जिस काल में, मेरे प्यारे! विद्यालय में, आचार्यों का मिलाप मानो उसकी बुद्धि और उसके तप के साथ किया जाता है। ब्रह्म आयु उपदेश हो रहे है।

कर्मकाण्ड की आभा

मेरे पुत्रों! देखो, चित्त, वह बाल्य, वह कर्म काण्ड की आभा में जाना चाहता है। कर्मकाण्ड में

प्रवेश करना चाहता है। परन्तु कर्म काण्ड किसे कहते है? जो मुनिवरों! देखो, अपने मानवीयतव को शोधन बनाता है। प्रत्येक इन्द्रियों के विज्ञान को जानता है, और विज्ञान के कर्में ब्रहे उसका नाम कर्मकाण्ड है। मेरे प्यारे! यह जो मानव शरीर है, यह एक प्रकार की यज्ञोमयीशाला कहलाती है। और इस यज्ञोमयी शाला में, जो अग्नि तप रही है, उस अग्निष्टोम याग के लिए, मेरे पुत्रो! यह जो कर्म होता है, साकल्य लाते है और हृदय रूपी अग्नि में स्वाहा दे रहे है। और मेरे प्यारे! देखो, उस हृदय का समन्वय, यह जो बाह्य हृदय परमपिता परमात्मा का जो तुम्हें अनन्तता में दृष्टिपात आ रहा है। नाना निहारिकाएं है।

मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन किया है नाना निहारिकाएं बेटा! जो अनन्त काल तक परणित होती है। एक एक निहारिका के मण्डलों की, मण्डलों में भी अवन्तिका की, परन्तु सूर्यों की गणना करने लगोगे, तो तुम्हें अनन्तता प्राप्त होगी। शनि मण्डलों की, जब गणना करने लगे। तो अनन्तता में दृष्टिपात आयेगा। मेरे प्यारे! सूर्य अनन्त है, क्या, यह जो निहारिकाओं वाला जगत, यह हृदय है, जिस हृदय से बेटा! यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड गति कर रहा है। ऐसे ही मानव के हृदय में जब याग होता है। जब हृदय रूपी याग करता है प्राणी, अग्निष्टोम, तो बेटा! नाना होता, वह जो साकल्य ला करके, और वह होता, साकल्य बन करके वायुमण्डल में और प्रभु के हृदय से उसका समन्वय होता है। तो बेटा! यह कर्मकाण्ड की आभा कहलाती है। आज मैं बेटा! तुम्हें परिचय देने आया हूँ, विशेषता में नहीं, यह आध्यात्मिकवाद और भौतिकवाद दोनों का समन्वय कर दिया है।

ब्रह्मा ने कर्मकाण्ड की उपासना करते हुए और मुनिवरों! देखो, आदि ब्रह्मचारियों को बेटा! यह शिक्षा दी और उन्होंने कहा तुम्हारी कर्मकाण्ड में विशेष वृत्ति

हो, तो तुम कर्मकाण्डी बनो। प्रभु को एक एक कण कण में पिरोया हुआ स्वीकार करो। मेरे प्यारे! देखो, कहाँ, कैसे, मानव विद्यमान होता है, उसको कर्मकाण्ड कहते है। जैसे मुनिवरों! देखो, एक यज्ञशाला में, अग्नि का चयन कर रहा है। परन्तु अग्नि की परिक्रमा कर रहा है। जोन से, विध से, आभा में होनी चाहिए। यह कर्मकाण्ड का विषय है। यज्ञमान मुनिवरों! देखो, पश्चिम दिशा में विद्यमान होता है, क्योंकि वह कुबेर है। वह वरुण का अधिपति कहलाता है मानो वह यज्ञमान है, उद्गाता मुनिवरों! देखो, कहा? उत्तरायण में रहता है। उद्गान गा रहा है, सोम रस में तन्मय हो कर। मेरे प्यारे! वह उत्तरायण में रहता है और मुनिवरों! देखो, पूर्व दशा में सम्भवति ब्रह्मण अध्वर्यु रहता है। अध्वर्यु क्यों रहता है? क्योंकि वह सबको प्रकाश देता है। त्रिवत कहलाता है। मेरे प्यारे! त्रिनेत्रों वाला कहलाता है। क्योंकि त्रिवर्धा में ही यह जगत विद्यमान रहता है। मेरे प्यारे! दक्षिणायन में ब्रह्मा रहता है। ब्रह्मा का अभिप्राय क्या है? क्या, सर्वत्र विद्युत का जितना कोष है, वह सब ब्रह्मवर्चोसि कहलाता है। मेरे प्यारे! जहाँ जिसका जैसा स्थान हो, उसको वहाँ विद्यमान होने का नाम कर्मकाण्ड कहलाता है। यह कर्मकाण्ड की प्रतिभा, कहीं कहीं मेरे प्यारे! ऐसा है, जब अश्वमेध याग होते हैं। तो कहीं ब्राह्मण, ब्रह्मा राजा को ऊर्ध्वा स्थान दे करके, उसका राज्याभिषेक किया जाता है। वह अश्वमेध याग में आता है।

विशेष विज्ञान

मेरे प्यारे! देखो, यह कर्मकाण्ड की आभा प्रगट कराते हुए, ब्रह्मा ने कहा हे ब्रह्मचारियों! तुम कर्मकाण्डी बनों। मेरे प्यारे! वह कर्मकाण्ड के ऊपर अध्ययन करने लगे, कि मानो देखो, वह सुनीति ब्रह्मचारी, उनके द्वारा, उनके चरणों में ओत प्रोत हो, उनके अध्ययन करने का

विषय, केवल त्रव्यवाद था। जिसे हम विज्ञानकाण्ड कहते है। विज्ञान कहते है। यो तो बेटा! सर्वत्र में विज्ञान विद्यमान है। परन्तु ज्ञान और विज्ञान ज्ञान का होना उसकी प्रतिभा, उसकी प्रतिभाषिता में रमण करने का नाम विज्ञान कहलाता है। आज जब हम विज्ञान में रमण करते है, तो ऐसी, ऐसी तरंगों को, हम उद्बुद्ध करना, हम दृष्टिपात करते है। मानो जिन तरंगों को हम, इस संसार की, प्रतिभा में दृष्टिपात करने लगते है। जैसे बेटा! वैज्ञानिक, हमारे यहाँ वैज्ञानिक जनों ने, मेरे प्यारे! देखो, नाना सूर्या की किरणों को, एकत्रित किया, ब्रह्मा जी ने यही वाक कहा हे ब्रह्मचारी! संसार में वो वैज्ञानिक, विशेषतम होता है, जो सूर्य की किरणों के द्वारा, वाहनों को गति देता है। परन्तु जो पृथ्वी के, खनिज के द्वारा वाहन को गति देता है वह उस वायु मण्डल को अशुद्ध करता है। मेरे प्यारे! यह वैज्ञानिक तथ्यों में प्राप्त होते है। परन्तु वायुमण्डल में एक त्रुशुक नाम की, वायु गति करती है। मानो वह इतनी शक्तिशाली रहती है, उसका द्यौ से सम्बन्ध रहता है। उस वायु को, यन्त्रों में लाने का प्रयास करते है। और यन्त्रों में ला करके उसके द्वारा वाहन को गति देते है। वह मानो विशेषकर विज्ञान होता है। जो महानता में रहता है। उससे मानव की बुद्धि में घृणित पना नहीं आता। उसमें मानव का चरित्र नष्ट नहीं होता।

परन्तु यदि विज्ञान से मानव का चरित्र नष्ट हो गया है, तो वह विज्ञान अशुद्ध है। परन्तु एक मानव, यहाँ से, पृथ्वी के, खनिज को ले करके वाहन को गति दे करके चन्द्रमा में चला गया। क्योंकि पृथ्वी के गर्भतः होने के नाते, उसमें अभिमान की मात्रा बलवती हो जाती है। परन्तु देखो, मानव के जीवन का सम्बन्ध द्यौ से रहता है। और यदि इसमें द्यौ, आभा में, गति करने से उसी से विशेष समन्वय रहता है तो उस धातु को यदि हम, एकत्रित करते है, उससे वाहनों में गति देते

है। तो मेरे पुत्रों! देखो, वाहन में गति देने से, वह हमारे राष्ट्र, समाज के लिए लाभप्रद होता है। पृथ्वी में नाना प्रकार की धातु विद्यमान है, क्योंकि सूर्य की किरणों से उनका समन्वय रहता है और सूर्य का समन्वय रहता है विद्युत से, द्यौ से, और द्यौ से विशेष धातु का मानो सीधा सम्बन्ध होता है वह धातु एकत्रित करना वैज्ञानिक के लिए कई गुणा लाभप्रद होती है। तो मेरे पुत्रों! मैं विज्ञान की चर्चाओं में तुम्हें ले जाने नहीं आया हूँ, केवल विचार विनिमय क्या, मुनिवरों! देखो, पूर्व ऋषि मुनि, ब्रह्मा इत्यादि बेटा! अपने विद्यालय में जब शिक्षा देते थे तो विज्ञान को भर देते थे। विज्ञान का भरण कर देते थे।

मेरे पुत्रों! देखो, सुनीति प्रहा, ब्रह्मचारी उस विद्या को पान करने लगा। ब्रह्मचारी उस विद्या को पान करने लगा, अध्ययनशील हो गया। मेरे प्यारे! देखो, उसी काल में, तुम्हें प्रतीत होगा, तुम्हें दृष्टि चारी हुई होगी कि उस विद्यालय में महाराजा हनुमान ने भी शिक्षा प्राप्त की। मेरे प्यारे! देखो, वे भी इसी विद्या को पान करते थे, इसी विद्यालय में, शिक्षा का अध्ययन, आभा में रमण करता रहा। क्योंकि मुझे स्मरण है कई काल में, वाक प्रगट भी किए है, कि हनुमान जी सूर्य की, सर्वत्र विद्या को, अपने कण्ठ में धारण करते रहते थे और कण्ठ से उसका दमन करके, विज्ञान में गति करते थे।

ज्ञान, कर्म और उपासना

मेरे प्यारे! देखो, इसी विद्यालय में नाना ब्रह्मचारी ओर भी अध्ययन करते थे। परन्तु विद्या यहाँ, तीन ही प्रकार की मानी गई है। तीन प्रकार की विद्याओं का, उपयुक्त होना, परम्परागतों से माना गया है। जो हमें वैदिक साहित्य से प्राप्त होता है। मुनिवरों! सबसे प्रथम ज्ञान, ज्ञान के पश्चात कर्मकाण्ड और उपासना। तो

मुनिवरों! ज्ञान का अर्थ तो जानकारी हो गई और कर्मकाण्ड उसके अनुसार कर्म करना हो गया और उपासना वह जो इन दोनों के द्वारा जानकारी ली है मानो उस विद्या का सदुपयोग करने का नाम, उपासना कहीं जाती है। उपासना की विधि का नाम बेटा! नाना प्रकार के भेदन है। विहित सीमा काण्डों में नाना प्रकार के भेदन है। तो यह बाह्य जगत में भी नाना प्रकार है और आन्तरिक जगत में भी नाना प्रकार है बेटा! देखो, वह अखण्डता का काण्ड बन जाता है।

तो बेटा! विचार विनिमय क्या, मुनिवरों! देखो, यह विद्यालय में, शिक्षा अध्ययन होती रही। जब विद्यालय में बेटा! शिक्षा पूर्णताम् उन ब्रह्मचारियों ने, अपने में धारण कर ली, धारण करने के पश्चत मानो देखो, दसों दिशाओं को जानने वाला, दशानन बन गया और मुनिवरों! कर्म काण्ड को जानने वाला, अश्वताम मेरे प्यारे! कर्मकाण्डी बना और विज्ञान काण्ड में अध्ययन करने वाला, सुनीतिकेतु बना। तो मेरे प्यारे! वे विद्या में पूर्णता को प्राप्त हो गये। पुलस्त्य ऋषि महाराज, यह जो पुलस्त्य गोत्र है इसमें परम्परागतों से ही, इस विद्या की उद्बुद्धता के ऊपर अधिपथ्य रहा है, और उन्होंने बहुत अनुसन्धान किया। अनुसन्धानवेत्ता ही इस संसार में, महानता को प्राप्त होते रहे है। क्योंकि हमारे यहाँ बेटा! जब यह विद्या अध्ययन कर ली, अध्ययन में कुछ समय हो गया, तो मुनिवरों! देखो, वरुण का मन एक समय गुरु अप्रणाम पत्नी को दृष्टिपात करके, चञ्चलता को प्राप्त हुआ। मेरे प्यारे! देखो, उस चञ्चलता को, उन्होंने अपने ज्ञान विज्ञान से मानो देखो, उसे शान्त कर दिया। परिणाम क्या मुनिवरों! देखो, शब्द ही महाशाप बना जीवन में। जब महान शाप, अपश्रात बनता है, मानव की चञ्चलता से, चञ्चलता के भी कुछ प्रकार होते है। परन्तु एक चञ्चलता आई, उसके बहुत अपश्रात बन जाते है। मानव के जीवन

का, जो साहित्य होता है वह समाप्त होने लगता है।

महाराजा रावण की चञ्चलता

तो मेरे प्यारे! विचार क्या मुनिवरों! देखो, इन विद्यालय के ब्रह्मचारियों ने विद्या अध्ययन कर ली, विद्या अध्ययन के पश्चात मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मणा प्रवण स्वस्ति देवाः ब्रह्मा जी ने महात्मा पुलस्त्य जी को निमन्त्रित किया और देखो, उन ब्रह्मचारियों के पिता मणिचन्द्र को भी निमन्त्रित किया और उनके निमन्त्रण के अनुसार, वह विद्यालय में आये, तो मुनिवरों! देखो, विद्या में ब्रह्मचारी पारायण हो गये, पुलस्त्य ऋषि महाराज बड़े प्रसन्न हुए, आचार्य के चरणों की वन्दना की, और कहा कि धन्य है प्रभु! आप ने हमारे वंश को पुनः से महान बनाया है। परन्तु ब्रह्मा जी ने महात्मा पुलस्त्य से एक वाक कहा कि समय की प्रबलता इतनी विशेषकर है, यह जो तुम्हारा जेठी पुत्र है, यह पुत्र मन का विशुद्ध नहीं है। यह मन का विशुद्ध नहीं बनेगा जीवन में।

मेरे प्यारे! उन्होंने कहा भगवन! यह क्यों? उन्होंने एक वाक कहा अस्वां ब्रह्मे स्वस्ता कल्पो वस्व मंगलं वृत्ति देवत्या मानो देखो, इसलिए क्यों, यह ब्रह्मचारी ऐसा है? इसके ऊपर तुम पुनः विचार विनिमय करना। मैंने तो तुम्हें संकेत दे दिया है, इसके विचार राजसी है, और राजसी विचारों में कोई महानता नहीं है। परन्तु मेरे यहाँ तो विद्या दी जाती है, विद्याओं का प्रसार किया जाता है। अब विद्या को कौन ब्रह्मचारी, किस प्रकार उसका अध्ययन करता है, यह विषय आचार्यों का नहीं होता, यह विषय उनका होता है, जो उसको अध्ययन करता है। किस दृष्टि से अध्ययन करता है। मानो एक वेद के, वेद का पठन पाठन करने वाला मानो किस दिशा में, अपने को ले जाता है। इस दिशा का आचार्य वर्णन नहीं कर सकता। वेद के पठन पाठन करने वाला

भी, ह्रासता को प्राप्त हो सकता है। परन्तु बहुत सूक्ष्म अध्ययन करने वाला भी महान बन सकता है।

मेरे प्यारे! देखो, यह वाक उन्होंने प्रगट किया और उन्होंने कहा द्वितीयां ब्रह्मे स्वस्ति बद्धा इसी के आधार पर मानो देखो, दोनों ब्रह्मचारियों का जीवन महान बनेगा। परन्तु देखो, जो सूक्ष्मतां ब्रह्मे व्रताम् यह ब्रह्मचारी वैज्ञानिक बन करके, अपने को महान बनाता रहेगा। मेरे प्यारे! उनके गुणों का वर्णन किया और उन्हें यह कहा जाओ! ब्रह्मचारियों को तुम यहाँ से ले जाओ।

ब्रह्मा जी का दीक्षान्त उपदेश

मेरे प्यारे! समारोह हुआ, ब्रह्मचारी पंक्तियाँ लगा करके विद्यमान हो गएं और उस समय ब्रह्मा जी ने अपना दीक्षान्त एक उपदेश होता है। मेरे प्यारे! वे दीक्षान्त उपदेश देने लगे, क्योंकि प्रत्येक मानव अपने में, उऋण होना चाहता है। ब्रह्मा जी अपना उपदेश दे करके, उऋण होना चाहते थे। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने उऋण होने के लिए, ब्रह्मचारियों की पंक्ति, विद्यमान है, और उन्होंने अपना दीक्षान्त उपदेश प्रारम्भ किया। हे ब्रह्मचारियो! हमारे इस विद्यालय में, परम्परागतों से ही, ब्रह्मचारियों को, शिक्षा और दीक्षा दी जाती है। मानो दीक्षा का जो माध्यम है वह, वेद की तरंगे हैं, जो मानव प्रातःकालीन सन्ध्या के गर्भ में जाता है जब रात्रि और दिवस दोनों का मिलान होता है, इसी प्रकार मानो देखो, तरंगों का और वेद की विद्या इन दोनों का समन्वय होता हुआ, ब्रह्मचारियों! तुम्हारे हृदय में वह प्रवेश करता है। उससे तुम्हारा ब्रह्मचर्यतव ऊर्ध्वा में गति करता है। क्योंकि बिना साधना के ब्रह्मचर्य की आभा को कोई मानव एकत्रित नहीं कर सकता। क्योंकि ब्रह्मचर्य को वहीं ऊँचा बना सकता है जो साधक होता है, जो प्राण की गति के ऊपर, अपने को उसमें परणित कर देता है, जैसे हे ब्रह्मचारियो! मैंने

दिशाओं की आभा और उसका ज्ञान विज्ञान तुम्हें प्रगट कराया जैसे एक एक दिशा का देवता है, और वह देवता भी मानो एक सूत्र का देवता है। वह भी सूत्र में पिरोएं हुए है। जैसे तुम इस देवताओं के सूत्र में, जैसे तुम्हारा जीवन देवताओं से पिरोया हुआ है। एक ही देवता का भी कोई सूत्र है।

जीवन का दिशाओं से सम्बन्ध

दीक्षान्त उपदेश देते हुए उन्होंने कहा कि पूर्व दिशा का देवता अग्नि है, दक्षिण दिशा का देवता इन्द्र है, और पश्चिम दिशा का देवता वरुण है और उत्तरायण का देवता सोम है और ध्रुवा का देवता विष्णु है और ऊर्ध्वा का देवता बृहस्पति है। मानो ऐसे ही ईशान कोण का देवता सूर्य है, और दक्षिणाय का देवता अदिति है। मानो इसी प्रकार पश्चिम दिशा की कोण का देवता मेध है और सोमं ब्रव्हे उदीची का, सोम का, देवता ज्ञान है और ब्रहे कृतां देवाः यह दस दिशा कहलाई जाती है। परन्तु यह जो हमारा मानवीय जीवन है, इससे इन दिशाओं का बहुत विशेष घनिष्ट सम्बन्ध रहता है क्योंकि जब हम पूर्व में अपने जीवन को ले जाते है तो हम प्रकाश में होते हैं। दक्षिणाय में ले जाते है तो अन्धकार ब्रह्वी असुतो प्रकाश में ले जाते है तो कुबेर बनते है, और जब उत्तरायण में जाते है तो सोम, ज्ञान, विवेकी बन जाते है। इसी प्रकार ध्रुवा में जाते है तो खनिज के स्वामी बन करके, हम विष्णु को दृष्टिपात करते है। ऊर्ध्वा में जाते है तो बृहस्पति को दृष्टिपात करते है। इसलिए मुनिवरों! जब मानव इस विद्या को जान लेता है तो पाप कर्म करने का अधिकार उसे मिलता ही नहीं। क्योंकि जहाँ उसका मन जाता है वहीं देखो, देवता विद्यमान होता है। परन्तु हे ब्रह्मचारियों! इस विद्या का भी कोई, दस देवता है, दस दिशाएं है इनका भी कोई सूत्र है। जैसे तुम्हारा जीवन इनमें

पिरोया हुआ है, ऐसे ही मानो देखो, यह भी किसी में पिरोई हुई है। जैसे इन देवताओं का, एक शरीर है, ऐसे ही यह भी किसी के परिणाम है।

मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मा ने कहा गृहे कृताः गृहे कृतां श्वंजनं ब्रीहि असुतो मानो देखो, यह जो तुम्हे दृष्टिपात आ रहे है देवता, इन दिशाओं का कोई सूत्र है और जो सूत्र है वही ब्रह्म है। मेरे प्यारे! प्राणो वै यह चक्र चल रहा है। प्राण ही सूत्र है। एक एक परमाणु में, प्राण परणित हो रहा है। मेरे प्यारे! यहाँ प्राण एक सूत्र रूप में स्वीकार किया। मुनिवरों! देखो, द्वितीय उन्होंने एक अध्याय के पश्चात दूसरा विषय उन्होंने प्रारम्भ किया हे ब्रह्मचारियों! जैसे कर्मकाण्ड की, नाना प्रकार के यागों की चर्चा आती है। मानो देखो, इनका भी कोई सूत्र है। जैसे यह याग किसी का शरीर है, ऐसे ही मानो देखो, यागां ब्रह्मणे दिव्यां देवाः जैसे याग हमारा शरीर है, और जिसका याग शरीर बन रहा है जो भी किसी का, शरीर है वह भी किसी का आयतन माना गया है। परन्तु जैसे यह ब्रह्माण्ड, इस संसार का है, इसी प्रकार ब्रह्माण्ड मानो देखो, ब्रह्माण्ड भी किसी का आयतन वाला, वह ब्रह्म कहलाता है। वे परमपिता परमात्मा कहलाता है। उसका वही सूत्र बन करके मुनिवरों! संसार को अपने में पिरो रहा है।

तो विचार विनिमय क्या, मेरे प्यारे! यही उन्होंने वाक प्रगट किया, द्वितीय उन्होंने कर्मकाण्ड की आभा को परणित किया। अस्तुं देवाः मंगलं व्रते जब तृतीय विषय उन्होंने प्रारम्भ किया तो उन्होंने कहा हे ब्रह्मचारी! यह जो तुम्हें विज्ञानमय संसार दृष्टिपात आ रहा है, नाना निहारिकाओं वाला ब्रह्माण्ड है मानो एक एक निहारिकाओं के लोकों की तुम गणना करने लगोगे, तो मानो तुम्हारा जीवन ही व्यतीत हो जाएगा और अन्त में तुम मौन हो जाओगे। क्योंकि तुम्हें जहाँ मैं यह उपदेश देता हूँ, विद्यालयों में, तुमने यह सब दृष्टिपात

किया, इन कक्षों में जहाँ उपदेश शाला है, वहाँ विज्ञानशाला भी है। जहाँ विज्ञानशाला है, वहाँ नाना प्रकार के यन्त्र विद्यमान है। और वह यन्त्र उन्हें मानो देखो, लोकों की आभायें हमें दृष्टिपात आती है जब मानो देखो, सूर्य कहाँ कहाँ, क्या क्या करता है उसकी छाया, इन वैज्ञानिक यन्त्रों में आती है। मानो देखो, लोक लोकान्तर निहारिका है, जितनी निहारिकाओं के चित्र, यन्त्र में आते है।

विशाल यन्त्रशाला

तुम्हें प्रतीत है यह यन्त्र कहाँ से लाए गये? महाराजा सोमकेतु दद्दड मुनि महाराज ने, अपनी विज्ञानशाला में, वैज्ञानिको को अपनी आभा प्रकट करके उन्होंने देखो, यन्त्रों को जाना और एक एक यन्त्र में मानो दस दस निहारिकाओं का दिग्दर्शन होता है और एक निहारिका जिसे हम एक आकाश गंगा कहते है, उस एक आकाश गंगा के मानो देखो, पृथ्वियों का जब गणित करने लगे, तो पृथ्वियाँ अनगणित हो गई। एक एक निहारिका में इतनी पृथ्वियाँ है, एक एक निहारिका में मानो देखो, अम्ब्रे कृतम् गणना नहीं कर सकते। सूर्यों की, बृहस्पति की, इसी प्रकार ध्रुव मण्डल है।

इसी प्रकार एक समय महाराजा सोमकेतु ने गणना की, तो मानो देखो, उन्होंने जब गणना करते करते एक ध्रुव की गणना करने लगे, ध्रुव मण्डल की, तो एक निहारिका में मानो चार खरब के लगभग उन्होंने बेटा! देखो, ध्रुवों की गणना की और अन्त में वे मौन हो गये। तो इसमें मानो चार खरब विशेष निहारिका में ध्रुव मण्डल जैसे मण्डल है जिनमें बेटा! लगभग सहस्त्रों सूर्य समाहित हो जाते है, ऐसा मण्डल है। तो बेटा! देखो, ऐसी निहारिका, सोमकेतु मुनि की यन्त्र शालाओं में बेटा! दस निहारिकाओं के चित्र उन्हें दृष्टिपात आते

थे। तो मेरे पुत्रों! हम, इन निहारिकाओं के सम्बन्ध में या इन लोकों के सम्बन्ध में बेटा! बहुत विचार करने से प्रतीत होता है कि अनन्त वाला, यह ब्रह्माण्ड है।

ब्रह्मचारी

तो मेरे प्यारे! विचार करने से प्रतीत हुआ, तो मुनिवरों! ब्रह्मा जी ने कहा कि हे ब्रह्मचारियों! यह दीक्षान्त भाषण इसलिए दे रहा हूँ, तुम्हें, क्योंकि तुमने इस विद्या को अध्ययन किया है, इस विद्यालय में, इस विद्या को तुम सुरक्षित और विद्या का सदुपयोग करो और ब्रह्मचर्यवत में रह करके, मानो अपने जीवन को व्यतीत करो। ब्रह्मचर्य की बहुत सी मीमांसा ऋषि मुनियों ने की है। परन्तु ब्रह्मचर्य की एक ही मीमांसा है, क्या अपने श्वांस को सूत्र में पिरोने का नाम ब्रह्मचारी है। किस सूत्र में, अपने श्वांस में पिरोने का नाम बेटा! एक मानो देखो, ब्रह्मचर्यवत कहलाता है। ऐसा क्यों कहा ऋषियों ने? बेटा! इसलिए सम्भवतां ब्रव्हे कृतसं देवाः यन्त्रों में यह दृष्टिपात हुआ है। अब यह मुनिवरों! देखो, योग से भी सिद्ध होता है और यह मुनिवरों! वैज्ञानिक यन्त्रों से भी सिद्ध हुआ ऋषि मुनियों को, कि मानव का यह जो श्वांस गति करता है, इस श्वांस के साथ में बेटा! अन्तरिक्ष में एक चित्र बनता है। एक एक श्वांस के साथ में मानव का जो श्वांस है, उस मानव का, उतने आकार का एक चित्र बन करके अन्तरिक्ष में चला जाता है। तो वेद के आचार्यों ने कहा कि ब्रह्मचर्य केवल उन चित्रों को जाने से हम नही बना सकेंगें परन्तु वह जो चित्र है वह उस सूत्र में पिरोया हुआ होना चाहिए। और तुम उस सूत्र को निर्धारित कर लो कि हमारा सूत्र कौन सा है, जिसमें हम प्रत्येक श्वांस को पिरोना चाहते हैं जिसमें हम योगी बनना चाहते हैं ब्रह्मचर्यवत बनना चाहते हैं मेरे प्यारे! देखो, एक वाक उन्होंने प्रगट कराया तो वह ब्रह्मा जी कहते हैं कि ऐसा

एक ही सूत्र है जिस ओ३म् के सूत्र में यह प्रत्येक श्वांस को पिरोते हुए प्राणायाम की गति करते हुए तुम वायुमण्डल में चित्रों को ओत प्रोत करा देता है। मेरे पुत्रों! ब्रह्मा ने कहा कि हे ब्रह्मचारियों! यह मेरा दीक्षान्त उपदेश है मानो राष्ट्र और समाज और मानवता को ऊंचा बनाते हुए मानव दर्शन को महानता में ले जाते हुए मुनिवरों! देखो, उन्होंने हरि ओ३म् हरितमां ब्रह्मे मो दक्षता देवाः उन्होंने बेटा! यहां अपना विराम लिया और यह कहा ब्रह्मचारियों अब तुम्हारा यहां से प्रस्थान होगा। मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मचारी और महात्मा पुलस्त्य और मणिचन्द सब विद्यमान थे, मेरे प्यारे! इसमें ब्रह्मचारियों को वहां से दीक्षा प्राप्त हुई, उनका वहां से प्रस्थान हुआ यह है बेटा! आज का वाक अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हे शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। आज का वाक यह क्या कह रहा है क्या हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए मेरे प्यारे! प्रभु की उपासना करते हुए इस संसार सागर से और ज्ञान और विज्ञान के ऊपर अपने जीवन को व्यतीत करते हुए इस संसार को ऊंचा बनाएं यह है बेटा! आज का वाक अब वेद का पठन पाठन। दिनांक २२ ०१ १९८२ अमृतसर।

23 २३ ०१ १९८२.१ राष्ट्र का निर्माण मानव को कर्तव्य में लाने से।

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व भान्ति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता होता है। जिस पवित्र वेदवाणी में उस देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है, जो देव इस संसार की आभा में रमण कर रहा है, मानो जिसका यह संसार, आयतन माना गया है,

प्रत्येक वेदमन्त्र, उस देव के विज्ञान और ज्ञान की चर्चा कर रहा है। करता ही रहता है। क्योंकि एक एक वेदमन्त्र के ऊपर हम महिमा का वर्णन करते रहते है, आज के हमारे वेद के पठन पाठन में, उस महान ब्रह्म की चर्चाएं हो रही थी, जिस ब्रह्म ने एक एक परमाणु के लिए, बेटा! भरण करने के लिए, मानो उनको स्थान दिया। माता के शरीर में, जब परमाणुओं का सम्मिलन होता है, तो मानो उनको उचित्त स्थान मेरे देव ने दिया। परन्तु वह गति कर रहा है माता उन परमाणुओं को दृष्टिपात करने से, और जो क्रिया हो रही है उससे माता प्रायः वंचित्त रहती है, उसे वह दृष्टिपात नहीं आता। क्योंकि रचनाकार कोई और है, स्थान तो द्वितीय है, परन्तु माता तो स्थान है, और रचयिता मेरा प्यारा प्रभु है। स्थान का भी प्रतीत नहीं होता। परन्तु वह स्थान भी माता को प्रतीत नहीं होता कौन स्थली है। किस रंग रूप वाली स्थली है परन्तु उस स्थली वाले निर्माणवेत्ता बेटा! वह जो विश्वकर्मा बन करके उस एक एक स्थली को गति प्रदान कर रहा है, जड़वत में भी और चैतन्यवत में भी मानो उसकी आभा दृष्टिपात आती है। जब मानव चिन्तनवेत्ता बन जाता है चिन्तन करने लगता है, प्रत्येक वेदमन्त्र में बेटा! उस मानव के जीवन में मानो पुष्प जैसे पुष्प मानो वायु में, अपनी युवा में सुन्दर प्रतीत होता है, इसी प्रकार उस चिन्तन से, हृदय में, ऐसे पुष्प मानो सौन्दर्यता, उसकी वाणी में सजातीय हो जाती है। तो मेरे पुत्रों! देखो, प्रभु का जो ज्ञान और विज्ञानमयी यह जो जगत, एक एक स्थली ऐसी है, जिसके ऊपर चिन्तन करने से, मानव को विवेक उत्पन्न होता है, और विवेक में ही परणित हो करके, प्रभु के राष्ट्र में, वह गमन कर रहा है प्रभु के राष्ट्र में जब वह गमन करता है, तो मेरे प्यारे! उसके जीवन में रात्रि भी नहीं होती, क्योंकि प्रभु के राष्ट्र में, सदैव प्रकाश रहता है। और प्रभु के राष्ट्र में जाने वाले

प्राणी के जीवन में, प्रमाद नहीं होता, आलस्य नहीं होता, परन्तु रात्रि नहीं होती, तो बेटा! वह सदैव प्रकाश में रमण करता रहता है। तो मुनिवरों! आज मैं बेटा! इस साधना के क्षेत्रों में, तुम्हें ले जाने नहीं आया हूँ। केवल परिचय देना है, वेद का मन्त्र, हमें क्या क्या कहता है, उससे हमें नाना प्रकार की प्रेरणाएं प्राप्त होती रहती है, जिस प्रेरणा के सूत्र में कटिबद्ध हो करके, मानव अपना क्रियाकलाप करता रहता है।

तो आओ, मेरे पुत्रों! आज इससे पूर्व कालों की चर्चाएं, आज का वेदमन्त्र तो बहुत कुछ कह रहा है गो रस का वर्णन कर रहा है, गो रसो को पान करना चाहिए, प्राणी को, वेद का मन्त्र जहाँ माता की महिमा का वर्णन कर रहा है, माता को वसुन्धरा के रूप में परणित कर रहा है, मानो हे मां! तू वसुन्धरा है। तेरे में ही हम वशीभूत रहते है, इसीलिए बेटा! जैसे यह जननी माता है, उसके गर्भ से पृथक हुए, तो वह जो प्रभु आनन्दमयी माता है, उसके गर्भ में प्रवेश हो गएं और वह जो संसार है यह उस चैतन्य वह माता का गर्भाशय कहलाता है, जिसके गर्भ में हम सब वशीभूत रहते है, और उससे नाना प्रकार की सहायता लेते रहते है और जीवन का उपार्जन करते रहते है, उस मेरी प्यारी माता ने, सृष्टि के प्रारम्भ में ही, इस मानव जीवन के लिए, नाना प्रकार के खाद्य और खनिज पदार्थों का निर्णय किया और उसी खाद्य खनिज पदार्थों के द्वारा ही यह मानव अपने को सौभाग्यशाली स्वीकार करता रहा। मेरे पुत्रों! देखो, सूर्य, वायु, अग्नश्चं मेरे प्यारे! आपो ज्योति प्रभु ने कैसी अमूल्य वस्तु प्रदान की है, जिससे मानव का जीवन संचालित हो रहा है, हे मानव! तू उसके गर्भ में रहता हुआ, उस माता की अवहेलना न कर, यदि माता ने तेरी अवहेलना कर दी, तू अपंग बन जाएगा। मानो देखो, बुद्धि तुझे ऐसी महान दी है, कि इसके ऊपर तू मन्थन करता रह, चञ्चलता को त्याग

करके मानवीयता में गम्भीर क्षेत्र में, तू अपने को ले चल, जहाँ तुझे आनन्द और सुखद की प्राप्ति उसी काल में होगी जब माता की लोरियां तुझे प्राप्त हो जाएगी। जैसे माता का पुत्र क्षुधा से पीड़ित हुआ, व्याकुल हो रहा है, रूधन कर रहा है, परन्तु माता अपनी लोरियों का पान करा देती है तो बालक श्यन करने लगता है, इसी प्रकार हे मानव! तू संसार में रूधन करता रहता है, व्याकुल होता रहता है, परन्तु जब तक तुझे ये चैतन्य माता का माता की लोरियां प्राप्त नहीं होती, तब तक रूधन ही करता रहता है। बेटा! मैं आज यह कुछ वेद के मन्त्रों का कुछ आशय है कि आज हम अपनी माता के द्वार पर चले, जिस माता ने हमें, सर्वत्रतव प्रदान कर दिया है माता बालक की अवहेलना नहीं करती, बाल्य वास्तव में इस आभा में रमण करके उसकी अवहेलना कर देता है। यदि माता उसकी अवहेलना कर देती है। तो मेरे प्यारे! वह, वह नहीं रह पाता, परन्तु उसका रूप स्वरूप प्रतिद्वन्द बन जाता है। तो विचार विनिमय क्या आज हम अपने प्यारे प्रभु के द्वारा पर जाने का प्रयास करें। मेरे प्यारे! इससे पूर्व शब्दों में, हम बेटा! तुम्हें त्रेता काल की विद्यालयों की चर्चाएं करते रहे है, कि उस काल में किस प्रकार का विद्यालय और आचार्य और शिष्य दोनों की प्रतिभा, किस प्रकार रही है। मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार, साहित्य को जब हम पृष्ठों को ले करके चलते है, तो मानो उनके राजाओं को और गुरुओं का जो जीवन है, वह कितना परिमार्जित कहलाता है क्योंकि आगे चल करके मानव के जीवन की, शारीरिक व्यवस्थाएं बनती है, जबकि वह अपने जीवन में क्रियाकलाप में वह परणित होता है। समाज के संसर्ग में आता है।

तो इसी प्रकार मेरे प्यारे! महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज अपने पुत्रों! को ले करके और उनका गृह में प्रवेश हुआ, हमने तुम्हें पुरातन काल में कहा है जब

विद्यालय से, ब्रह्मचारी गृह में पवेश करता है तो माता पिता उसे ब्रह्म भोज की आभा में ले जाते है। मानो उनका विशेष अन्न विशेष उनका स्वागत करता है क्योंकि उसका विद्यालय से, गृह में आने का उसके जीवन का परिवर्तन सा हुआ है। तो मुनिवरों! देखो, महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज और उनके पुत्र मनीचन्द्र और मनीचन्द्र की धर्मदेवी सुखमांजलि बेटा! देखो, वह उनका स्वागत करते रहे। और माता ने उन्हें कण्ठ से आरूढ़ किया और उन्होंने बेटा! उन्हें आशीर्वाद भी दिया। मेरे पुत्रों! देखो, पंक्ति में माता ने भोज कराया, भोजन कराते हुए, माता जब पुत्र को भोजन कराती है, तो गायत्री छन्दों के स्वरों की ध्वनियां देती रहती है। क्योंकि उससे वह बालक मानो देखो, उस तरंगों में ओत प्रोत हो जाता है। जो माता उसे मन्त्र में त्याग देती है, और तपस्या की आभा देती है, उससे अन्नाद में जो तरंगे पहुंचती है, उन तरंगों से ही मुनिवरों! देखो, मानव के जीवन का निर्माण होता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, माता ने बड़े स्नेहयुक्त उन ब्रह्मचारियों को जिनका ओज और तेज महान था। तो माता अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके, यह उच्चारण करने लगी क्या हे ब्रह्मचारियों! तुमने क्या क्या अध्ययन किया है? क्योंकि माता तो विदुषी और विद्वान होती है, जिन माताओं में अज्ञान होता है, वह माता अपने पुत्र से क्या प्रश्न कर सकती है। परन्तु जो विदुषी होती है, मानो जिनका अध्ययन माताओं का विचित्र होता है, वह अपने ब्रह्मचारियों से भिन्न भिन्न प्रकार के प्रश्न करती है। तो तीनों ने अपने स्वरों में कहा हे माता! हमने उस विद्या का अध्ययन किया है, जिस विद्या का तुमने हमें उपदेश दिया। मानो देखो, एक ब्रह्मण ब्रह्मे स्वस्तम विद्यानाति काण्डम् ब्रहे सुते माता हमने विज्ञान काण्ड को भी जाना है, पूर्ण रूप से तो नहीं जाना, क्योंकि प्रभु तो अनन्त है, उसका ज्ञान विज्ञान भी

अनन्त है, परन्तु जितना हमारे शरीरों को, हमारे मनों को आवश्यकता उतनी विद्या का हमने अध्ययन किया है। परन्तु देखो, कर्म काण्ड को भी उतना ही जाना है। क्योंकि तीनों ब्रह्मचारी ज्ञान काण्ड और कर्मकाण्ड और मुनिवरों! देखो, वह विज्ञान काण्ड में रत्त होते है। माता ने कहा कि यह तो ब्रह्मचारियों! रूचियां होती है कि कोई कर्मकाण्ड में रूचि और कोई विज्ञान में, और कोई ज्ञानाति तत्त्वम ब्रह्मचारियों ने कहा कि माता यथार्थ है, कि हमारी जो प्रत्येक ब्रह्मचारी की जो एक धाराएं है, मानो एक की धारा विज्ञानमयी है एक की धाराएं ज्ञान विवेकयुक्त है। और एक की धारा विज्ञान में कर्म काण्डानुतपतमं ये तीनों की भिन्न भिन्न प्रकार की धाराएं हैं माता प्रसन्न हो गई। माता ने प्रसन्न हो करके कहा धन्य है पुत्रों! मेरे प्यारे! देखो, पुत्र तो अपने कक्ष में अध्ययन करते रहे, परन्तु रात्रि का जब समय हुआ, तो मुनिवरों! देखो, पति पत्नी स्थलियों पर विद्यमान हो गएं महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज को उपस्थित करते हुए उन्होंने कहा कि महाराज! ब्रह्मचारियो का अब गृह में प्रवेश होना चाहिए।

24 २३ ०१ १९८२.२

... तो उन्होंने महात्मा पुलस्त्य ने कहा बहुत प्रिय। तो मुनिवरों! देखो, वह मृत्यु हो गई थी क्योंकि महात्मा पुलस्त्य ने महाराज महीदन्त की कन्या और मुनिवरों! एक राजा श्रेष्ठकेतु थे मानो उनके पुरोहित थे उनकी कन्या और मुनिवरों! एक सोमकेतु नामक राष्ट्र में त्रिआसवानकेतु महाराज उनकी कन्याएं महात्मा पुलत्स्य मुनि महाराज मानो उनके ऊपर विचार विनिमय करते रहे तो मुनिवरों! देखो तीनों के संस्कार कि आभाएं प्राप्त हो गई इन तीनों का संस्कार हुआ मुनिवरों! देखो, महात्मा पुलत्स्य इत्यादि पुत्र ने तीनों ब्रह्मचारियों के तथ्यों का निर्माण कर दिया मेरे प्यारे! वह संस्कार हुए महाराजा महीदन्त ने दशानन का

संस्कार किया उनकी कन्या थी मेरे पुत्रों! विदुषी और सौम्यता में परिणित राजा के पुरोहित की भी कन्या महर्षि सोमपात ऋषि थे उनके आश्रम में वह अध्ययन करती थी तो तीनों मुनिवरों! इसी प्रकार अध्ययनशील और उनके द्वारा उनका संस्कार हो गया संस्कार होने के पश्चात मेरे प्यारे! देखो, अपने कार्य में रत्त हो गए। (कैसट की गुणवता अच्छी ना होने कारण लिखना कठिन है)

25 १६ ०३ १९८२

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव जो यज्ञोमयी माना गया है मानो जिसका यज्ञ ही आयतन माना गया है। उस ब्रह्म के सम्बन्ध में हमारा प्रत्येक वेदमन्त्र परम्परागतों से ही, बेटा! उसकी गाथा गा रहा है किसी भी वेदमन्त्र के ऊपर जब अध्ययन करना प्रारम्भ करते है। तो प्रत्येक वेद मन्त्रों में मानो उस ब्रह्म की गाथा गाई जाती है क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा का आयतन माना गया है क्योंकि जितना भी यह जगत है यह सर्वत्र उस यज्ञशाला के रूप में दृष्टिपात आता रहता है, वहाँ प्रत्येक मानव याज्ञिक बना हुआ है और याग करता रहता है। क्योंकि वेद का मन्त्र कहता है कि आत्मा का जो लोक है वह पञ्च महाभूत माने गएं है परन्तु जो पञ्च महाभूतों में गृह का आयतन बनाए बैठा हुआ जो आत्मा है, परन्तु उसका जो कर्म है वह याग माना गया है वह एक यज्ञोमयी आभा उसमें रमण कर रहा है क्योंकि उस याग के द्वारा मानव द्यौ लोक को प्राप्त होता है। उसी याग के द्वारा बेटा! योगेश्वर बन

जाता है क्योंकि हमारे यहाँ दो प्रकार के यागों का चयन परम्परागतों से होता रहा है, एक आध्यात्मिकवाद है और एक भौतिकवाद है। संसार को सुगन्धित करना बेटा! यह भौतिकवाद कहलाता है। यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान है, और याग कर रहा है आहुति दे रहा है, परन्तु वह याग करता हुआ, इसी याग को जब ऊर्ध्वा में ले जाता है तो इसमें जो स्वाहा कह रहा है, वह भी एक अग्नि की धारा है, काष्ठ में रहने वाली अग्नि भी एक अग्नि है मेरे प्यारे! साकल्य के गर्भ में जो विद्यमान हो रही है, वह भी अग्नि है। उस अग्नि को यज्ञमान उद्बुद्ध स्वाहा कह करके, उसको प्रदीप्त कर रहा है। और वर्चोसि कह करके आत्मा का उसे नियम स्वीकार कर रहा है, वह कहता है कि यह जो संसार का जितना साकल्य है, यह सब आत्मा का ईंधन है। मानो प्राणों वर्चो से गुथा हुआ है। बेटा! मैं इस क्षेत्र में विशेष जिनके ऊपर बहुत अनुसन्धान और विचार के यह विषय कहलाते है, परन्तु वह आध्यात्मिक या भौतिकवाद में रमण करता हुआ, अणु और परमाणुवाद से चला जाता है क्योंकि जो स्वाहा कह रहे है उसका रथ बन रहा है, और रथ बन करके जो द्यौ लोक को रहा है, क्योंकि जितना भी शुद्ध और पवित्र शब्द होता है, उस शब्द में यह विशेषता मानी गई है क्या वह अशुद्ध परमाणुओं को नष्ट करता हुआ द्यौ लोक को चला जाता है। मेरे प्यारे! द्यौ लोक से मानो वह चित्र भी अपने साथ ले जाता है और वह चित्र सहित, जो शब्द है वह द्यौ लोक की आभा में गति कर रहा है। मेरे प्यारे! देखो, जितनी भी संसार में, पितर महापितर याज्ञिक हुए है, वह सर्वत्र द्यौ लोक में गति करते रहते है। तो बेटा! यह विशेष भौतिकवादी कहलाता है मेधावीवाद, अणुवाद, परमाणुवाद में जितना भी है यह सब मानो देखो, भौतिकवाद कहलाता है। और एक याज्ञिक बन करके वह आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करना

चाहता है, यह जो पञ्च महाभूत है, यह जो आत्मा का लोक माना गया है, इसका आत्मा ही आयतन माना गया है, क्योंकि आत्मा इसमें वास करता है।

तो मेरे पुत्रों! यह जो आत्मा है यह पञ्च महाभूतों को गृह बना करके वास कर रहा है परन्तु यह याज्ञिक हो करके आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करना चाहता है क्योंकि भौतिकवाद जब तक नहीं जानोंगे, जब तक आध्यात्मिवाद में प्रवेश नहीं किया जा सकता। जब तक हम तरंगवाद को इन्द्रियों के विषयों को, बुद्धि, मेधा, ऋतम्भरा, प्रज्ञावी, मानो इस सर्वत्रता को नहीं जानोंगे जब तक चित्त के मण्डल को नहीं जाना जाएगा जब तक मेरे प्यारे! देखो, आध्यात्मिकवाद में, उस काल में पहुंचोंगे जब भौतिकवाद की उपरामता को प्राप्त हो जाओगे। क्योंकि आध्यात्मिकवाद जहाँ भौतिकवाद का समापन होता है, जहाँ अणु और परमाणु और तरंगवाद का समापन होता है, वहाँ से मुनिवरों! देखो, आध्यात्मिकवाद का प्रारम्भ होता है। आध्यात्मिकवाद वह है क्योंकि बिना इन्द्रियों के विषयों के जाने, इन्द्रियों के रहस्यों को जाने बिना, मुनिवरों! देखो, आत्मा का जीवन योगी को प्राप्त नहीं होता। तो मेरे प्यारे! मैं इस सम्बन्ध में, तुम्हें विशेष चर्चा नहीं दूंगा, केवल विचार यह कि संसार का मानवीयतव का जो कल्याण होता है, या राष्ट्र को अपने राष्ट्र का उत्थान करना हो, तो मुनिवरों! देखो, दोनों प्रकार के विज्ञान का जब तक समन्वय नहीं होता तब तक मुनिवरों! राष्ट्र और समाज का कल्याण नहीं हुआ करता क्योंकि देखो, राष्ट्र में परम्परागतों से ही, दृष्टिपात करता रहा हूँ एक मानव अपनी उड़ान उड़ रहा है, पृथ्वी से उड़ान उड़ता है मेरे प्यारे!। अश्रोव्य।

पूज्य महानन्द जीः यह मानव नाना धर्म कहाँ से उच्चारण करता है वह केवल क्या है? उसके मूल में वह अज्ञानता में कह रहा है, धर्म एक ही है। मानो

नेत्रों से दृष्टिपात करता है, उसमें धर्म का सम्बन्ध नहीं है, वह धर्म ही है उसका सर्वत धर्म है। उसी प्रकार वह किसी भी विभाग के रहने वाला प्राणी ही, चाहे मोहम्मद के मानने वाला हो, चाहे ईसा के मानने वाला हो, चाहे वह बुद्ध को मानने वाला हो, किसी भी वाक को स्वीकार करने वाला हो, परन्तु वाणी अपना ही धर्म उच्चारण करेगी, कोई भी किसी भी आभा में रमण करना हो वह किसी भी रूढ़ि में गति करने वाला हो हे मानव! समाज तेरे द्वारा रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए, यदि हे राजा! तेरे राष्ट्र में रूढ़ि बनी रहेगी, तो वह रूढ़ियों का परिणाम, तेरे यहाँ रक्त भरी क्रान्ति का संदेह बना रहेगा। इसीलिए यह जो नाना प्रकार की रूढ़ियाँ है, उन रूढ़ियों के ऊपर मानो देखो, राजा का आधिपथ्य होना चाहिए। राजा उसे कहते है, जिस राजा के राष्ट्र में धर्म धर्माणि ब्रह्मे देखो, प्रत्येक मानव धर्म को जानने वाला हो, धर्म के मर्म को जानता हो, परन्तु धर्म एक होता है, धर्म नाना धर्म नहीं होते, जो नाना धर्म कहता है, वह धर्म को नहीं जानता। परन्तु वह रूढ़ियों को धर्म कह रहा है, वह कितना बड़ा अज्ञान है, परन्तु देखो, अज्ञान क्या?

राजा के राष्ट्र में ज्ञान होना चाहिए ज्ञानी पुरुष होने चाहिए। आध्यात्मिकवेत्ता होने चाहिए। विवेकी पुरुष होने चाहिए, परन्तु देखो, उसको वेदों का ज्ञान और विज्ञान जानने वाले होने चाहिए। मेरी प्यारी माताएं, परन्तु जब मैं राष्ट्र की चर्चाएं करता हूँ, तो मैं माताओं के द्वार पर जाता हूँ, हे माता! तेरा जो श्रृङ्गार है, वह मानो कण्ठ में रहना चाहिए, तेरा श्रृङ्गार आभूषणों में नहीं है, वास्तव में तेरा श्रृङ्गार कहा है, बुद्धोसि, शुद्धोसि, निरजंनोसि परन्तु देखो, हे मानम ब्रहे देखो, उनके ऊँची सन्तान को, जन्म देना जैसे है तो उस काल में देखो, मेरी पुत्रियों का श्रृङ्गार हनन नहीं होता, हनन उस काल में होता है जब अनाधिकार माता

अपने पुत्रों! को संस्कारित नहीं बनाती। परन्तु देखो, माता महानता में नहीं देती, अपने बालक को, विचार विनिमय क्या? आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह मानो उच्चारण करने आया हूँ। हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! आज का विज्ञान इकाई में रमण कर रहा है।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कल के वाक्यों में एक शब्द कहा था, एक रक्त के बिन्दु से मानव का चित्र आ जाता है, परन्तु आज का विज्ञान इसको नहीं जाना, परन्तु देखो, आज के विज्ञान की आभा ईकाई में रमण कर रही है। परन्तु वैज्ञानिक होने चाहिए, मैं इसका विराधी नहीं हूँ, विज्ञान होना चाहिए। परन्तु विज्ञान आध्यात्मिकवाद में भी चरित्र में रहना चाहिए चरित्रता में जब विज्ञान रहता है, तो समाज ऊँचा बनता है, महान बनता है, पवित्र बनता है, और महानता में रमण करने वाला होता है, हे यज्ञमान! मैं आज अपने विषय से दूरी न चला जाऊं, आज का मानव यह कह रहा है, क्या सम्भवति देवा अप्रतम देवाः हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, क्योंकि द्रव्य का सदुपयोग करना, यह तेरा कर्तव्य है। क्योंकि द्रव्य का सदुपयोग करना ही द्रव्य का मानो द्रव्य की महानता को प्राप्त करना है, वह देवताओं को समर्पित करना वह देवता तेरे गृह में आ करके, तेरी महानता को ऊँचा बनाते रहते हैं। इसी प्रकार यह चर्चाएं देने नहीं आया हूँ, पूज्यपाद गुरुदेव से ये आभा यह निर्णय देने आया हूँ कि यह जो संसार है, यह वैज्ञानिकों ने मानो भूमि में मानो इस मानव को परणित कर दिया, और यह जो नाना प्रकार की रूढ़ि है, यह राष्ट्र को अज्ञानी बना रही है, और समाज को देखो, ऐसी जगह में प्रवेश कर रही है, मानो जहाँ प्रकाश का एक अङ्कुर भी प्राप्त नहीं हो सकेगा। इसी प्रकार, आज में विचार देने आया हूँ, हे राजन्! तेरे राष्ट्रीय समाज में, रूढ़ि ना रहे, रूढ़ियाँ नष्ट होनी चाहिए, और मानवता का प्रसार होना चाहिए।

मानवीय दर्शन मानो विशेषता में और याग जैसे कर्मों के ऊपर चिन्तन, मनन और वैज्ञानिक तथ्य होने चाहिए, जिसके ऊपर मानव को अपना अनुसन्धान और विचार करके, इस संसार में अपना कर्म करना चाहिए, क्रियाकलापों में रमण करना चाहिए। आज का यह विचार अब मैं समाप्त करने जा रहा हूँ, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, मुझे समय समय पर आज्ञा देते रहते हैं, अपने उद्गार दे करके चला जाता हूँ, परन्तु देखो, मैंने अभी अभी कहा है, क्या यज्ञमान का एक एक जो शब्द है, वह वायुमण्डल में जाता है और वायु मण्डल में जो अशुद्ध वातावरण है उसको नष्ट करता हुआ माना द्यौ लाक को चला जाता है। इसी प्रकार आज का विज्ञान भी, उन वाक्यों पर लगा हुआ है, क्या ऐसा कौन सा कर्म करना चाहिए, जिससे वायुमण्डल अशुद्ध होता जा रहा है, आधुनिक जगत का वैज्ञानिक कहता है, क्या ऐसा कुछ समय के पश्चात मानो पचास वर्षो के पश्चात्, यदि यह विज्ञान इस प्रकार गति करता रहा वायु मण्डल इतना दूषित हो जाएगा, क्या मानो श्वांस लेने मात्र से ही मानव समाप्त हो सकता है। ऐसा वायुमण्डल बन रहा है, परन्तु मैं यह कहा करता हूँ, हे वैज्ञानिकों! कि तुम भी गऊओं का पालन करो, गो घृत के द्वारा याग करो, जिससे वायुमण्डल में जैसे जो सूक्ष्म महान परमाणुओं की उर्ध्वागति हो जाती है वह अशुद्ध परमाणुओं को निगल जाता है। एक एक परमाणु याग का, अग्नि में प्रवेश करने से उसका जो परमाणु बन करके जाता है, वह सहस्रो परमाणुओं को एक ही परमाणु छेदन कर देता है अशुद्ध परमाणुओं को निगल करके शुद्धता को प्रदान कर देता है यह विज्ञान है परन्तु विज्ञान की धाराओं में इस प्रकार की गतियां होनी चाहिए ऐसा विज्ञान स्वीकार तो कर रहा है कुछ काल में यह विज्ञान गति करने लगेगा इस प्रकार का समय आ रहा है जब गो घृत के द्वारा यह याज्ञिक होने वाला

है। परन्तु देखो, मैं यह वाक उच्चारण करने आया हूँ, अपने पूज्यपाद गुरुदेव से हे देव! आज का यह जो हमारा जो शब्द है, हमारी आकाशवाणी है, यह ऐसी स्थली पर जा रही है, जहाँ याग का समापन, याग की आभा, और यज्ञमान को मैं अपनी शुभकामना प्रगट करने आया हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे! ऋषिवर! मेरे प्यारे! महानन्द जी! ने, अभी अभी अपनी वेदनामयी कुछ वाक प्रगट की इनके हृदय में सदैव राष्ट्र वेदी की वेदना बनी हुई है परन्तु समय आता रहेगा, रूढ़ियाँ भी समाप्त होती रहेगी, समय आता रहेगा ज्ञान और विज्ञान परम्परागतों से यह मानवीय मस्तिष्कों में रमण करता रहा है। मेरे प्यारे! महानन्द जी! के हृदय में, नाना योजना रहती है, परन्तु कोई वाक नहीं अब हमारी यह वाक समाप्त होने जा रहा है। आज का वाक क्या हम आध्यात्मिकवाद और भौतिकवाद दोनों का समन्वय करते चले जाएं, दोनों प्रकार के विज्ञान को जान करके इस संसार सागर से पार हो जाए, जैसा मेरे पुत्र ने यज्ञमान के सम्बन्ध में कहा मैं भी अपनी शुभकामना उनके जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे द्रव्य का सदुपयोग होता रहे, सुगन्धि में जीवन बनता रहे यह आज का वाक अब समाप्त होने जा रहा है। ओ३म्

...शेष अनुपलब्ध।